ANSWER KEY

विज्ञान जगत

CLASS
6 To 8

Written By :
Kamla Soni
M.A., B.ED

PURPLE STROKE

© All Rights Reserved Information contained in this book has been published by MAPLE EDUCATION (A UNIT OF PARI PUBLICATION) has been obtained by its authors from sources believed to be reliable and are correct to the best of the knowledge. However, the publisher and its authors shall in no event be liable for any errors, omissions or damages arising out of use of this information and specifically disclaim any implied warranties or merchantability or fitness for any particular use.
Warm Welcome for your suggestions and guidelines to improve the book for bright educational INDIA.

विज्ञान जगत

Class - 6

अध्याय– 1 भोजन के स्त्रोत

(क) 1. भोजन हमारे शरीर को स्वस्थ एवं शक्तिशाली बनाता है और ऊर्जा प्रदान करता है। भोजन शारीरिक वृद्धि में भी सहायक होता है। 2. भोजन के प्रमुख स्त्रोत हैं - पौधे और जंतु। 3. पौधों से प्राप्त विभिन्न प्रकार के अनाज संयुक्त रूप से खाद्यान्न कहलाते हैं। जैसे- गेहूँ, चावल, मक्का, जौ आदि। 4. कच्ची खाई जाने वाली सब्जियाँ हैं- गाजर, मूली और बंदगोभी। 5. प्रमुख तिलहन फसलें हैं- मूँगफली, सरसों, कपास, सोयाबीन, सूर्यमुखी, नारियल आदि। 6. मसाले हमारे भोजन को स्वादिष्ट व सुगंधित बनाते हैं। 7. दूध देने वाले जंतु दुधारु जंतु कहलाते हैं। 8. मधुमक्खी पालन शहद प्राप्त करने के लिए किया जाता है। **हॉट प्रश्न –** 1. जो जंतु पौधों एवं जंतुओं दोनों को अपना भोजन बनाते हैं, उन्हें सर्वाहारी जंतु कहते है। 2. भारत के विविध भागों में विविध प्रकार की जलवायु, मृदाएँ, भौगोलिक विशेषताएँ पायी जाती है। इसके विविध भागों में रहने वाले लोग अपने क्षेत्र विशेष में उत्पादित विशेष भोज्य पदार्थो के आधार पर विविध प्रकार का भोजन खाते हैं।

(ख) 1. जो पदार्थ शरीर को ऊर्जा तथा स्वास्थ्य प्रदान करते हैं, भोजन कहलाता है। भोजन न केवल खाने में स्वादिष्ट होना चाहिए, बल्कि वह शरीर की वृद्धि एवं उसमें निहित क्षतिग्रस्त कोशिकाओं की मरम्मत में भी सहायक होना चाहिए। **भोजन हमारे शरीर में निम्नलिखित कार्यों को संपन्न करता है :-** ❑ खेलने तथा कार्य करने के लिए ऊर्जा प्रदान करता है। ❑ शारीरिक वृद्धि तथा क्षतिग्रस्त कोशिकाओं की मरम्मत का काम करता है। ❑ इसमें निहित विविध रसायन शारीरिक गतिविधियों को नियंत्रित रखने में सहायक होते हैं। ❑ भोजन हमारे शरीर को निरोगी तथा शक्तिशाली बनाता है। 2. हमें पौधों से विविध प्रकार की सब्जियाँ प्राप्त होती हैं। सब्जियाँ वास्तव में पौधों के विभिन्न भाग होते हैं जैसे जड़, तना, फूल, फल, पत्तियाँ आदि। सब्जियाँ हमारे भोजन का प्रमुख अंग हैं। सब्जियों में विविध विटामिन, खनिज तथा रूक्षांश प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। कुछ सब्जियाँ पकाकर खायी जाती हैं तथा कुछ कच्ची खायी जाती हैं। फलों का हमारे जीवन में विशेष स्थान होता है। फल विविध प्रकार के विटामिनों, खनिजों व रूक्षांशों के रूप में समृद्ध होते हैं। फल विविध स्वाद के होते हैं कुछ खट्टे तो कुछ मीठे। कुछ फल गुद्देदार होते हैं तो कुछ सामान्य से कम गुद्देदार होते हैं। **सब्जियाँ :-** गाजर, मूली, बंदगोभी, शलजम (कच्ची खायी जाने वाली)। करेला, बैंगन, कद्दू, लौकी, पालक आदि (पकाकर खायी जाने वाली)। **फल :-** सेब, आम, केला, अन्नानास, आडू आदि। 3. जल के अतिरिक्त ऐसा कोई भी तरल पदार्थ जो पीने के लिए प्रयोग होता है, पेय पदार्थ कहलाता है। सभी पेय पदार्थ पौधों से प्राप्त किये जाते हैं। चाय तथा कॉफी पौधों से प्राप्त होने वाले सामान्य पेय पदार्थ हैं। चाय की प्राप्ति चाय के पौधे की पत्तियों से तथा कॉफी की प्राप्ति कॉफी के पौधों की फलियों से होती है। 4. जंतु भी हमारे भोजन का प्रमुख स्त्रोत हैं। जंतुओं से हमें विविध प्रकार के भोज्य पदार्थ प्राप्त होते हैं। जैसे- दूध, मक्खन, अंडे आदि। कुछ जंतु जैसे गाय, भैंस, बकरी आदि हमें दूध प्रदान करते हैं। हमें दुधारू पशुओं से प्राप्त दूध से विविध प्रकार के खाद्य पदार्थ तैयार करते हैं। जैसे मक्खन, पनीर, लस्सी, मिठाइयाँ आदि। मुर्गी से हमें अंडे मिलते हैं। यह प्रोटीन से भरपूर होते हैं। मछली भी प्रोटीन का समृद्ध स्त्रोत है। इससे प्राप्त प्रोटीन सुपाच्य होता है। मधुमक्खियों से हमें शहद प्राप्त होता है। शहद में जल, शर्करा, खनिज एवं एंजाइम होता है। इसका सेवन स्वास्थ्य के लिए लाभदायक होता है। 5. जंतुओं को उनकी भोजन संबंधी आदतों के आधार पर निम्न वर्गों में विभाजित किया जाता है - शाकाहारी जंतु - ऐसे जंतु जो अपने भोजन के लिए पौधों पर निर्भर करते हैं, शाकाहारी जंतु कहलाते हैं। शाकाहारी जंतुओं के दाँत पौधों अथवा उनके विविध भागों को चबाने एवं आमाश्य उन्हें पचाने के लिए अनुकूलित होते हैं। शाकाहारी जंतु छोटे-से, मध्यम व बड़े आकार तक पाए जाते हैं। जैसे- बकरी, गाय, घोड़ा आदि। **मांसाहारी जंतु** – वह जंतु जो अपने भोजन के लिए अन्य जंतुओं के मांस पर निर्भर करते हैं, मांसाहारी जंतु कहलाते हैं। ऐसे जंतुओं के दाँत मांस को चीरने-फाड़ने अथवा चबाने के लिए अनुकूलित होते हैं। जैसे शेर, चीता आदि। **मृतोपजीवी**– मृतोपजीवी जंतु मृत जंतुओं को अपना भोजन बनाते हैं। जैसे- गिद्ध, कौआ आदि। **सर्वाहारी** – सर्वाहारी जंतु पौधों एवं जंतुओं दोनों को अपना भोजन बनाते हैं। जैसे- भालू, कुत्ता आदि। **परजीवी** – परजीवी जंतु अपने भोजन के लिए दूसरे जीवित जंतुओं पर निर्भर करते हैं। जैसे- मच्छर, खटमल आदि। **(ग) दालें** – दालें फलीदार पौधों से प्राप्त होती हैं। कुछ प्रमुख दालें हैं । जैसे- मूँग, अरहर, मसूर, चना, उड़द आदि। दालें प्रोटीन से भरपूर होती हैं। **खाद्य तेल** – अनेक पौधों के बीजों से हमें खाद्य तेल प्राप्त होता है। इन तेलों का प्रयोग भोजन को पकाने में होता है। तेल प्रदान करने वाले मुख्य पौधे हैं- मूँगफली, सरसों, कपास, सोयाबीन, नारियल आदि। **मसाले** – मसाले पाउडर अथवा बीज होते हैं। हम अपने भोजन को स्वादिष्ट एवं सुगंधित बनाने के लिए उसमें विविध प्रकार के मसाले मिलाते हैं। जैस- हल्दी, जीरा, लौंग, इलायची आदि। **कुक्कुट पालन** – इसके अंतर्गत मुर्गियाँ, मुर्गे, बतख आदि पाले जाते हैं। इन पक्षियों से हमें अंडे तथा मांस की प्राप्ति होती है। अंडे प्रोटीन से भरपूर होते हैं तथा हमारे अच्छे स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए उपयुक्त वसा भी प्रदान करते हैं। **मत्सस्य पालन** – हमारे देश में मत्सस्य पालन का उद्देश्य भोजन के रूप में मछलियाँ उपलब्ध कराना है। मछली भी प्रोटीन का समृद्ध स्त्रोत है। **मृतोपजीवी** – कुछ जंतु मृत जंतुओं को अपना भोजन बनाते हैं, ऐसे जंतु मृतोपजीवी कहलाते हैं। इनके उदाहरण हैं - गिद्ध, कौआ, लकड़बग्घा आदि। **(घ)** छात्र स्वयं करें। **(ङ)** 1. भोजन 2. दो 3. फलों 4. पेय पदार्थ 5. गाय, भैंस, बकरी 6. शाकाहारी **(च)** 1. ग 2. च 3. ड 4. घ 5. क 6. ख **(छ)** 1. फूल 2. जड़ 3. पत्ते 4. जड़ 5. फल **(ज)** 1. दूध, मक्खन 2. दूध, अण्डे 4. सरसों, कपास 4. गाय, बकरी **क्रियाकलाप** – कार्य स्वयं करें।

अध्याय– 2 भोजन में निहित प्रमुख घटक

(क) 1. भोजन से हमारे शरीर को उपयुक्त पोषण प्राप्त होता है तथा उसमें संपन्न होने वाली विविध जैव-प्रक्रियाएँ सुचारु रूप से संपन्न होती रहती हैं। 2. भोजन में निहित पोषक पदार्थ हैं- कार्बोहाइड्रेट, वसा, प्रोटीन, विटामिन, खनिज, जल और रूक्षांश। 3. भोजन को पोषक पदार्थों के आधार पर तीन भागों में बाँटा जाता है- ऊर्जादायी भोजन, शरीर-निर्माणकारी भोजन और संरक्षी भोजन। 4. किसी भोज्य पदार्थ को लेकर उसे साफ कागज पर रगड़िए। यदि भोज्य पदार्थ ठंडा हो तो उसे थोड़ा गर्म कर ले। यदि उस भोज्य पदार्थ में वसा की मात्रा निहित है तो कागज का वह हिस्सा पारदर्शी दिखाई देगा किन्तु यदि कागज की पारदर्शिता कुछ समय पश्चात् समाप्त हो जाए तो निश्चय ही उस पदार्थ में जल होने के कारण पारदर्शिता आ सकती है, क्योंकि वसा के कारण बनने वाली पारदर्शिता के निशान स्थायी होते हैं। 5. वानस्पतिक उत्पादों से मिलने वाले प्रोटीन को वानस्पतिक प्रोटीन कहते हैं। ये हमें मुख्यत: दालों, सोयाबीन, गिरियों तथा अनाजों से प्राप्त होता है। ये दूसरे दर्जे के प्रोटीन कहलाते हैं क्योंकि इनमें अनिवार्य अमिनों अम्ल निहित नहीं पाए जाते हैं। 6. आयोडीन खनिज हमारी थाइराइड की ग्रंथि की कार्यप्रणाली को सुचारू बनाए रखता है। 7. रूक्षांश ऐसे महीन रेशे होते हैं जो हमारी आँतों की कार्यप्रणाली को सुचारू बनाए रखने में सहायता करते हैं। ये कब्ज जैसी समस्याओं से बचाकर रखते हैं। **हॉट प्रश्न –** 1. भोजन को तीन वर्गों में विभाजित किया गया है – (अ) ऊर्जादायी भोजन (ब) शरीर निर्माणकारी भोजन (स) संरक्षी भोजन **(ख)** 1. वह प्रक्रिया जिसके अंतर्गत हमारा शरीर भोजन को ग्रहण करता है तथा विविध प्रकार की जैव क्रियाओं को संपन्न करने के लिए उसका उपयोग करता है, पोषण कहलाती है। 2. ऊर्जादायी भोजन कार्बोहाइड्रेट और वसा से भरपूर होता है। **कार्बोहाइड्रेट** - इनमें कार्बन, हाइड्रोजन एवं ऑक्सीजन से निर्मित जैव यौगिक सम्मिलित होते हैं। साधारण कार्बोहाइड्रेट जल में घुलनशील होते हैं। उदाहरणत : चीनी तत्काल ऊर्जा प्रदान करती है। जटिल कार्बोहाइड्रेट अघुलनशील होते हैं जैसे स्टार्च। किसी खाद्य पदार्थ में सम्मिलित स्टार्च या शर्करा की सरलता से जाँच की जा सकती है। वसा की रचना कार्बन, हाइड्रोजन एवं ऑक्सीजन से होती है, किंतु वसा में कार्बोहाइड्रेट की तुलना में कम मात्रा में ऑक्सीजन विद्यमान पायी जाती है। कार्बोहाइड्रेट की अतिरिक्त मात्रा वसा के रूप में हमारी त्वचा के नीचे संचित हो जाती है। वसा का एक अन्य गुण है कि यह कार्बोहाइड्रेट एवं प्रोटीन की तुलना में अधिक समय में पचती है। 3. प्रयोग (1). आलू अथवा ब्रेड का कोई छोटा टुकड़ा लीजिए। इसे परखनली में रखिए एवं परखनली में आयोडीन की कुछ बूँदे मिलाइए। परखनली में उपस्थित घोल नीले-काले रंग में परिवर्तित हो जाता है। इससे स्टॉर्च की उपस्थिती स्पष्ट हो जाती है। (2) केले का छोटा टुकड़ा लो। इसे अच्छी तरह मसल लो तथा परखनली में रखो। अब इसमें बेंडिक्ट के घोल की कुछ बूँदे डालो एवं गर्म करो। यह लाल नारंगी रंग में बदल जाता है। अत: इस तरह इसमें शर्करा की उपस्थित स्पष्ट हो जाती है। 4. प्रोटीन दो प्रकार के होते हैं- वानस्पतिक प्रोटीन और जांतविक प्रोटीन। **वानस्पतिक प्रोटीन –** वानस्पतिक उत्पादों से मिलने वाले प्रोटीन वानस्पतिक प्रोटीन कहलाते हैं। ये हमें मुख्यत: दालों, सोयाबीन, गिरियों एवं अनाजों से प्राप्त होते हैं। वानस्पतिक प्रोटीन दूसरे दर्जे के प्रोटीन कहलाते हैं। क्योंकि इनमें अनिवार्य अमिनों अम्ल निहित नहीं पाए जाते हैं। **जांतविक प्रोटीन –** जंतुओं से प्राप्त खाद्य पदार्थों से मिलने वाले प्रोटीन जांतविक प्रोटीन कहलाते हैं। ये प्रोटीन सर्वोत्तम माने जाते हैं क्योंकि इनमें समस्त अनिवार्य अमिनों अम्ल उपस्थित पाए जाते हैं। 5. जल हमारे शरीर में निम्नलिखित कार्य संपन्न करता है- यह हमारे शरीर के तापमान को नियंत्रित बनाए रखने में सहायता करता है। यह हमारे शरीर में संपन्न होने वाली विविध प्रकार की रासायनिक अभिक्रियाओं का प्रमुख माध्यम है। यह हमारे शरीर में उत्पन्न अपशिष्ट के उत्सर्जन में मदद करता है। यह हमारे शरीर के विविध भागों में भोज्य सामग्री, एंजाइमों व हार्मोनों के वहन में सहायक होता है। 6. संतुलित भोजन उस आहार को कहते हैं जिसमें सभी प्रकार के पोषक पदार्थों को प्रदान करने वाले भोज्य पदार्थ संतुलित मात्रा में सम्मिलित पाए जाते हैं। अर्थात् ऐसा भोजन जिसमें कैलोरी, प्रोटीन, विटामिन, खनिज एवं रूक्षांश की मात्रा निहित रहती है, संतुलित आहार कहलाता है। **संतुलित भोजन का महत्त्व –** कोई भी एकल भोजन अथवा खाद्य पदार्थ हमारे शरीर को संपूर्ण पोषण प्रदान नहीं कर सकता इसलिए संतुलित आहार का सेवन करना अनिवार्य होता है। 7. संतुलित भोजन को चार वर्गों में विभाजित किया जाता है- **दूध वर्ग –** यह भोजन हमें प्रोटीन, वसा, खनिज एवं जल प्रदान करता है। उदाहरणत: दूध, पनीर, आइसक्रीम, लस्सी, दही आदि। **खाद्यान्न वर्ग –** इस तरह के भोजन से हमें सामान्यत: कार्बोहाइड्रेट तथा कुछ मात्रा में प्रोटीन व विटामिन की प्राप्ति होती है। जैसे- चावल, चपाती, ब्रेड, दलिया आदि। **सब्जियाँ एवं फल वर्ग –** यह विटामिनों, खनिजों, जल एवं रूक्षांशों का प्रमुख स्त्रोत है। इनसे अल्प मात्रा में प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट एवं वसा भी मिलती है। **प्रोटीन वर्ग –** यह वर्ग मुख्यत: प्रोटीन, वसा एवं विटामिन प्रदान करता है। इसमें मांस, मछली, मटर, फलियाँ आदि शामिल है। 8. ऐसे रोग जिनका कारण प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, वसा, विटामिन एवं खनिज आदि का अभाव बनता है, अभाव जन्य रोग कहलाते हैं। इन्हें पोषण संबंधी विकास भी कहते हैं। **उपाय –** अभाव जन्य रोगों से बचाव के लिए हमें निम्नलिखित का सेवन उचित मात्रा में करना चाहिए - प्रोटीन युक्त भोजन, विटामिन युक्त भोजन, आयोडीन युक्त नमक का सेवन, लौह युक्त भोजन का सेवन। अत: संतुलित आहार का सेवन करने से हम रोगों से अपना बचाव कर सकते हैं। **(ग)** विटामिन 'ए' - अंडे, गाजर, विटामिन 'बी' - मटर, मछली, विटामिन 'सी' - आँवला, फल, विटामिन 'डी' - दूध, मक्खन विटामिन 'ई' - अनाज, सब्जियाँ, कैल्शियम - पनीर, कसावा, लौह - मांस, मछली **(घ)** छात्र स्वयं करें। **(ङ)** छात्र स्वयं करें। **(च)** 1. ग 2. ङ 3. च 4. छ 5. ख 6. क 7. घ **(छ)** 1. रतौंधी 2. स्कर्वी 3. गलगंड 4. बेरी-बेरी **क्रियाकलाप –** छात्र स्वयं करें

अध्याय– 3 भोजन को स्वच्छ बनाना

(क) 1. किसी एक वस्तु में से अन्य वस्तु को निकाल कर अलग करना अथवा हटाना पृथक्करण कहलाता है। 2. अनाज को भूसे से अलग करने की विधि को गहाई कहते हैं। इस कार्य को मनुष्य स्वयं अपने हाथों से करता है या फिर पशुओं या किसी कृषि उपकरण का उपयोग करता है। 3. चुंबकीय पृथक्करण विधि में किसी मिश्रण में उपस्थित चुंबकीय पदार्थों को किसी चुंबक की मदद से पृथक कर देते हैं। 4. किसी तरल में उपस्थित निलंबित अथवा अघुलनशील अशुद्धियों को किसी निस्यंदक अथवा फिल्टर में से छानकर अलग करने की विधि को निस्यंदक कहते हैं। 5. स्वच्छ अथवा सुरक्षित पेय जल हमारी अनिवार्यता है। क्योंकि अस्वच्छ जल पीने से हमें विविध प्रकार के जल जनित रोग हो सकते हैं। आजकल बाजार में आधुनिक किस्म के फिल्टर या जल निस्यंदक मिलते हैं। इनमें जल की अशुद्धियों को अलग करने के लिए रेजिन का प्रयोग होता है। इनसे जल में उपस्थित सूक्ष्म जीवों को नष्ट करने के लिए पैराबैंगनी किरणों का प्रयोग किया जाता है। 6. जब दो तरल परस्पर अमिश्रणीय अथवा

आपस में न घुलने वाले होते हैं तो उनको अलग करना संभव होता है। हम इन्हें अमिश्रणीय तरलों के निथारन एवं पृथक्करण की विधि द्वारा अलग-अलग कर सकते हैं। **हॉट प्रश्न –** 1. एक बीकर लो। इसे आधा पानी से भरो तथा इसमें थोड़ी रेत मिलाओ। अब इस मिश्रण को कुछ समय के लिए शांत रखो। रेत के कण तलछटों के रूप में बीकर की तलछटीकरण में बैठ जाते है। यह प्रक्रिया तलछटीकरण कहलाती है। अब बीकर को सावधानी पूर्वक उठाकर साफ जल को किसी अन्य बीकर में उडेल लो। इस तरह हमें स्वच्छ जल प्राप्त हो जाएगा। इस विधि को तलछटीकरण या निथारना कहते है। 2. वह विधि जिसके माध्यम से अनाज व भूसी को अलग-अलग प्राप्त किया जाता है ओसान कहलाती है। **(ख)** 1. किसी एक वस्तु में से अन्य वस्तु को निकाल कर अलग करना अथवा हटाना, पृथक्करण कहलाता है। पृथक्करण की आवश्यकता निम्न कारणों से होती हैं - प्रकृति से प्राप्त होने वाली वस्तुएँ शत-प्रतिशत शुद्ध अवस्था में नहीं होती हैं। उनमें कई प्रकार के हानिकारक तत्त्व होते हैं। अत: उन्हें अलग करना आवश्यक होता है। दो असमान उपयोग वाले पदार्थों को अलग-अलग करके विविध प्रकार से उपयोग में लाया जाता है। उदाहरणत: गेहूँ के अनाज से भूसी को अलग करके गाय के चारे के रूप में उपयोग में लिया जाता है। पृथक्करण के माध्यम से हम किसी मिश्रण में से उपयोगी घटकों को प्राप्त कर सकते हैं। किसी तत्त्व के शुद्ध नमूने को प्राप्त करने के लिए भी इसकी आवश्यकता होती है। 2. जल में निहित अघुलनशील अशुद्धियों को अलग करने के लिए तलछटीकरण एवं निथारन नामक विधि का प्रयोग करते हैं। इसके अंतर्गत तरल को शांत रखकर उसमें उपस्थित अशुद्धियों को तलछटी में बैठने दिया जाता है। इस विधि को तलछटीकरण कहते हैं। उसके उपरांत निथारन की प्रक्रिया के तहत तलछटों को बिना बाधित किये तरल को सावधानीपूर्ण किसी अन्य बर्तन में उड़ेल लेते हैं। एक बीकर लो। इसे आधा पानी से भरो और इसमें थोड़ी रेत मिलाओ। अब इस मिश्रण को कुछ समय के लिए रखो। रेत के कण बीकर की तलछटी में बैठ जाएँगे। यह प्रक्रिया तलछटीकरण कहलाती है। अब इस बीकर को सावधानीपूर्वक उठाकर साफ जल को अन्य बीकर में डाल दें। इस तरह हमें स्वच्छ जल प्राप्त हो जाएगा। इस विधि को निथारना कहते हैं। 3. जल में घुली ठोस अशुद्धियों को पृथक करने के लिए वाष्पीकरण नामक विधि का प्रयोग करते हैं। किसी तरल को उसके क्वाथांक तक गरम करके वाष्प में बदलने की प्रक्रिया वाष्पीकरण कहलाती है। उदाहरणत: सागरीय जल को गरम कर वाष्प में बदलकर उससे नमक को प्राप्त करना। 4. किसी पात्र में थोड़ा-सा जल ले तथा उसमें कुछ मात्रा केरोसिन डालकर उसे अच्छी तरह मिला लें। अब पृथक्करण कीप को स्टैंड पर लगा लें। कीप के स्थिर नल को बंद कर दें। बीकर में मिश्रण को डालें तथा 10 मिनट तक कीप को बंद रखिए। केरोसिन तेल की जल के ऊपर एक परत बन जाएगी। अब धीरे से नल को खोल दें। जल नीचे रखे बीकर में जाने लगेगा। जब सारा जल निकल जाए, नल को बंद कर दें। अब ऊपरी बीकर में बचे केरोसिन को किसी अलग पात्र में उड़ेल लें। 5. किसी बीकर में थोड़ा समुद्रीय जल लें। कुछ समय बाद जल वाष्प बनकर उड जाएगा तथा नमक पात्र में अवशेष के रूप में प्राप्त होगा। इसे चखकर जाँच की जा सकती है। **(ग)** छात्र अध्यापक की सहायता से स्वयं करें। **(घ)** ओसाना - वह विधि जिसके माध्यम से अनाज व भूसी को अलग-अलग प्राप्त किया जाता है। ओसाना कहलाती है। इसके तहत अनाज व भूसी के मिश्रण को ऊँचाई से गिराते हैं। भूसी अनाज की तुलना में हल्की होने के कारण हवा के साथ उड़कर कुछ दूरी पर जा गिरती है। जबकि अनाज उर्ध्वाधर रूप में गिरकर ढेर के रूप में संचित होता रहता है। **चुंबकीय पृथक्करण-** यह एक ऐसी विधि है जिसके माध्यम से किसी मिश्रण में उपस्थित चुंबकीय पदार्थों को किसी चुंबक की मदद से पृथक कर देते हैं। उदाहरणत: कारखानों में लोहे की रद्दी को अलग करने के लिए बड़ी-बड़ी शक्तिशाली चुंबकों का प्रयोग होता है। **तलछटीकरण** – जल में निहित अघुलनशील अशुद्धियों को अलग करने के लिए तलछटीकरण एवं निथारन नामक विधि का प्रयोग करते हैं। इसके अंतर्गत तरल को शांत रखकर उसमें उपस्थित अशुद्धियों को तलछटी में बैठने दिया जाता है। इस विधि को तलछटीकरण कहते हैं। उसके उपरांत निथारन की प्रक्रिया के तहत तलछटों को बिना बाधित किये तरल को सावधानीपूर्ण किसी अन्य बर्तन में उड़ेल लेते हैं। एक बीकर लो। इसे आधा पानी से भरो और इसमें थोड़ी रेत मिलाओ। अब इस मिश्रण को कुछ समय के लिए रखो। रेत के कण बीकर की तलछटी में बैठ जाएँगे। यह प्रक्रिया तलछटीकरण कहलाती है। अब इस बीकर को सावधानीपूर्वक उठाकर साफ जल अन्य बीकर में डाल दें। इस तरह हमें स्वच्छ जल प्राप्त हो जाएगा। इस विधि को निथारना कहते हैं। **(ङ)** 1. शत-प्रतिशत 2. तलछटीकरण, निथारन 3. फिटकरी 4. स्वच्छ, सुरक्षित 5. अघुलनशील **(च)** 1. ग 2. घ 3. ङ 4. च 5. क 6. ख **(छ)** 1. ओसाना 2. वाष्पीकरण 3. तलछटीकरण 4. हाथ से चुनना 5. छानना **(ज)** 1. असत्य 2. सत्य 3. सत्य 4. असत्य 5. सत्य 6. सत्य 7. असत्य **क्रियाकलाप –** छात्र स्वयं करें।

अध्याय- 4 तंतु (रेशे)

(क) 1. आदिमानव अपने शरीर को ढकने के लिए वृक्षों की पत्तियों व छाल अथवा जंतुओं की खाल का प्रयोग करता था। 2. शीत जलवायु में रहने वाले लोग गरम ऊनी अथवा खाल या समूर से बने वस्त्र पहनते हैं। 3. गरम जलवायु में रहने वाले लोग सूती वस्त्र इसलिए पहनते हैं क्योंकि ऐसे वस्त्र सरलता से पसीना सोख लेते हैं तथा शरीर को ठंडा बनाए रखते हैं। 4. रेशे दो प्रकार के होते हैं - प्राकृतिक रेशे और कृत्रिम रेशे। 5. जंतुओं से प्राप्त होने वाले रेशे जांतविक रेशे कहलाते हैं। प्रमुख जांतविक रेशे हैं - ऊन, रेशम आदि। 6. जूट भारत का 'स्वर्णिम तंतु' कहलाता है। 7. रेशम रेशमकीट के कोकून से प्राप्त किया जाता है। रेशम के कीटों को शहतूत की पत्तियों पर पाला जाता हे। सबसे पहले रेशमकीट के द्वारा अपने चारों ओर बुने गए कोकूनों को एकत्र किया जाता है। उसके बाद इन्हें उबाला जाता है जिससे इनके अंदर उपस्थित प्यूमा मर जाता है। अत: कोकून की पकड़ ढीली पड़ जाती है। फिर इन्हें कारखानों में भेज दिया जाता है। वहाँ रेशमी रेशों को रील के रूप में काट लिया जाता है। 8. **कृत्रिम रेशों की विशेषताएँ** – कृत्रिम रेशों से बने वस्त्र मजबूत तथा आकर्षक होते हैं। इन्हें धोना और सुखाना सरल होता है। **हॉट प्रश्न –** 1. शीत जलवायु में रहने वाले लोग समूर से बने वस्त्र पहनते है क्योंकि ऐसे वस्त्र शरीर को गरम बनाए रखते है। 2. भारत की कपास की फसल मई से सितम्बर में बोयी जाती है। महाराष्ट्र, हरियाणा, आंध्रप्रदेश, पंजाब एवं गुजरात राज्य में बोई जाती है। **(ख)** 1. कपास एक ग्रीष्मकालीन फसल है। इसके पौधे के लिए अनुकूल तापमान 21° से. से 27° से. तक होता है। इसके लिए उपयुक्त वर्षा 50 सेमी से 80 सेमी तक होती है। काली मृदा कपास के पौधे के लिए अनुकूल मृदा है। भारत में कपास की फसल मई से सितंबर में बोयी जाती है। इसके प्रमुख उत्पादक राज्यों में महाराष्ट्र, हरियाणा, आंध्र प्रदेश, पंजाब एवं गुजरात सम्मिलित हैं। 2. जूट की प्राप्ति पटसन नामक पौधों से होती है। पटसन के पौधे के लिए गरम तथा आर्द्र जलवायु उपयुक्त होती है। इसके लिए

उपयुक्त तापमान 24° से. से 27° से. के बीच का होता है। इसके अतिरिक्त इसे रेतीले एवं चिकनी मिट्टी में भी उगाया जा सकता है। इसके पौधे की लंबाई 8 से 10 फुट होती है। जूट से विभिन्न उत्पाद तैयार किये जाते हैं। जैसे- पर्दे, कालीन, टाट, बोरियाँ, मोटे कपड़े आदि। 3. विश्व के विविध भागों में रहने वाले लोग विविध प्रकार के वस्त्र पहनते हैं। इसके अतिरिक्त लोग विविध अवसरों पर भी विविध प्रकार के वस्त्र पहनते हैं। वर्तमान में वस्त्रों को बनाने के लिए विविध प्रकार के रेशों अथवा तंतुओं का प्रयोग किया जाता है। गरम तथा उष्ण जलवायविक क्षेत्रों में रहने वाले लोग सूती, पॉपलीन एवं खादी के वस्त्र पहनते हैं क्योंकि ऐसे वस्त्र सरलता से पसीना सोख लेते हैं तथा शरीर को ठंडा बनाए रखते हैं। इसके विपरीत शीत जलवायु में निवास करने वाले लोग गरम, ऊनी अथवा खाल या समूर से बने वस्त्र पहनते हैं। ऐसे वस्त्र शरीर को गरम बनाए रखते हैं। 4. रेशम का विकास संभवत: 5000-8000 वर्ष पूर्व चीन में किया गया था। चीन से रेशम भारत, मध्य-पूर्व यूरोप एवं अफ्रीका में पहुँचा। धीरे-धीरे इसका व्यापार विस्तृत स्तर पर होने लगा। यूरोप तथा एशिया के बीच जिस मार्ग से रेशम का व्यापार किया जाता था, उसको रेशम मार्ग के नाम से जाना जाता था। रेशम एक विलक्षण तथा आकर्षक तंतु है। यह प्राकृतिक रेशों में सर्वाधिक मजबूत रेशा है। हमें रेशम रेशमकीट के कोकून से प्राप्त होता है। रेशम के कीटों को शहतूत की पत्तियों पर पाला जाता है। 5. ऐसे रेशे जो हमें प्राकृतिक रूप से प्राप्त नहीं होते हैं अथवा जिन्हें हम विविध तत्त्वों की मदद से कारखानों में स्वयं बनाते हैं, मानव निर्मित अथवा कृत्रिम रेशे कहलाते हैं। ये रेशे वास्तव में एक तरह की प्लास्टिक होते हैं, जिन्हें पेट्रो रसायनों से बनाया जाता है। प्लास्टिक को पहले गर्म किया जाता है तथा फिर वयित्र नामक उपकरण में से गुजारते हैं। जिसके सूक्ष्म छिद्रों में से निकलने के बाद यह तरल प्लास्टिक लंबे रेशों में परिवर्तित हो जाती हैं। बाद में इन्हीं रेशों से कपड़ा बुना जाता है। कृत्रिम रेशों से बने वस्त्र अत्यधिक हल्के होते हैं। इन्हें धोना और सुखाना सरल होता है। इन पर इस्तरी करने की बहुत कम आवश्यकता पड़ती है। ये अत्यधिक मजबूत होते हैं तथा ये सिकुड़ते नहीं हैं। कृत्रिम रेशों के उदाहरण हैं - नॉयलॉन, रेयान, पॉलिस्टर आदि। 6. कृत्रिम रेशों से बने वस्त्र बहुत जल्दी आग पकड़ लेते हैं। अत: इनसे बने वस्त्रों को पहनकर रसोईघर में भोजन पकाना खतरनाक साबित हो सकता है। **(ग)** छात्र स्वयं करें। **(घ) 1. ऊनी वस्त्र बनाना** – भेड़ों के शरीर से ऊन को कतरने का कार्य ग्रीष्म ऋतु में किया जाता है। भेड़ों के शरीर से ऊन को उतारने की प्रक्रिया को कतरना कहते हैं। उसके बाद इसे कारखानों में लाकर इसकी धुलाई और धुनाई की जाती है। उसके उपरांत धागों के रूप में कातकर उनसे ऊनी वस्त्र बुने जाते हैं। **2. सूती वस्त्र बनाना** – कपास के पौधों से प्राप्त कपास के रेशों को कारखानों में धागों के रूप में कात लिया जाता है। बाद में इन्हीं धागों से कपड़ा बुन लिया जाता है। कपास के रेशों से बना कपड़ा सूती कपड़ा कहलाता है। **3. रेशमी वस्त्र बनाना** – रेशमी वस्त्र बनाने के लिए सबसे पहले वयस्क रेशमकीट के द्वारा अपने चारों ओर बुने गए कोकून को एकत्र किया जाता है। उसके उपरांत इन्हें उबाला जाता है जिससे उसके अंदर उपस्थित प्यूमा मर जाता है। अत: कोकून की पकड़ ढीली पड़ जाती है। अब उस पर से रेशम के रेशों को सरलता से उतार कर कारखानों में भेज दिया जाता है। वहाँ उन रेशमी रेशों को रील के रूप में कात किया जाता है। उसके उपरांत रेशमी कपड़ा बुन लिया जाता है। **(ङ)** 1. पत्तियों, छाल, खाल 2. प्रकृति 3. काली मृदा 4. स्वर्णिम 5. रानी 6. 5000-8000 7. नॉयलॉन, पॉलिस्टर, रेयान 8. जूट **(ज)** 1. सत्य 2. असत्य 3. असत्य 4. सत्य 5. असत्य 6. सत्य 7. सत्य 8. असत्य **(च)** 1. ग 2. ङ 3. घ 4. च 5. छ 6. क 7. ख **क्रियाकलाप** – छात्र स्वयं करें।

अध्याय- 5 पदार्थों का वर्गीकरण

(क) 1. हमारे चारों ओर अनेक प्रकार की वस्तुएँ विद्यमान है। ये वस्तुएँ विविध रंगों, गुणों एवं आकार के अनुसार हमारे विभिन्न उपयोग में आती है। अत: ये सभी वस्तुएँ पदार्थ कहलाती है। 2. हम किसी पदार्थ को बनाने के लिए पदार्थ का चयन उस वस्तु के अनुकूल किसी विशेष वस्तु का ही प्रयोग करते हैं। 3. पदार्थ दो प्रकार के होते हैं- प्राकृतिक पदार्थ एवं कृत्रिम पदार्थ। 4. पदार्थों के समूहन द्वारा वस्तुओं में निहित समानता एवं असमानता सरलता से समझी जा सकती है। 5. पदार्थ के चार गुण हैं- संरचना पारदर्शिता, चमक और घनत्व। 6. ऐसे पदार्थ जिनमें से प्रकाश सरलता से गुजर जाता है, पारदर्शी कहलाते हैं। ऐसे पदार्थ जिनमें से प्रकाश नहीं गुजर पाता है, अपारदर्शी कहलाते हैं। 7. **ऊष्मा के सुचालक पदार्थ हैं**– स्टील, लोहा, पीतल और एल्युमिनियम। 8. जल में मिश्रणीय तीन तरह हैं- सिरका, नींबू का रस और एल्कोहल। 9. जलीय जंतु जल में घुली ऑक्सीजन अपने गिलों के माध्यम से श्वांस द्वारा ग्रहण करते हैं। **हॉट प्रश्न** – 1. रंग, आकार, आकृति, कठोरपन, कोमलता, चिकनाहट, गंध, खुरदरापन आदि पदार्थ के गुण होते है। 2. जो पदार्थ जल में पूर्णरूप से घुल जाते है अथवा विलेय हो जाते है, उन्हें विलेय पदार्थ कहते है। इसके विपरित जो पदार्थ जल में नहीं घुलते है, उन्हें अविलेय पदार्थ कहते है। **(ख)** 1. पदार्थ दो प्रकार के होते हैं - प्राकृतिक पदार्थ और कृत्रिम पदार्थ। **प्राकृतिक पदार्थ** – प्राकृतिक रूप से उत्पन्न पदार्थ, प्राकृतिक पदार्थ कहलाते हैं। जैसे कपास, जल, शैल, लकड़ी, अनाज आदि। **कृत्रिम पदार्थ** – ऐसे पदार्थ जो प्राकृतिक रूप से उत्पन्न नहीं होते बल्कि मानव द्वारा बनाए जाते हैं, मानव निर्मित या कृत्रिम पदार्थ कहलाते हैं। जैसे- चीनी, चाय, इस्पात, नॉयलान आदि। 2. पदार्थों का उनके सामान्य गुणों के आधार पर वर्गीकरण किया जाता है। पदार्थ का आकार, रंग, आकृति, गंध आदि उसके गुण होते हैं। 3. ऐसे पदार्थ जिनमें ऊष्मा ऊर्जा का प्रवाह सरलता से गुजर जाता है, सुचालक पदार्थ कहलाते हैं। सभी धातुएँ ऊष्मा के सुचालक होते हैं। यही कारण है कि हम भोजन पकाने वाले बर्तनों को धातुओं से बनाते हैं। 4. भोजन पकाने वाले बर्तनों की हत्थियाँ प्लास्टिक, लकड़ी, एस्बेस्टोप, पत्थर आदि की बनी होती हैं, क्योंकि ये सभी पदार्थ ऊष्मा के कुचालक होते हैं। 5. ऐसे तरल पदार्थ जो जल में नहीं घुलते अर्थात् अघुलनशील होते हैं अमिश्रणीय तरल कहलाते हैं। जैसे- नारियल का तेल, सरसों का तेल आदि। **(ग) 1. कृत्रिम पदार्थ** – ऐसे पदार्थ जो प्राकृतिक रूप से उत्पन्न नहीं होते बल्कि मानव द्वारा बनाए जाते हैं, मानव निर्मित या कृत्रिम पदार्थ कहलाते हैं। जैसे- चीनी, चाय, इस्पात, नॉयलान आदि। **2. घनत्व** – कुछ पदार्थ जल की सतह पर तैरते हैं जबकि कुछ उसमें डूब जाते हैं। यह घनत्व के कारण घटित होता है। किसी पदार्थ के प्रति इकाई आयतन भार को उसके घनत्व के रूप में जाना जाता है। ऐसा कोई पदार्थ जिसका घनत्व जल की तुलना में अधिक हो, जल में डूब जाता है। इसके विपरीत कम घनत्व वाला पदार्थ जल की सतह पर तैरता रहता है। **3. विलेयता** – जो पदार्थ जल में पूर्ण रूप से घुल जाते हैं अथवा विलेय हो जाते हैं, उन्हें विलेय पदार्थ कहते हैं। पदार्थ का यह गुण विलेयता कहलाता है। **4. पारदर्शी पदार्थ** – ऐसे पदार्थ जिनमें से प्रकाश सरलता से गुजर जाता है पारदर्शी पदार्थ कहलाते हैं। जैसे काँच। **5. पारभासी पदार्थ** – ऐसे पदार्थ जिनमें से प्रकाश आंशिक रूप से गुजर जाता है, पारभासी पदार्थ कहलाते हैं। जैसे तुषारित काँच। **6. अमिश्रणीय पदार्थ** – ऐसे तरल पदार्थ जो जल में

नहीं घुलते हैं अर्थात् अघुलनशील होते हैं, अमिश्रणीय पदार्थ कहलाते हैं। **(घ)** छात्र स्वयं करें। **(ङ)** 1. **प्राकृतिक पदार्थ** – जूट, कपास 2. **कृत्रिम पदार्थ** – प्लास्टिक, कृत्रिम रेशे 3. **चमकीले पदार्थ** – सोना, चाँदी 4. **ऊष्मा के कुचालक** – लकड़ी, प्लास्टिक 5. जल में विलेय गैस-ऑक्सीजन 6. जल में विलेय ठोस - फिटकरी, नमक के ढेले **(च)** छात्र स्वयं करें। **(छ)** 1. असत्य 2. सत्य 3. असत्य 4. असत्य 5. सत्य **क्रियाकलाप** – छात्र स्वयं करें।

अध्याय- 6 परिवर्तन

हॉट प्रश्न – 1. किसी बीकर में बर्फ के टुकड़े ले। इस बीकर को सामान्य तापमान पर रख दें। हम देखतें है कि बर्फ पिघलने लगती है तथा कुछ समय बाद पिघलकर जल में बदल जाती है। यदि हम इसी जल को फिर से रेफ्रीजरेटर के फ्रीजर में रख देते है तो यह जल पुनः बर्फ के रूप में जम जाता है। यही भौतिक परिवर्तन है। 2. किसी तत्व की विलेयता तापमान पर निर्भर करती है। जब तापमान कम होता है तो विलेयता भी कम होती है। इसके विपरित उच्च तापमान पर विलेयता की दर भी उच्च होती है। **(क)** 1. परिवर्तन का अर्थ है बदलाव, जैसे दूध का खट्टा हो जाना, बर्फ का पिघलना आदि। 2. परिवर्तन से उत्पन्न परिवर्तन हैं- आकार, आकृति और रंग। 3. ऐसे परिवर्तन जिनके घटित होने में बहुत लंबा समय लगता है मंद परिवर्तन कहलाते हैं। जैसे दूध से दही बनना। 4. दूध से दही बनना मंद परिवर्तन है। 5. **रासायनिक परिवर्तन की विशेषता** :- यह एक स्थायी अथवा अप्रत्यावर्ती परिवर्तन होता है। नए तत्त्वों की उत्पत्ति होती है। 6. **रासायनिक परिवर्तन के लाभ हैं** :- रासायनिक परिवर्तन के दौरान ऊर्जा उत्पन्न होती है। यह स्थायी परिवर्तन होता है। 7. जब एक या अधिक तत्त्व (विलेय) किसी अन्य तत्त्व (विलायक) में पूर्णत: घुल जाएँ तो उनका समरूप मिश्रण विलयन कहलाता है। 8. उच्च तापमान पर विलेयता की दर भी उच्च होती है। **(ख)** 1. ऐसे परिवर्तन जिनके घटित होने में बहुत लंबा समय लगता है मंद परिवर्तन कहलाते हैं। जैसे दूध से दही बनना। 2. इस परिवर्तन को संपन्न होने में कई घंटे का समय लगता है। इसी तरह लोहे पर जंग लगना, बीजों का अंकुरित होना, शिशु का वृद्धि करके वयस्क मनुष्य बनना आदि ऐसे परिवर्तन हैं जिनके घटित होने में दिनों, महीनों तथा वर्षों का समय लगता है। 2. **भौतिक परिवर्तन की विशेषताएँ** :- इसके अंतर्गत किसी नए पदार्थ की उत्पत्ति नहीं होती है। यह एक अस्थायी परिवर्तन है। इस परिवर्तन के अंतर्गत ऊर्जा की हानि अथवा प्राप्ति नहीं होती है। इसके तहत वस्तु द्रव्यमान में भी किसी तरह का परिवर्तन नहीं आता है। 3. दूध से दही बनना एक रासायनिक परिवर्तन है क्योंकि दही के गुण दूध से भिन्न होते हैं। दही खट्टा एवं गाढ़ा होता है जबकि दूध का स्वाद उदासीन एवं वह पतले तरल रूप में होता है। इसके अतिरिक्त दही का पुन: दूध में परिवर्तित नहीं किया जा सकता है। 4. कुछ मात्रा में लोहे का चूर्ण एंव सल्फर ले तथा इसका मिश्रण तैयार कर लें। यह मिश्रण बनना एक भौतिक परिवर्तन है क्योंकि इसके तहत किसी नए तत्व की उत्पत्ति नहीं हुई है। इसके अतिरिक्त किसी चुंबक की मदद से इसके घटकों को सरलता से पृथक किया जा सकता है। यदि इसी मिश्रण को गरम किया जाए तो कुछ समय बाद यह लाल हो जाता है तथा काले रंग का तत्त्व उत्पन्न करता है। यह काला तत्त्व एक भिन्न यौगिक होता है। अत: यह रासायनिक परिवर्तन है। 5. रासायनिक परिवर्तन की **निम्नलिखित विशेषताएँ होती हैं** :- यह एक स्थायी परिवर्तन होता है। अधिकांश परिवर्तन के तहत पदार्थों की सरंचना में परिवर्तन होता है। नए तत्त्वों की उत्पत्ति होती है। तत्त्व की भौतिक एवं रासायनिक दोनों तरह की विशेषताएँ परिवर्तित हो जाती हैं। 6. किसी विलायक में किसी विलेय की विलेयता किसी निश्चित तापमान पर उस विलायक की 100 ग्राम मात्रा में उसके संतृप्त होने से पहले घुल सकने वाले अधिकतम द्रव्यमान को कहते हैं। किसी तत्त्व की विलेयता तापमान पर निर्भर करती है। जब तापमान कम होता है तो विलेयता भी कम होती है। इसके विपरीत उच्च तापमान पर विलेयता की दर भी उच्च होती है। **(ग)** 1. विलेय- जब कोई ठोस पदार्थ किसी तत्त्व में घुल जाता है तो उसे तरल विलेय कहते हैं। 2. विलायक- जब कोई ठोस पदार्थ किसी तत्त्व में घुल जाता है तो ऐसा तरल विलायक कहलाता है। 3. विलयन- जब एक या अधिक तत्त्व (विलेय) किसी अन्य तत्त्व (विलायक) में पूर्णत: घुल जाएँ तो उनका समरूप मिश्रण विलयन कहलाता है। 4. असंतृप्त विलयन- ऐसा विलयन जिसमें उपस्थित अथवा मिश्रित विलेय की मात्रा में और अधिक मात्रा को उसी तापमान में घोलना संभव हो, वह असंतृप्त विलयन कहलाता है। 5. संतृप्त विलयन- जब किसी विशेष तापमान पर किसी विलयन में विलेय की अतिरिक्त मात्रा को घोला जाना संभव न हो तो उसे संतृप्त विलयन कहते हैं। 6. उच्च संतृप्त विलयन- एक ऐसा विलयन जिसमें सामान्य परिस्थितियों में विलायक द्वारा घोले जा सकने की तुलना में अधिक मात्रा में विलेय निहित होता है, तो वह उच्च संतृप्त विलयन कहलाता है। **(घ)** 1. कागज का जलना- रासायनिक 2. कागज का फाड़ना- भौतिक 3. कोयले का जलना- रासायनिक 4. बीज का अंकुरित होना- रासायनिक 5. रबड़ को खींचना- भौतिक 6. चीनी को चूर्णित करना- भौतिक 7. भोजन को पकाना- रासायनिक 8. मोमबत्ती का पिघलना- भौतिक 9. चीका को साँचों में ढालना- भौतिक **(ङ)** छात्र अध्यापक की सहायता से स्वयं करें।**(च)** 1. गरम करने पर जिंक ऑक्साइड का रंग पीला हो जाता है। 2. विद्युत को जल से गुजारने पर हाइड्रोजन और ऑक्सीजन गैस मुक्त होती है। 3. कोयला राख में परिवर्तित हो जाएगा। 4. यदि विद्युत को सोडियम क्लोराइड से गुजारा जाए तो वह विघटित हो जाता है एवं सोडियम और क्लोरिन की प्राप्ति होती है। 5. आकार परिवर्तित हो जाता है। **(छ)** 1. कारण 2. त्वरित 3. पदार्थों की उत्पत्ति 4. विलयन 5. स्थिति, रासायनिक रचना 6. रासायनिक **क्रियाकलाप** – छात्र स्वयं करें।

अध्याय- 7 सजीव और निर्जीव वस्तुएँ

(क) 1. ऐसी वस्तुएँ जिनमें प्राण या जीवन निहित होता है, सजीव वस्तुएँ कहलाती हैं। जैसे मनुष्य, पेड़-पौधे आदि। 2. मेज, गेंद, लोहा, चॉक, ईंट आदि निर्जीव वस्तुएँ हैं। 3. सजीव तथा निर्जीव दोनों वस्तुएँ स्थान घेरती हैं। इनमें भार होता है तथा सभी वस्तुएँ पदार्थ की बनी होती हैं। सजीव और निर्जीव दोनों वस्तुएँ संरचनात्मक इकाईयों की बनी होती हैं। जैसे तुलसी के पौधे की संरचनात्मक इकाई कोशिका होती है जबकि चाक की संरचनात्मक इकाई अणु होती है। 4. **सजीव तथा निर्जीव वस्तुओं में अनेक असमानताएँ हैं उनमें से कुछ प्रमुख हैं** :- सजीव वस्तुएँ वृद्धि करती हैं जबकि निर्जीव वस्तुओं में यह गुण नहीं पाया जाता है। सभी सजीव वस्तुएँ गति का गुण दर्शाति हैं, निर्जीव वस्तुएँ गति नहीं करती। सभी सजीव वस्तुएँ श्वसन करती हैं, किंतु निर्जीव वस्तुएँ श्वसन नहीं करती हैं। 5. समस्त सजीव वस्तुएँ कोशिकाओं से बनती हैं। कोशिका जीवन की आधारभूत इकाई है। कुछ पौधों एवं जंतुओं में मात्र एक ही कोशिका निहित पाई जाती है। अन्य अधिकांश जीव लाखों कोशिकाओं से बने होते हैं। इन्हें बहुकोशिकीय जीव कहते हैं। 6. जीवाणु और खमीर एककोशिकीय

जीव हैं। 7. सजीव श्वसन द्वारा ऑक्सीजन ग्रहण करते हैं तथा कार्बन डाइऑक्साइड को मुक्त करते हैं। 8. सभी सजीव वस्तुएँ अपनी प्रजाति को बनाए रखने अथवा वंश वृद्धि के उद्देश्य से प्रजनन करती हैं। **हॉट प्रश्न –** 1. पैर में कोई काँटा चुभ जाता है तो पैर को तुरंत उठा लेते है। इसी तरह कोई पालतू जन्तु जैसे कुत्ता आपको देखते ही पूँछ हिलाने लगता हैं या फिर किसी अन्य प्रकार से आपकी उपस्थिति के प्रति अपनी संवेदनशीलता का परिचय देते है। 2. छात्र स्वयं करें। **(ख)** 1. **सजीव तथा निर्जीव वस्तुएँ में अनेक असमानताएँ हैं उनमें से कुछ प्रमुख हैं :–** सजीव वस्तुओं को जीवित रहने के लिए भोजन की आवश्यकता होती है। इसके विपरीत निर्जीव वस्तुओं को भोजन की आवश्यकता नहीं होती है। सजीव वस्तुएँ संवेदनशील होती हैं अर्थात् वे अपने बाह्य वातावरण के प्रति अनुक्रिया को दर्शाती हैं जबकि निर्जीव वस्तुओं में यह विशेषता नहीं पायी जाती है। सजीव वस्तुएँ जन्म लेती हैं, वयस्क तथा वृद्ध होती है तथा अंततः मर जाती हैं। निर्जीव वस्तुएँ कभी नहीं मरती हैं। यद्यपि पर्यावरणीय कारकों के परिणामस्वरूप समय के साथ-साथ उनका अपक्षय अवश्य होता रहता है। 2. सजीव तथा निर्जीव दोनों वस्तुएँ स्थान घेरती हैं। इनमें भार होता है तथा सभी वस्तुएँ पदार्थ की बनी होती हैं। सजीव और निर्जीव दोनों वस्तुएँ संरचनात्मक इकाईयों की बनी होती हैं। जैसे तुलसी के पौधे की संरचनात्मक इकाई कोशिका होती है जबकि चाक की संरचनात्मक इकाई अणु होती है। 3. सजीव वस्तुओं को जीवित रहने के लिए भोजन की आवश्यकता होती है। 4. सभी सजीव वस्तुएँ गति के गुण को दर्शाती हैं। मानव तथा जंतुओं में गति को स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। जंतु मुख्यतः भोजन की तलाश, शत्रुओं से सुरक्षा तथा आश्रय की खोज के उद्देश्य से गति करते हैं। वे एक स्थान से अन्य स्थान पर गति करते हैं। पेड़-पौधे भी गति करते हैं। परंतु वे मनुष्य तथा जंतुओं की भाँति एक स्थान से दूसरे स्थान तक गति नहीं करते हैं। पौधे अपने विविध भागों द्वारा गति को दर्शाते हैं। 5. सभी सजीव वस्तुओं का जन्म मात्र एक कोशिका से होता है। जब कोशिकाओं में वृद्धि, सरंचना वृद्धि, विभेदकता आदि गुण विकसित होने लगते हैं तो हम इसे वृद्धि का नाम देते हैं। सजीवों में कोशिकाओं का विभाजन ही उनकी वृद्धि का कारण बनता है। पौधों में वृद्धि अनिश्चित होती है अर्थात् उनमें वृद्धि आयु के अनुसार रुकती नहीं है। किंतु मानव व अन्य जंतुओं में यह एक निश्चित सीमा के उपरांत रुक जाती है। 6. हमारे आसपास के वातावरण में होने वाले ऐसे परिवर्तन जो हमें अनुक्रिया के लिए प्रेरित करते हैं, उद्दीपन कहलाते हैं। वह क्रिया जो उद्दीपन के प्रत्युत्तर की जाती है अनुक्रिया कहलाती है। सजीव वस्तुओं द्वारा उद्दीपन के प्रति की जाने वाली अनुक्रिया उनकी संवेदनशीलता कहलाती है। उदाहरण पैर पर काँटा चुभने पर पैर को ऊपर उठा लेना अनुक्रिया है एवं जिस काँटे के प्रति वह की जाती है वह उद्दीपन है। पौधे भी उद्दीपन के प्रति अनुक्रिया दर्शाते हैं। उदाहरणतः अनेक फूल सूर्योदय के साथ खिलते हैं तथा सूर्यास्त के साथ ही बंद हो जाते हैं। 7. सभी सजीव वस्तुएँ अपनी प्रजाति बनाए रखने अथवा वंश वृद्धि के उद्देश्य से प्रजनन करती है। प्रजनन से तात्पर्य जंतुओं में निहित उस योग्यता अथवा सामर्थ्य से है जिसके फलस्वरूप वे अपनी जैसी संतान को जन्म देते हैं। किंतु कुछ जंतु शिशु को जन्म देने के बजाय अंडे देते हैं। एक निश्चित समयावधि पश्चात् इन अंडो से शिशु उत्पन्न होते हैं। पौधे भी संतानोत्पत्ति की सामर्थ्य रखते हैं। अधिकांश पुष्पी पौधे बीज उत्पन्न करते हैं तथा इन बीजों से नए पौधे जन्म लेते हैं। **(ग)** छात्र स्वयं करें। **(घ)** 1. कोशिका, अणु 2. पदार्थ 3. क्लोरोफिल 4. कार्बन डाइऑक्साइड 5. ऊर्जा 6. उत्सर्जन **(ङ)** 1. जीवन, प्राण 2. स्थान घेरती, भार 3. कोशिका 4. भोजन 5. प्रजनन **(च)** 1. ख 2. घ 3. ङ 4. क 5. ग **(छ)** 1. स 2. ब 3. स 4. अ 5. ब 6. स 7. ब **क्रियाकलाप –** छात्र स्वयं करें।

अध्याय– 8 प्राकृतिक वास

(क) 1. सजीवों का निवास स्थान उनका प्राकृतिक वास कहलाता है। 2. कुछ जंतु स्थल पर निवास करते हैं। ऐसे जंतुओं को स्थलीय जंतु कहते हैं। उदाहरणतः गाय, बकरी आदि। 3. वृक्षों पर रहने वाले जंतु वृक्षवासी जंतु कहलाते हैं। जैसे बंदर, गिलहरी आदि। 4. प्राकृतिक वास के जैविक घटक हैं- उत्पादक, उपभोक्ता, शाकाहारी, मांसाहारी, सर्वाहारी और वियोजक। 5. ऐसे जीवधारी जो अपना भोजन स्वयं बनाते हैं, उत्पादक कहलाते हैं। 6. कुछ सूक्ष्म जंतु अपने भोजन के लिए मृत तथा गले-सड़े पौधों एवं जंतुओं पर निर्भर करते हैं। इन्हें वियोजक कहते हैं। जैसे जीवाणु, फफूँद आदि। 7. ऐसे स्थान जो न तो बहुत गरम तथा न ही आर्द्र होते हैं उनमें उगने वाले पौधे, समोद्भिद कहलाते हैं। जैसे शाक, वृक्ष आदि। 8. वायवीय जंतुओं की हड्डियाँ खोखली होती हैं जो इनके शरीर को हल्का बनाती हैं। इनके डैनो की मांसपेशियाँ अत्यधिक मजबूत होती हैं जो उड्डयन हेतु अतिरिक्त शक्ति प्रदान करती हैं। **हॉट प्रश्न –** 1. जल में पाये जाने वाले पौधे जलोद्भिद कहलाते है जबकि पर्याप्त जल वाली भूमि पर पाए जाने वाले पौधे समोद्भिद कहलाते है। 2. (अ) इनकी हड्डियाँ खोखली होती है जो इनके शरीर को हल्का बनाती है। (ब) इनके डैनों की माँसपेशियाँ अत्यधिक मजबूत होती है जो उड्डयन हेतु अतिरिक्त शक्ति प्रदान करती है। (स) पक्षियों का शरीर हल्के जलरोधी व लचीले पंखों से ढका रहता है। **(ख)** 1. सजीव वस्तुओं के रहने का स्थान उनका प्राकृतिक वास अथवा वास स्थल कहलाता है। विविध सजीव वस्तुएँ विविध प्रकार के वास स्थलों में रहती हैं। सजीव वस्तुओं को अपना जीवन बनाए रखने के लिए अपनी विविध प्रकार की भौतिक आवश्यकताएँ पूरी करनी पड़ती हैं। भोजन, जल तथा आश्रय उनकी मौलिक आवश्यकताएँ हैं। वे अपनी उत्तरजीविका को बनाए रखने के लिए अपने आसपास के पर्यावरण से इन आवश्यकताओं को पूरा करती हैं। 2. **प्राकृतिक वासों के आधार पर जंतुओं को निम्नलिखित वर्गों में विभाजित करते हैं :–** स्थलीय जंतु- कुछ जंतु स्थल पर निवास करते हैं। ऐसे जंतुओं को स्थलीय जंतु कहते हैं। उदाहरणतः गाय, बकरी आदि। जलीय जंतु- ऐसे जंतु जो जल में रहते हैं तथा अपनी उत्तरजीविका को बनाए रखने के लिए सभी आवश्यकताएँ उसी में से पूरी करते हैं, जलीय जंतु कहलाते हैं। जैसे- मछली, झींगा आदि। उभयचर- कुछ जंतु जल व स्थल दोनों पर रहते और पाए जाते हैं। ऐसे जंतुओं को उभयचर कहते हैं। जैसे- मेंढक, टोढ़ आदि। वृक्षवासी- वृक्षों पर रहने वाले जंतु, वृक्षवासी जंतु कहलते हैं। जैसे- बंदर, गिलहरी आदि। 3. (अ) जलोद्भिद- जल की प्रचुर मात्रा वाले स्थानों पर उगने वाले पौधे जलोद्भिद कहलाते हैं। इनमें निम्न विशेषताएँ पायी जाती हैं। जड़ें अनुपस्थित अथवा बहुत कम विकसित होती हैं। तना लंबा, कमजोर, स्पंजी एवं लचीला होता है। जल में डूबे रहने वाले पौधों की पत्तियाँ पतली, लंबी तथा तना रिब्बन के आकार का होता है। प्लावी पौधों की पत्तियाँ बड़ी तथा सपाट होती हैं। इनमें बड़े वायु-कोष उपलब्ध पाए जाते हैं। (ब) मरुद्भिद- जल के अभाव वाले अथवा शुष्क स्थानों पर उगने वाले पौधे, मरुद्भिद कहलाते हैं। **इनमें निम्न विशेषताएँ पायी जाती हैं–** जड़ तंत्र सुविकसित होता है तथा भूमि में काफी गहराई तक जाता है। मूल रोम बड़ी संख्या में पाए जाते हैं। तने मोटे, मांसल तथा गुद्देदार होते हैं।

इनमें जल संचित करने की क्षमता होती है। पत्तियाँ काँटों में रुपांतरित पायी जाती हैं। 4. **स्थल पर रहने वाले जंतुओं में अनुकूलन संबंधी निम्न विशेषताएँ पायी जाती हैं :-** ये मुख्यत: स्थल पर चलने-फिरने वाले, दौड़ने वाले, बिल खोदने वाले, आरोहक तथा उड़ने वाले जंतु होते हैं। मरुस्थल में रहने वाले जंतु, मरुस्थलीय वातावरण के प्रति पूर्णत: अनुकूलित होते हैं। उदाहरणत: ऊँट तीन महीने तक बिना पानी पीये रह सकता है तथा यह अपनी कूबड़ में भोजन संचित करके रख सकता है। 5. **जलीय जंतुओं में अनुकूलन संबंधी निम्न विशेषताएँ पायी जाती हैं :-** कुछ जंतु जैसे मछली, सील, डॉल्फिन आदि जलीय वास स्थल के प्रति पूर्णत: अनुकूलित होते हैं। इनकी धारारेखीय एवं तकुए जैसी शारीरिक बनावट जल में गति करने में सहायक होती है। मछली के शरीर पर चिकने शल्क विद्यमान पाए जाते हैं। मेंढकों की त्वचा कोमल, झिल्लीदार पैर तथा उभरी हुई आँखे उनके अनुकूलन संबंधी गुण होते हैं। एलिगेटर अथवा मगरमच्छ का शरीर पतला तथा लंबा होता है तथा वे अपनी टाँगों एवं पूँछ का प्रयोग तैरने के लिए करते हैं। **(ग)** छात्र अध्यापक की सहायता से स्वयं करें। **(घ)** छात्र अध्यापक की सहायता से स्वयं करें। **(ङ)** 1. स्थलीय जंतु 2. वृक्षवासी 3. जलोद्भिद 4. सर्वाहारी 5. तीन-चौथाई 6. शल्क **(च)** 1. ऊँट, हाथी 2. मछली, स्कवीड 3. बंदर, गिलहरी 4. गाय, भैंस 5. तापमान, जल 6. कौआ, कुत्ता 7. बबूल, कैक्टस **(छ)** ऊपर से नीचे- 1. मगरमच्छ बाएँ से दाएँ -मछली 2. देवदार 3. मकड़ी 4. मच्छर **(ज)** 1. (✓) 2. (✓) 3. (✗) 4. (✗) 5. (✓) 6. (✓) 7. (✓) **क्रियाकलाप –** छात्र स्वयं करें।

अध्याय- 9 पौधे- संरचना तथा कार्य

(क) 1. शाक बहुत छोटे पौधे होते हैं। इनके तने बहुत कोमल तथा हरे होते हैं। जैसे- पालक, पुदीना आदि। 2. झाड़ी मध्यम आकार के पौधे होते हैं। ये गुफ्फेदार तथा सख्त काष्ठीय तने वाले पौधे होते हैं। इनका तना आसानी से नहीं मुड़ता है। उदाहरण- गुलाब, गुलहड़, अनार, चमेली आदि। 3. कुछ पौधे मैदान पर विसर्पण करते हुए वृद्धि करते हैं। इन्हें विसर्पी पौधे कहते हैं। जैसे- खरबूजा, तरबूज, खीरा, लौकी आदि। 4. जड़ तंत्र में दो प्रकार की जड़े सम्मिलित होती हैं- मूसला जड़ और झकड़ा जड़। 5. **तने के कार्य हैं :-** तने पर शाखाएँ, पत्तियाँ, कलियाँ, फूल एवं फल पोषित होते हैं। यह पत्तियों को इस तरह व्यवस्थित रखता है कि उन्हें पर्याप्त मात्रा में सूर्य का प्रकार प्राप्त होता रहे। यह पौधों की जड़ों द्वारा अवशोषित जल व अन्य पोषक पदार्थों व पत्तियों द्वारा बनाए गए भोजन को विविध भागों तक पहुँचाता है। 6. पौधे की पत्तियाँ, फूल, फल, शाखाएँ आदि तने पर फलित होते हैं। 7. पत्तियों को रसोईघर इसलिए कहते हैं क्योंकि हरी पत्तियाँ प्रकाश संश्लेषण द्वारा पौधे के लिए भोजन की रचना करती है। 8. गाजर और मूली भोजन को संचय करने वाली दो जड़ें हैं। 9. **फूल के निम्नलिखित प्रमुख कार्य हैं :-** फूल लिंगी प्रजनन के अंग होते हैं। परिणामस्वरूप यह फल एवं बीजों की रचना करते हैं। बीजों से नए पौधे जन्म लेते हैं। फूल अनेक कीटों को भोजन प्रदान करते हैं। फूलों का मसालों के रूप में प्रयोग किया जाता है। फूलों से इत्र प्राप्त होता है। **हॉट प्रश्न –** 1. पौधों का रसोईघर पत्ती को कहते है क्योंकि हरी पत्तियाँ प्रकाश संश्लेषण द्वारा पौधे के लिए भोजन की रचना करती है। 2. कुछ पौधे मैदान पर विसर्पण करते हुए वृद्धि करते हैं। इन्हें विसर्पी पौधे कहते है। **(ख)** 1. स्वयं करें। 2. शाक- शाक बहुत छोटे पौधे होते हैं। इनके तने बहुत कोमल तथा हरे होते हैं। जैसे- पालक, पुदीना आदि। झाड़ी- झाड़ी मध्यम आकार के पौधे होते हैं। ये गुफ्फेदार तथा सख्त काष्ठीय तने वाले पौधे होते हैं। इनका तना आसानी से नहीं मुड़ता है। उदाहरण- गुलाब, गुलहड़, अनार, चमेली आदि। आरोही पौधे- कुछ पौधों के तने इतने अधिक कमजोर होते हैं कि वे भूमि पर स्वयं सीधे खड़े होने में असमर्थ होते हैं। ये भूमि पर सीधे खड़े रहने के लिए किसी पौधे या दीवार की सहायता लेते हैं। ऐसे पौधे आरोही पौधे कहलाते हैं। जैसे- मनी प्लांट, मटर, अंगूर आदि। 3. **जड़ों के कार्य निम्नलिखित हैं-** जड़े पौधे को भूमि में स्थिर बनाए रखती हैं। हम पौधों की सिंचाई करते हैं तथा मिट्टी में स्वाद अथवा उर्वरक डालते हैं। जड़े मिट्टी से जल एवं पोषक तत्त्वों को अवशोषित कर पौधे के विविध भागों में वितरित करती हैं। जड़े मिट्टी के कणों को परस्पर जकड़ कर रखती हैं तथा मिट्टी अपरदन पर रोक लगाती हैं। कुछ पौधों की जड़े रूपांतरित होती हैं तथा विशेष प्रकार के कार्य संपन्न करती हैं। 4. **तने के कार्य हैं :-** तने पर शाखाएँ, पत्तियाँ, कलियाँ, फूल एवं फल पोषित होते हैं। यह पत्तियों को इस तरह व्यवस्थित रखताहै कि उन्हें पर्याप्त मात्रा में सूर्य का प्रकार प्राप्त होता रहे। यह पौधों की जड़ों द्वारा अवशोषित जल व अन्य पोषक पदार्थों व पत्तियों द्वारा बनाए गए भोजन को विविध भागों तक पहुँचाता है। कुछ पौधों के तने अपने अंदर भोजन को संचित करके रखने में समर्थ होते हैं। जैसे- अदरक, आलू आदि। हरा प्ररोह प्रकाश-संश्लेषण द्वारा भोजन बनाने में सहायता करता है। जैसे- नागफनी का तना। 5. पौधे की पत्तियाँ प्रकाश संश्लेषण द्वारा पौधे के लिए भोजन की रचना करती हैं। पत्तियाँ सूर्य के प्रकाश एवं क्लोरोफिल की उपस्थित में जल तथा कार्बन डाइआक्साइड को मुक्त करती हैं। कुछ पौधों की पत्तियाँ भोजन को संचित करने की क्षमता रखती हैं। ऐसे पौधों की पत्तियाँ मोटी तथा गुद्देदार होती हैं। कुछ पौधों की पत्तियाँ उसे सहारा देने के उद्देश्य से प्रतानों में रूपांतरित पायी जाती हैं। **(ग)** छात्र अध्यापक की सहायता से स्वयं करें। **(घ)** 1. प्ररोह तंत्र- पौधे का वह भाग जिसका विकास मिट्टी के ऊपर होता है, उसका प्ररोह तंत्र कहलाता है। इसे पौधे का वायवीय भाग भी कह सकते हैं। 2. वाष्पोत्सर्जन- इस प्रक्रिया के अंतर्गत पौधे जल की अतिरिक्त मात्रा को पत्तियों में उपस्थित स्टोमेटा के माध्यम से वाष्प के रूप में मुक्त करते हैं। 3. विसर्पी पौधे- कुछ पौधे मैदान पर विसर्पण करते हुए वृद्धि करते हैं। इन्हें विसर्पी पौधे कहते हैं। जैसे- खरबूजा, तरबूज, खीरा, लौकी आदि। **(ङ)** 1. आरोही पौधों के तने बहुत कमजोर होते हैं वे भूमि पर स्वयं सीधे खड़े होने में समर्थ नहीं होते हैं। 2. मरुस्थलीय पौधे की पत्तियों में भोजन को संचित रखने की क्षमता होती है। 3. आलू अपने अंदर भोजन को संचित रखने में सक्षम होते हैं तथा उपयुक्त पोषण मिलने पर पौधों के रूप में विकसित होते हैं। **(च)** छात्र स्वयं करें। **(छ)** 1. (✗) 2. (✓) 3. (✓) 4. (✓) 5. (✗) **क्रियाकलाप –** छात्र स्वयं करें।

अध्याय- 10 जंतु: संरचना तथा कार्य

(क) 1. हम जंतुओं में भोजन, श्वसन, उत्सर्जन, गति, प्रजनन आदि से संबंधित विशेषताएँ देखते हैं। 2. पोषण के अंतर्गत भोजन का ग्रहण करना, पचाना तथा उसको अवशोषित करना आता है। 3. तितली भोजन को ग्रहण करने के लिए एक लंबी नलिका, जिसे सूँड़ कहते हैं, का प्रयोग करती है। वह अपनी सूँड़ की सहायता से फूलों का मकरंद चूसती है। 4. मछली अपने गिलों की मदद से श्वसन करती है। 5. केंचुआ अपने शरीर के पिछले भाग को भूमि पर स्थिर कर अपने अगले भाग को फैलाते हुए आगे की ओर बढ़ता है अथवा गति करता है। 6. कंकाल दो प्रकार के होते हैं बहि: कंकाल और अंत: कंकाल। कठोर तथा खुरदरी त्वचा वाले कीटों को बहि: कंकाल की संज्ञा दी जाती है जैसे घोंघा। इसके विपरीत मनुष्य का कंकाल शरीर के भीतर विद्यमान होता है । अत: इसे अंत: कंकाल कहते हैं। 7. कुछ जंतुओं जैसे

कीटों, मकड़ियों, केकड़ों तथा अन्य संधि-पाद जीवों की त्वचा कठोर तथा खुरदरी होती है। इसे ही बहि: कंकाल की संज्ञा दी जाती है। यह सपाट परतों एवं खोखली नलिकाओं का बना होता है। 8. रीढ़ की हड्डी को मेरुदंड अथवा कशेरुकी स्तंभ कहते हैं। यह कशेरुकी नामक खंडित अस्थियों की एक लंबी श्रृंखला होती है। इनमें उपस्थित संधियाँ इन्हें हल्की गति की अनुमति प्रदान करती हैं। इसके प्रत्येक कशेरुक में एक सुराख होता है जिसमें शरीर का कोमल अंग मेरुरज्जु उपस्थित रहता है। **हॉट प्रश्न –** 1. छात्र स्वयं करें। 2. चूल संधि केवल एक तल पर गति करने की अनुमति प्रदान करती है। जैसे – ऊपर-नीचे या आगे-पीछे। उदाहरण – कुहनी, घुटने। **(ख)** 1. शरीर में उपस्थित पचे हुए भोजन के वियोजन से ऊर्जा उत्पन्न होती है। यह प्रक्रिया श्वसन कहलाती है। श्वसन से उत्पन्न ऊर्जा का प्रयोग जंतु विविध प्रकार की शारीरिक गतिविधियाँ संपन्न करने के लिए करते हैं। विविध जंतु विविध प्रकार से श्वसन करते हैं। जैसे मछली एवं अन्य जलीय जंतु अपने गिलों की मदद से श्वसन करते हैं। कीट अपने शरीर की बाह्य सतह पर उपस्थित छिद्रों की मदद से श्वसन करते हैं। 2. सभी जंतु गति को दर्शाते हैं। जंतुओं में सामान्य: दो तरह की गति पायी जाती है, जैसे- एक स्थान से अन्य स्थान पर गति करना। इसे चालन कहते हैं। मांसपेशियों एवं अस्थियों के सामूहिक क्रियाकलाप तथा शरीर के विविध अंगों की मदद से गति करना। मछली को गति करने में समक्ष बनाने वाली मांसपेशियाँ उसकी रीढ़ की हड्डी के दोनों ओर स्थित होती हैं। पक्षियों का शरीर धारारेखीय होता है। उनकी हड्डियाँ स्पंजी होती है जो उड्डयन के अनुकूल होती हैं। केंचुआ अपने शरीर के पिछले भाग को भूमि पर स्थित रख कर अपने अगले भाग को फैलाते हुए आगे की ओर बढ़ता है अथवा गति करता है। 3. तिलचट्टे का शरीर शीर्ष, वक्ष स्थल तथा उदर के रूप में विभाजित पाया जाता है। इसके शरीर में तीन जोड़े चलने वाले अथवा चालन टाँगे तथा उड़ने के लिए झिल्लीदार पंख होते हैं। इसके शरीर में अस्थियाँ नहीं होती हैं। इसका शरीर ऊपर से कठोर एवं टाँगे परस्पर जुड़ी हुई होती हैं जो इसके गति करने में सहायता करती हैं। 4. बहि: कंकाल जीवों की कठोर तथा खुरदरी त्वचा को कहा जाता है। अंत: कंकाल मनुष्य के भीतर विद्यमान कंकाल को कहते हैं। बहि: कंकाल सपाट परतों एवं खोखली नलिकाओं का बना होता है। कीटों के शरीर की मांसपेशियाँ इससे जुड़ी होती हैं जबकि अंत: कंकाल वाले सभी जंतुओं में रीढ़ की हड्डी उपस्थित पायी जाती है। बहि: कंकाल जंतुओं को सरंक्षण एवं सहारा प्रदान करता है एवं संधियों पर गति की अनुमति प्रदान करता है। अंत: कंकाल मनुष्य शरीर को निश्चित आकार एवं सहारा देता है तथा शरीर के विविध अंगों को गति करने में समर्थ बनाता है। 5. वयस्क मानव के शरीर में 206 अस्थियाँ निहित पायी जाती हैं। **इन्हें चार मुख्य वर्गों में विभाजित करते हैं :–** मेरुदंड- रीढ़ की हड्डी को मेरुदंड अथवा कशेरुकी स्तंभ कहते हैं। यह कशेरुकी नामक खंडित अस्थियों की एक लंबी श्रृंखला होती है। इनमें उपस्थित संधियाँ इन्हें हल्की गति की अनुमति प्रदान करती हैं। इसके प्रत्येक कशेरुक में एक सुराख होता है जिसमें शरीर का कोमल अंग मेरुरज्जु उपस्थित रहता है। खोपड़ी- खोपड़ी एक मजबूत तथा परस्पर जुड़ी हुई अस्थियों का संदूक अथवा डिब्बा होती है। यह हमारे मस्तिष्क जैसे कोमल अंग हेतु सुरक्षा आवरण का काम करता है। पसलियाँ- पसलियाँ सपाट, पतली तथा वक्राकार अस्थियाँ होती हैं। ये शरीर के ऊपरी भाग में स्थित आंतरिक अंगों के लिए सुरक्षात्मक पिंजर की रचना करती हैं। इसमें 24 अस्थियाँ 12 जोड़ों के रूप में विद्यमान पायी जाती हैं। इनसे बना पिंजरा, पसली पिंजर कहलाता है। अवयव- हमारी भुजाएँ एवं टाँगे हमारे अवयव कहलाते हैं। ये संधि मुक्त लंबी अस्थियों के बने होते हैं। इनमें उपस्थित संधियों के कारण ही ये गति कर पाते हैं। 6. हमारे शरीर में पाँच प्रकार की संधियाँ उपस्थित पायी जाती हैं :- चूल संधि- ये केवल एक तल पर गति करने की अनुमति प्रदान करती है। जैसे- ऊपर-नीचे या आगे-पीछे। जैसे- कोहनी। कंदुक- खुल्लिका संधि- ऐसी संधियाँ सभी दिशाओं में गति प्रदान करने की अनुमति प्रदान करती हैं। जैसे कंधे। सरकन संधि- ये संधियाँ अस्थियों को केवल सरकने की अनुमति ही प्रदान करती हैं। जैसे- हमारी कलाई। घुराग्र संधि- ऐसी संधि प्रत्येक दिशा में गति करने की अनुमति प्रदान करती है। जैसे गर्दन। स्थिर संधियाँ- जब कोई दो अस्थियाँ परस्पर संयोजित होकर किसी एकल गतिशील अस्थि की रचना करती हैं तो स्थिर संधि के रूप में जानी जाती है। हमारी खोपड़ी इसका श्रेष्ठ उदाहरण है। 7. सांप- सांप में रीढ़ की हड्डी काफी लंबी होती है। इसके अतिरिक्त उनके शरीर में बड़ी संख्या में महीन मांसपेशियाँ विद्यमान होती है। साँप गति करते समय अपने शरीर से अनेक छल्ले बनाता है तथा प्रत्येक छल्ला इसे आगे की ओर धकेलता है। इस तरह साँप तीव्रता से गति करने में समर्थ बनता है। पैरामीशियम- पैरामीशियम के शरीर पर बालों जैसी सूक्ष्म संरचनाएँ होती हैं। इन्हें रोमिकाएँ कहते हैं। जल में जब रोमिकाएँ किसी नाव के डाँडो की तरह संयुक्त रूप से गति करती हैं तो पैरामीशियम के लिए गति करना संभव हो पाता है। केंचुआ- केंचुआ अपने शरीर के पिछले भाग को भूमि पर स्थिर रख कर अपने अगले भाग को फैलाते हुए आगे की ओर बढ़ता है अथवा गति करता है। उसके उपरांत यह अपने अग्र भाग को भूमि पर स्थिर करता है तथा पश्च भाग को मुक्त कर शरीर को संकुचित कर पिछले भाग को आगे की ओर खींचता है। **(ग)** 1. श्वास छिद्र 2. सूँड़ 3. रोमिकाएँ 4. मेरुरज्जु 5. नैफ्रिडिया 6. पसली पिंजर **(घ)** 1. छ 2. च 3. ज 4. ङ 5. ग 6. ख 7. घ 8. क **(ङ)** 1. ब 2. अ 3. अ 4. ब 5. ब 6. ब 7. स 8. अ **क्रियाकलाप –** छात्र स्वयं करें।

अध्याय– 11 मापन और गति

(क) 1. किसी समान प्रकार के निश्चित परिणाम के साथ किसी अज्ञात परिणाम की तुलना करना मापन कहलाता है। 2. मापन की परंपरागत इकाईयाँ हैं- बलिशत, हाथ, कदम और भुजा भर की लंबाई। 3. अँगूठे के शीर्ष तथा सबसे छोटी अंगुली के बीच की लंबाई बलिशत कहलाती है। अपना हाथ खोलकर उगँलिया फैलाइए, अँगूठे के शीर्ष से लेकर सबसे छोटी अँगुली के बीच की लंबाई हमारी बलिशत के रूप में जानी जाती है। 4. वस्तु को मापने के दो पक्ष होते हैं- मापन की इकाई तथा मापी जाने वाली वस्तुओं की इकाइयों की संख्या। 5. किसी वस्तु की लंबाई को पैमाने द्वारा मापना अति सरल कार्य प्रतीत होता है, किंतु वास्तव में यह इतना सरल नहीं है। मापन के अध्ययन के दौरान हमारी दृष्टि या आँखों की गलत स्थिति से उत्पन्न त्रुटि ही दिग्भेद त्रुटि या गलती कहलाती है। 6. जब कोई वस्तु एक स्थित से अन्य में गति करती है तथा साथ ही अनियमित रूप से परिवर्तन करती है तो उसे यादृच्छिक गति कहते हैं। उदाहरणत: पक्षी तथा हॉकी का खिलाड़ी। 7. अपने आसपास स्थित किसी झूले को देखिए। यह किसी निश्चित बिंदु से इधर-से उधर गति करता है। इसे दोलन गति कहते हैं। जैसे- दीवार घड़ी के लोलक भी दोलन गति दर्शाते हैं। 8. जब कोई वस्तु किसी समान समय में समान दूरी तय करती है तो उसकी गति स्थिर गति कहलाती है। **हॉट प्रश्न –** 1. झूला किसी एक निश्चित बिंदु पर इधर से उधर गति करता है। इसे दोलन गति कहते है। 2. जब कोई वस्तु किसी समान समय में असमान दूरी तय करती है, तो उसकी गति स्थिर गति कहलाती है।

किन्तु जब कोई वस्तु किसी समान समय में असमान दूरी तय करती है तो उसकी गति अस्थिर गति कहलाती है। **(ख)** 1. **लंबाई को सही मापने के लिए हमें निम्नलिखित सावधानियाँ रखनी चाहिए :-** पैमाने को वस्तु के एक सिरे से अन्य सिरे तक उपयुक्त ढंग से रखना चाहिए। वस्तु का मापन पैमाने के शून्य (0) अंक से करना चाहिए। यदि पैमाने का यह सिरा टूटा हुआ हो तो प्रारंभिक पाठ्यांक हेतु किसी अन्य अंक को लिया जा सकता है। किंतु सही-सही लंबाई ज्ञात करने के लिए अगले बिंदु से पाठ्यांक में से प्रारंभिक पाठ्यांक को घटा देना चाहिए। 2. किसी वस्तु की लंबाई को पैमाने द्वारा मापना अति सरल कार्य प्रतीत होता है, किंतु वास्तव में यह इतना सरल नहीं है। मापन के अध्ययन के दौरान हमारी दृष्टि या आँखों की गलत स्थिति से उत्पन्न त्रुटि ही दिग्भेद त्रुटि या गलती कहलाती है। इससे बचने के लिए आँखों को अध्ययन किये जाने वाले अंक के ठीक ऊपर उर्ध्वाधर स्थिति में रखना चाहिए। 3. जब कोई वस्तु समय के साथ-साथ अपनी स्थिति में परिवर्तन कर लेती है तो उसे गति की स्थिति कहते हैं। इसके विपरीत जब कोई वस्तु समय परिवर्तन के साथ अपने स्थान अथवा स्थिति में किसी तरह का परिवर्तन नहीं दर्शाती है तो वह विश्राम की स्थिति में कहलाती है। 4. जब कोई वस्तु किसी समान पथ पर इधर से उधर दोलन करती है तथा उसकी स्थिति समान बनी रहती है। इस तरह की गति आवर्ती गति कहलाती है। इस गति को आवर्ती गति इसलिए कहते हैं क्योंकि यह एक निश्चित समय के बाद अपनी गति दोहराती है। इस तरह एक दोलन को पूरा करने वाला समय समान होता है। जबकि वस्तु द्वारा किए जाने वाले दोलनों की संख्या का कोई महत्त्व नहीं होता है। पृथ्वी द्वारा अपने अक्ष पर सूर्य के चारों ओर गति करना इसका श्रेष्ठ उदाहरण है। 5. किसी एक इकाई समय में किसी वस्तु द्वारा एक स्थिति या स्थान से अन्य स्थिति अथवा स्थान तक की तय की दूरी, उसकी चाल कहलाती है। **चाल की इकाईयाँ है :-** दूरी की मानक इकाई मीटर है। समय की मानक इकाई सैकेंड है। चाल की मानक इकाई मीटर/सैकेंड है। **(ग)** छात्र अध्यापक की सहायता से स्वयं करें। **(घ)** 1. यादृच्छिक गति- जब कोई वस्तु एक स्थिती से अन्य में गति करती है तथा साथ ही अनियमित रूप से परिवर्तन करती है तो उसे यादृच्छिक गति कहते हैं। उदाहरण: पक्षी तथा हॉकी का खिलाड़ी। 2. रैखिक गति- जब कोई वस्तु किसी एक स्थिति से अन्य स्थिति तक सरल रेखा के साथ-साथ गति करती है तो उसे रैखिक गति कहते हैं। उदाहरण: रेलगाड़ी तथा चींटियाँ। 3. वृत्ताकार गति- जब कोई वस्तु किसी वृत्ताकार मार्ग पर गति करती है तो उसे वृत्ताकार गति की संज्ञा दी जाती है। उदाहरण: पंखे का घूमना और घड़ी की सुईयों का घूमना। 4. दोलन गति- अपने आसपास स्थित किसी झूले को देखिए। यह किसी निश्चित बिंदु से इधर-से उधर गति करता है। इसे दोलन गति कहते हैं। जैसे- दीवार घड़ी के दोलक भी दोलन गति दर्शाते हैं। 5. स्पंदन- जब कोई वस्तु इधर से उधर तीव्र गति संपन्न करती है तो यह स्पंदन गति कहलाती है। उदाहरण: गिटार के तार द्वारा उत्पन्न ध्वनि अथवा कंपन और स्टील गिलास पर चम्मच मारने के पश्चात् स्पंदन अनुभव किया जा सकता है। 6. आवर्ती गति- जब कोई वस्तु किसी समान पथ पर इधर से उधर दोलन करती है तथा उसकी स्थिति समान बनी रहती है। इस तरह की गति आवर्ती गति कहलाती है। इस गति को आवर्ती गति इसलिए कहते हैं क्योंकि यह एक निश्चित समय के बाद अपनी गति दोहराती है। इस तरह एक दोलन को पूरा करने वाला समय समान होता है। जबकि वस्तु द्वारा किए जाने वाले दोलनों की संख्या का कोई महत्त्व नहीं होता है। पृथ्वी द्वारा अपने अक्ष पर सूर्य के चारों ओर गति करना इसका श्रेष्ठ उदाहरण है। **(ङ)** 1. मिलीमीटर 2. मीटर 3. मीटर 4. मिलीमीटर 5. किलोमीटर 6. मिलीमीटर **(च)** 1. 85912 मीटर = 85912 × 1/100° = 85.912 किमी। 2. 975 मी = (975 ×100) = 97500 सेमी. 3. 75 सेमी = 1/10 × 75 = .75° मिमी. 4. 5395 सेमी = 1/100×5395 = 53.95 मीटर **(छ)** 1. चाल = दूरी/समय चाल = 20/15 = 1.3 मीटर/सैकंड 2. समय = दूरी/चाल समय = 172/65 = 2.64 सैकंड 3. चाल = दूरी/समय चाल = 288/15 = 57.6 किमी./घ. **(ज)** 1. (✓) 2. (✗) 3. (✗) 4. (✗) 5. (✓) **क्रियाकलाप –** छात्र स्वयं करें।

अध्याय- 12 विद्युतधारा और परिपथ

(क) 1. जब हम किसी विद्युत स्वीच को दबाते हैं तो विद्युत परिपथ में निहित रिक्त-स्थान भर जाता है तथा वह पूर्ण हो जाता है और विद्युत धारा प्रवाह होने लगती है। 2. आवेश के प्रवाह दर को विद्युत धारा कहलाती है। 3. प्राथमिक सैल रासायनिक ऊर्जा को विद्युत ऊर्जा में परिवर्तित करता हैं तथा इस प्रकार के सैल को पुन: आवेशित नहीं किया जा सकता है। प्राथमिक सैल में प्रत्यावर्ती रासायनिक अभिक्रियाओं के माध्यम से रासायनिक ऊर्जा को विद्युत ऊर्जा में बदला जाता है। 4. ऐसा कोई भी पदार्थ जो अपनी द्रवित अवस्था में अथवा जल में घोला जाए, विद्युत चालक सिद्ध होता है, विद्युत अपघट्य कहलाता है। 5. वह मार्ग जिसमें से विद्युत धारा प्रवाहित होती है, विद्युत परिपथ कहलाता है। 6. **विद्युत परिपथ के घटक हैं :-** विद्युत स्त्रोत, संबद्ध तारें, स्वीच और विद्युत उपकरण। 7. किसी विद्युत परिपथ में विद्युत धारा के चालन अथवा प्रवाह को नियंत्रित करने का कार्य स्वीच द्वारा ही संपन्न होता है। जब स्वीच ऑन किया जाता है तो विद्युत परिपथ में निहित रिक्त-स्थान भर जाता है तथा पूर्ण हो जाता है। इसके लिए विशेष पदार्थ का प्रयोग किया जाता है। इसके पूर्ण होते ही विद्युत धारा प्रवाहित होने लगती है। इसके विपरीत जब स्वीच ऑफ किया जाता है तो वह चालक पदार्थ हट जाता है तथा विद्युत परिपथ पुन: रिक्त-स्थान बन जाता है। 8. विद्युत परिपथ के पूर्ण होने पर विद्युत धारा प्रवाहित होने लगती है। 9. कपास, रबड़, प्लास्टिक और काँच विद्युत कुचालक हैं। **हॉट प्रश्न –** 1. ऐसे सैल जिनमें प्रत्यावर्ती रासायनिक अभिक्रिया के माध्यम से रासायनिक ऊर्जा को विद्युत ऊर्जा में परिवर्तित किया जाता है। ऐसे सैलों को पुनरावेशित करना संभव होता है। 2. लोहा, ताँबा, मानव शरीर, तारकोल, चाँदी पदार्थ विद्युत सुचालक होते है। **(ख)** 1. प्राथमिक सैल-प्राथमिक सैल रासायनिक ऊर्जा को विद्युत ऊर्जा में परिवर्तित करता हैं तथा इस प्रकार के सैल को पुन: आवेशित नहीं किया जा सकता है। प्राथमिक सैल में प्रत्यावर्ती रासायनिक अभिक्रियाओं के माध्यम से रासायनिक ऊर्जा को विद्युत ऊर्जा में बदला जाता है। कुछ प्राथमिक सैल साधारण वोल्टिक सैल हैं। इनके नाम डैनिमल सैल, लैक्लेंच सैलआदि इनके फ्रेंच आविष्कारकों के नाम पर रखे गए हैं। द्वितीयक सैल- ऐसे सैलों में प्रत्यावर्ती रासायनिक अभिक्रिया के माध्यम से रासायनिक ऊर्जा को विद्युत ऊर्जा में परिवर्तित किया जाता है। ऐसे सैलों को पुन: आवेशित करना संभव होता है। उदाहरण- लीड एसिड सैल, एडिसन क्षारीय सैल आदि। 2. **विद्युत रासायनिक सैल के भाग हैं :-** विद्युत अपघट्य- ऐसा कोई भी पदार्थ जो अपनी द्रवित अवस्था में अथवा जब उसे जल में घोला जाए, विद्युत चालक सिद्ध होता है, विद्युत अपघट्य कहलाता है। यह विद्युदग्र नामक दो छड़ों के मध्य उपस्थित होता है। विद्युदग्र- सैल में दो धात्विक प्लेट उपस्थित पायी जाती हैं। इन्हें विद्युदग्र के नाम से जाना जाता है। इनमें से एक प्लेट धनाग्र तो

दूसरी ऋणाग्र होती है। 3. शुष्क सैल एक बेलनाकार पात्र होता है। जो इसके ऋणात्मक टर्मिनल की रचना करते हैं। इसके बीच में कार्बन की छड़ विद्यमान पायी जाती है। इस छड़ का शीर्ष भाग एक पीतल की टोपी से ढका होता है। इसके चारों तरफ काले पदार्थ से भरी कपड़े की थैली होती है। यह पदार्थ मैंग्नीज डाइऑक्साइड एवं ग्रेफाइट का मिश्रण होता है। जस्ते के आवरण एवं इस थैली के बीच अमोनियम क्लोराइड की गाढ़ी लेई भरी होती है। सैल के शीर्ष पर डामर की परत उसकी सील के रूप में उपस्थित होती है। यह सैल में उपस्थित सांद्रण को बाहर बहने से रोकती है। **शुष्क सैल के लाभ :-** ये सैल बहुत हल्के होते हैं तथा इन्हें एक स्थान से अन्य स्थानों पर लाना-ले जाना आसान होता है। ये सैल स्थिर विद्युतधारा की आपूर्ति करते हैं। ये सैल सामान्य कीमत वाले अर्थात् अपेक्षाकृत सस्ते होते है। 4. **विद्युत परिपथ के महत्त्वपूर्ण घटक हैं :-** विद्युत स्त्रोत- विद्युत धारा को उत्पन्न करने वाला स्त्रोत जैसे- सैल। संबद्ध तारें- विद्युत धारा के प्रवाहित होने के लिए उपयुक्त तारें। स्वीच- विद्युत परिपथ को पूर्ण अथवा विखंडित करने के लिए उपयुक्त साधन। विद्युत उपकरण- विविध प्रकार के विद्युत चलित उपकरण यथा बल्ब, ट्यूब, पंखा आदि। 5. माचिस की एक खाली डिब्बी लो। उसको इस तरह रखो कि इसका चौड़ा तल आधार बन जाए। अब एक हेयर पिन लेकर रेगमार की मदद से उसका रंग हटाओ। हेयर पिन के वक्राकार सिरे पर कोई थम्ब पिन या ड्राइंग पिन रखो व उसे माचिस में स्थिर कर दो। एक अन्य पिन इस तरह लगाओ कि वह हेयर पिन को स्पर्श कर सके। अब आपका स्विच तैयार है। जब बालों में लगने वाली पिन ड्राइंग पिन से दूर होगी तो विद्युत परिपथ विखंडित होगा तथा बल्ब नहीं जलेगा। किंतु इसके स्पर्श करते ही परिपथ पूर्ण बन जाएगा तथा बल्ब जल उठेगा। इस तरह हम किसी भी विद्युत परिपथ में स्वीच की सहायता से विद्युत धारा नियंत्रित कर सकते हैं। 6. वह पदार्थ जिनमें से विद्युत धारा सरलता से गुजर जाती है, ऐसे पदार्थ विद्युत सुचालक कहलाते हैं। सभी धातुएँ विद्युत सुचालक होती हैं। अशुद्ध जल भी विद्युत सुचालक होता है। वह पदार्थ जिनमें से विद्युत धारा प्रवाहित नहीं होती विद्युत कुचालक कहलाते हैं। जैसे- रबड़, लकड़ी, काँच आदि। 7. विद्युत मिस्त्री रबड़ के दस्ताने पहनकर कार्य इसलिए करता है क्योंकि रबड़ विद्युत कुचालक होता है तथा इसे पहनने से विद्युत का झटका लगने की संभावना नहीं रहती है। 8. विद्युत रासायनिक सैल ऐसी व्यवस्था होती है जिसमें धीमी गति से एक रासायनिक अभिक्रिया घटित होती है जिसके तहत रासायनिक ऊर्जा, विद्युत ऊर्जा में परिवर्तित हो जाती है। 9. पेपर क्लिप विद्युत सुचालक है। एक व्यवस्थित विद्युत परिपथ बनाए और एक स्थान पर रिक्त-स्थान रखें। अब इस रिक्त-स्थान पर पेपर क्लिप लगाइए। जैसे ही यह रिक्त-स्थान भरेगा विद्युत प्रवाहित होगी और बल्ब जल जाएगा। **(ग)** 1. विद्युत अपघट्य- ऐसा कोई भी पदार्थ जो अपनी द्रवित अवस्था में अथवा जल में घोला जाए, विद्युत चालक सिद्ध होता है, विद्युत अपघट्य कहलाता है। 2. विद्युदग्र- सैल में दो धात्विक प्लेट उपस्थित पायी जाती हैं। इन्हें विद्युदग्र के नाम से जाना जाता है। इनमें एक प्लेट धनाग्र तो दूरी ऋणाग्र होती है। 3. विद्युत रासायनिक सैल- विद्युत रासायनिक सैल ऐसी व्यवस्था होती है जिसमें धीमी गति से एक रासायनिक अभिक्रिया घटित होती है जिसके तहत रासायनिक ऊर्जा, विद्युत ऊर्जा में परिवर्तित हो जाती है। 4. विद्युत झटका- जब कभी असावधानीवश हमारे शरीर का कोई भाग किसी प्लास्टिक के आवरण रहित अथवा नंगी तार से स्पर्श कर जाता है तो एकाएक जोर का विद्युत झटका लगता है। विद्युत का झटका जानलेवा साबित हो सकता है। अत: हमें इसके प्रति सावधान रहना चाहिए। 5. विद्युत स्त्रोत- विद्युत धारा को उत्पन्न करने वाला स्त्रोत विद्युत स्त्रोत कहलाता है जैसे- सैल। 6. स्वीच- विद्युत परिपथ को पूर्ण अथवा विखंडित करने के लिए उपयुक्त साधन स्वीच है। किसी विद्युत परिपथ में विद्युत धारा के चालन अथवा प्रवाह को नियंत्रण करने का कार्य स्वीच द्वारा ही सम्पन्न होता है। **(घ)** छात्र स्वयं करें। **(ङ)** 1. आवेश 2. धनाग्र, ऋणाग्र 3. तरल पदार्थ 4. विद्युत परिपथ 5. ऋणात्मक 6. धनात्मक, ऋणात्मक **(च)** 1. ग 2. घ 3. ङ 4. च 5. छ 6. ख 7. क **(छ)** 1. (✓) 2. (✓) 3. (✓) 4. (✗) 5. (✗) **क्रियाकलाप –** छात्र स्वयं करें।

अध्याय- 13 चुंबक

(क) 1. आज से लगभग 5000 वर्ष पूर्व मैग्नेशिया के लोगों ने ऐसी विशेष प्रकार की चट्टान अथवा शैल की खोज की थी जो लोहे के छोटे-छोटे टुकड़ों को अपनी ओर आकर्षित करती थी। इस चमत्कारिक शैल का नाम मैग्नेशिया से प्रेरित होकर मैग्नेहाइट रखा गया। 2. **चुंबक में निम्नलिखित विशेषताएँ पायी जाती हैं :-** यह लोहे की अपेक्षाकृत छोटे टुकड़ों को अपनी ओर आकर्षित करता है। यदि किसी चुंबक को स्वत्रंतापूर्वक लटकाया जाता है तो इसकी स्थिति सदैव उत्तर-दक्षिण दिशा में होती है। 3. **चुंबक दो प्रकार के होते हैं:-** प्राकृतिक चुंबक व कृत्रिम चुंबक। 4. **चुंबक के उपयोग :-** विद्युत चलित मोटरों में चुंबक का प्रयोग होता है। जनरेटर में चुंबक का इस्तेमाल उसके विशेष घटक के रूप में किया जाता है। 5. किसी वस्तु में चुंबकीय गुण की उपस्थिति को चुंबकत्व कहते है। 6. चुंबक के दोनों सिरे जहाँ सर्वाधिक चुंबकीय बल विद्यमान पाया जाता है इसके ध्रुव कहलाते हैं। 7. चुंबकीय विषुवत चुंबक को दो बराबर भागों में विभाजित करने वाली एक उर्ध्वाधर काल्पनिक रेखा होती है। 8. जब चुंबक के समान ध्रुव परस्पर विकर्षित होते हैं तो यह चुंबकीय विकर्षण कहलाता है। 9. एल्युमिनियम, ताँबा, पीतल, लकड़ी और प्लास्टिक गैर-चुंबकीय पदार्थ हैं। 10. दिकसूचक एक ऐसा मानक उपकरण है जिससे हमें दिशाओं की सही-सही जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। वायुयान एवं जलयान के चालक सामान्यत: इसी उपकरण की मदद से विविध दिशाओं की जानकारी प्राप्त करते हैं। **हॉट प्रश्न –** 1. चुंबक का जो सिरा उत्तर की ओर संकेत करता है वह उसका उत्तर ध्रुव तथा उसका जो सिरा दक्षिण दिशा की ओर संकेत करता है वह उसका दक्षिण ध्रुव कहलाता है। 2. चुंबक कारखानों में लोहे के भारी सामान को उठाने तथा लोहे की कतरनों को किसी गैर चुंबकीय पदार्थ में से अलग करने के लिए तथा दिशा पहचानने के लिए उपयोग में आती है। **(ख)** 1. **चुंबक के उपयोग निम्नलिखित हैं :** विद्युत चलित मोटरों में चुंबक का प्रयोग होता है। 2. विविध प्रकार के इलैक्ट्रानिक उपकरण में चुंबकों का प्रयोग होता है। जैसे- टेलीविजन, रेडियो आदि। जनरेटर में चुंबक का इस्तेमाल उसके विशेष घटक के रूप में किया जाता है। दिकसूचक यंत्र में सम्मिलित चुंबकीय सूइयाँ विविध दिशाओं का ज्ञान कराती हैं। कम्प्यूटर डॉटा एवं प्रोग्राम आदि को संग्रहित करके रखने के लिए चुंबकीय डिस्क का प्रयोग किया जाता है। 2. ऐसे पदार्थ अथवा तत्त्व जिन्हें चुम्बक अपनी ओर आकर्षित करती है चुंबकीय पदार्थ कहलाते हैं। उदाहरण: लोहा, कोबाल्ट, निकल तथा उनकी मिश्रित वस्तुएँ। 3. चुंबकीय तथा गैर चुंबकीय पदार्थों की पहचान करने के लिए एक चुंबक छड लीजिए और उसे वस्तुओं के निकट लाकर चुंबकीय अथवा गैर चुंबकीय का निरीक्षण कीजिए। यदि पदार्थ अथवा तत्त्व

चुंबक को अपनी ओर आकर्षित करता है तो वह चुंबकीय पदार्थ है अन्यथा गैर चुंबकीय पदार्थ है। 4. **चुंबक के निहित गुणधर्म निम्नलिखित हैं :-** चुंबक के ध्रुव - चुंबक के दोनों सिरे जहाँ सर्वाधिक चुंबकीय बल विद्यमान पाया जाता है इसके ध्रुव कहलाते हैं। चुंबक का दिशा संबंधी गुणधर्म- चुंबक का जो सिरा उत्तर की ओर संकेत करता है वह उसका उत्तर ध्रुव कहलाता है। अत: जब हम किसी चुंबक को स्वच्छंद रूप से किसी आधार पर लटकाते हैं तो वह सदैव उत्तर-दक्षिण दिशा की ओर स्थिर होती है। दो चुंबकों के बीच आकर्षण एवं विकर्षण- चुंबक के समान ध्रुव परस्पर विकर्षित होते हैं, जबकि इसके असमान ध्रुव परस्पर आकर्षित होते हैं। चुंबकीय ध्रुवों का अस्तित्व जोड़ों में होता है- किसी पृथक अथवा एकल चुंबकीय ध्रुव का अपना कोई अस्तित्व नहीं होता है। जब किसी चुंबक को उसके बीचोबीच से तोड़कर उसके दोनों ध्रुवों को पृथक-पृथक करने का प्रयास किया जाता है तो इसके खण्डित भाग एक पूर्ण चुंबक में परिवर्तित हो जाते हैं। 5. **चुंबक बनाने की दो प्रमुख विधियाँ होती हैं** - एकक स्पर्श विधि -इस विधि के अंतर्गत एक लोहे की छड़ को मेज पर रखो। अब किसी धागे वाली छड़ चुंबक इसके ऊपर उर्ध्वाधर रूप से इस तरह रखो कि इसका ध्रुव लोहे की छड़ के एक सिरे से स्पर्श करता है। चुंबक को उस छड़ के साथ-साथ अगले सिरे पर घुमाओ। अब उसे उठाओ और प्रारंभिक स्थिति में लाओ। इस प्रक्रिया को 40 बार दोहराओ। उसके बाद छड़ को पलट दो तथा उसी प्रक्रिया को पुन: दोहराओ। अब इसकी चुंबकत्व जाँच कीजिए। विद्युत विधि- इस विधि में जिस लोहे की छड़ को चुंबकीकृत करना होता है उसे किसी कुचालक तार से बनी कुंडली में रखते हैं। जब इस कुंडली में से शक्तिशाली विद्युत धारा को प्रवाहित करते हैं तो छड़ चुंबकीकृत हो जाती है। यह विद्युत चुंबक कहलाती है। **(ग)** 1. छड़ चुंबक 2. शलाका चुंबक 3. घोड़े के नाल जैसी चुंबक 4. रिंग चुंबक **(घ)** 1. चुंबकीय ध्रुव- चुंबक के दोनों सिरे जहाँ सर्वाधिक चुंबकीय बल विद्यमान पाया जाता है इसके ध्रुव कहलाते हैं। 2. चुंबक की प्रभाव प्रवण लंबाई- यह चुंबकीय उत्तर ध्रुव एवं चुंबकीय दक्षिण के बीच की दूरी होती है। 3. चुंबक की लंबाई- यह चुंबक के केंद्र एवं उसके ध्रुव (N तथा S) के मध्य की दूरी होती है। 4. चुंबकीय आकर्षण तथा विकर्षण- चुंबक के समान ध्रुव परस्पर विकर्षित होते हैं, जबकि इसके असमान ध्रुव परस्पर आकर्षित होते हैं। 5. कृत्रिम चुंबक- ऐसे चुंबक जिन्हें मानव द्वारा किसी भी समय तथा किसी भी स्थान पर उपयोग हेतु बनाया जाता है, कृत्रिम चुंबक कहलाते हैं। इस तरह के चुंबक प्राकृतिक चुंबक की तुलना में अधिक शक्तिशाली होते हैं। **(ङ)** छात्र अध्यापक की सहायता से स्वयं करें। **(च)** 1. मैग्नेटाइट 2. दिकसूचक यंत्र 3. चुंबक की लंबाई 4. चुंबकीय प्रेरण 5. चुंबकीय विषुवत 6. चुंबक के ध्रुव **(छ)** 1. कृत्रिम 2. प्रकार 3. चुंबकीय ध्रुव 4. वायुयानों, जलयानों 5. चुंबकीय विषुवत **(ज)** 1. चुंबकीय 2. गैर चुंबकीय 3. चुंबकीय 4. चुंबकीय 5. गैर चुंबकीय 6. चुंबकीय 7. चुंबकीय 8. गैर चुंबकीय **(झ)** 1. (✓) 2. (✗) 3. (✗) 4. (✓) 5. (✗) 6. (✓) **क्रियाकलाप –** छात्र स्वयं करें।

अध्याय- 14 वर्षा, गर्जना तथा तड़ित

(क) 1. वर्षा ऋतु में हम वर्षा के गिरने, बिजली के चमकने तथा मेघों के गरजने जैसी सामान्य प्राकृतिक घटनाओं को घटित होते देखते हैं। 2. **जल की तीन अवस्थाएँ हैं :-** ठोस, तरल और गैसीय। 3. जल का गरम होकर भाप या जलवाष्प में बदलना, वाष्पीकरण कहलाता है। 4. जलवाष्प का ठंडा होकर जल में बदलना, संघनन कहलाता है। 5. जल के तरल से ठोस में बदलने की प्रक्रिया को हिमीकरण कहते है। वह तापमान जिस पर यह प्रक्रिया घटित होती है। हिमांक कहलाता है। 6. सूर्य की गरमी के कारण जलराशियों में विद्यमान जल वाष्पीकरण होता रहता है तथा जलवाष्प के रूप में वायुमंडल में ऊपर की ओर बढ़ता है। जब यह जलवाष्प ठंडी वायु के संपर्क में आता है तो संघनित होकर जल बिंदुकों में परिवर्तित हो जाता है। यही सूक्ष्म जल बिंदुक आपस में मिलकर बादल अथवा मेघों की रचना करते हैं। 7. जब जल बिंदुक अधिक ठंड हो जाते हैं तब इनका आकार भी बड़ा हो जाता है। अत्यधिक भारी हो जाने के कारण यही वर्षा के रूप में धरती पर गिरने लगते हैं। यह वर्षण कहलाता है। **हॉट प्रश्न –** 1. जल का ठंडा होकर जमना उसका हिमीकरण कहलाता है। 2. जार की तलछटी को ढकने जितना पानी डालिए। अब ढक्कन से जार का मुँह पूरी तरह से बंद कर दे। इस ढक्कन को बादल का रुप मानिए। इस ढक्कन की बाहरी सतह पर बर्फ के चार-पाँच टुकड़े रखिए। यह बर्फ वायुमंडल की ऊँचाई पर स्थित ठंडी वायु का कार्य करेगी। अब 10 या 15 मिनट तक प्रतीक्षा कीजिए। अब देखेंगे कि ढक्कन के भीतरी भाग से जल वर्षा के जल बिंदुको की तरह नीचे गिरने लगेगा। **(ख)** 1. जल तीन अवस्थाओं में पाया जाता है- ठोस, तरल और गैस। जल की अवस्थाएँ परिवर्तनीय है। जल को ठंडा किया जाता है तो यह जमकर बर्फ में बदल जाता है। तब इसे गर्म करते हैं तो यह जल वाष्प में परिवर्तित हो जाता है। इसी तरह जल वाष्प को ठंडा किया जाता है तो यह जल में परिवर्तित हो जाता है। इसी तरह बर्फ को गर्म करने पर वह भी जल में बदल जाता है। 2. जल के गरम होकर वाष्प में बदल जाने की प्रक्रिया को वाष्पीकरण कहते है और जलवाष्प के ठंडा होकर जल में बदलने की प्रक्रिया संघनन कहलाती है। वाष्पीकरण गैसीय अवस्था है और संघनन तरल अवस्था है। जल के वाष्प में बदलने के लिए सूर्य की गरमी ही पर्याप्त होती है जबकि वाष्प ठंडी सतह के संपर्क में आते ही जल में परिवर्तित हो जाता है। 3. कभी-कभी बादल अत्यधिक ठंडे क्षेत्र में पहुँच जाते हैं। ऐसी स्थिति में जल बिंदुक बर्फ के रुप में जम जाते हैं तथा ओलों अथवा हिम का रूप ले लेते हैं। जबकि वर्षा में जल बिंदुक में बरसते हैं। 4. छात्र जल चक्र स्वयं बनायें। 5. बेंजामिन फ्रेंकलीन नामक एक वैज्ञानिक ने बिजली तथा गरजना अथवा कड़क की उत्पत्ति के कारणों को जानने के लिए अनुसंधान किया था। उसने एक झँझा के दौरान बादलों में एक रेशम की डोरी वाली पतंग को उड़ाया। उन्होंने उस पतंग की डोर के साथ एक धातु की चाबी बाँध दी। वह जब भी इस चाबी को स्पर्श करता है तो उसे जोर से झटका लगता था। जब ऐसे रेशे दो बादल जिनमें विद्युत उत्पन्न हुई हो, परस्पर अधिक निकट आते हैं तो वायु के माध्यम से एक बादल से दूसरे बादल में कुछ समय के लिए अत्यधिक शक्तिशाली विद्युत धारा बहती है। 6. बेंजामिन फ्रेंकलीन नामक एक वैज्ञानिक ने बिजली तथा गरजना अथवा कड़क की उत्पत्ति के कारणों को जानने के लिए अनुसंधान किया था। उसने एक झँझा के दौरान बादलों में एक रेशम की डोरी वाली पतंग को उड़ाया। उन्होंने उस पतंग की डोर के साथ एक धातु की चाबी बाँध दी। वह जब भी इस चाबी को स्पर्श करता है तो उसे जोर से झटका लगता था। जब ऐसे रेशे दो बादल जिनमें विद्युत उत्पन्न हुई हो, परस्पर अधिक निकट आते हैं तो वायु के माध्यम से एक बादल से दूसरे बादल में कुछ समय के लिए अत्यधिक शक्तिशाली विद्युत धारा बहती है। वायु द्वारा विद्युत का यह क्षणिक प्रवाह, विद्युत आवेश कहलाता है। सामान्यत: आवेश के साथ ऊष्मा, प्रकाश तथा ध्वनि उपस्थित पाए जाते हैं। यही आवेश बादलों में

बिजली तथा गरजना के रूप में प्रकट होते हैं। अत: हम बिजली के चमकने के साथ गरजने की आवाज सुनते हैं। 7. प्रकाश अत्यधिक तीव्रगति से अर्थात् 3,00,000 किमी. प्रति सैकेंड की गति से यात्रा करता है। जबकि ध्वनि की गति मात्र 340 मीटर प्रति सैकेंड की होती है इसलिए मेघों की गरजना सुनने से काफी पहले ही बिजली की चमक दिखाई दे जाती है। **(ग)** 1. वाष्पीकरण तथा संघनन- जल के गरम होकर वाष्प में बदल जाने की प्रक्रिया को वाष्पीकरण कहते है और जलवाष्प के ठंडा होकर जल में बदलने की प्रक्रिया संघनन कहलाती है। वाष्पीकरण गैसीय अवस्था है और संघनन तरल अवस्था है। जल के वाष्प में बदलने के लिए सूर्य की गरमी ही पर्याप्त होती है जबकि वाष्प ठंडी सतह के संपर्क में आते ही जल में परिवर्तित हो जाता है। 2. बिजली तथा गरजना- प्रकाश अत्यधिक तीव्रगति से अर्थात् 3,00,000 किमी. प्रति सैकेंड की गति से यात्रा करता है। जबकि ध्वनि की गति मात्र 340 मीटर प्रति सैकेंड की होती है इसलिए मेघों की गरजना सुनने से काफी पहले ही बिजली की चमक दिखाई दे जाती है। **(घ)** 1. छात्र स्वयं करें। **(ङ)** 1. जल में परिवर्तित हो जाते हैं। 2. जल वाष्प में बदल जाता है। 3. जल ठंडा होकर बर्फ बन जाता है। 4. वर्षा के रूप में धरती पर गिरने लगते हैं। 5. ऐसी स्थिति में जल बिंदुक बर्फ के रूप में जम जाते हैं। 6. चम्मच पर जल बिंदुक आ जाते हैं। 7. गिलास पर जल बिंदुक आ जाते हैं। **(च)** 1. (✓) 2. (✗) 3. (✗) 4. (✓) 5. (✗) 6. (✓) **(छ)** 1. छात्र स्वयं करें। **(ज)** 1. पर्दा 2. तरल 3. 100° 4. 0° 5. वाष्पीकरण 6. संघनन 7. वर्षण **क्रियाकलाप –** छात्र स्वयं करें।

अध्याय- 15 प्रकाश, परछायी तथा परावर्तन

(क) 1. जब प्रकाश किसी वस्तु पर गिरता है, तो वह उसकी सतह से सभी दिशाओं में बिखर जाता है, इसे प्रकाश का प्रकीर्णन कहते हैं। 2. सूर्य और चंद्रमा प्रकाश के प्राकृतिक स्त्रोत है। 3. विद्युत बल्ब और लालटेन मानव निर्मित प्रकाश के स्त्रोत है। 4. ऐसी वस्तुएँ जो स्वत: प्रकाश ऊर्जा उत्सर्जित करती हैं, दीप्त वस्तुएँ कहलाती हैं। 5. वायु, काँच पारदर्शी वस्तुएँ है। 6. ऐसे पदार्थ अथवा वस्तुएँ जिनके आर-पार प्रकाश का गुजरना असंभव होता है, अपारदर्शी वस्तुएँ कहलाती हैं। जैसे ईंट, लकड़ी, पत्थर आदि। 7. तीन समान आकार के गत्ते लो। उन पर A, B और C अंकित करो। उनके केंद्र में एक-एक छिद्र बनाओ तथा उसके विपरीत किसी समतल आधार पर उन्हें उर्ध्वाधर रूप में व्यवस्थित करो। गत्ते A के सामने एक जलती हुई मोमबत्ती इस प्रकार रखो कि उसकी लौ ठीक छिद्र के सामने पड़े। अब गत्ते C में बने छिद्र से मोमबत्ती की लौ देखो। मोमबत्ती की लौ दिखाई देती है क्योंकि तीनों गत्तों के छिद्र एक पंक्ति में स्थिर हैं। अब किसी एक गत्ते को उसके स्थान से इधर-उधर कर दो और पुन: मोमबत्ती को लौ देखो। अब हमें मोमबत्ती की लौ दिखाई नहीं देगी क्योंकि गत्तों के छिद्र पंक्तिबद्ध स्थिति में नहीं रहे तथा लौ से निकलने वाला प्रकाश बाधित हो गया। अत: इससे स्पष्ट हो जाता है कि प्रकाश सीधी रेखा में गमन करता है। 8. पिन होल कैमरा एक ऐसा डिब्बा होता है जिसकी एक दीवार पर छोटा-सा सुराख विद्यमान पाया जाता है। इसी के साथ ही उसके सम्मुख या सामने की दीवार पर सफेद कागज लगा रहता है। जब प्रकाश की किरणें छिद्र से प्रवेश करती हैं तो बड़ी तेजी से प्रकाशमान प्रतिबिंब सफेद कागज पर दिखाई देता है। अर्थात् पिन होल कैमरा वह उपकरण है जो किसी चमकीली वस्तु का प्रतिबिंब पट्ट पर बनाने में समक्ष होता है। 9. वह सीधी रेखा जिसके साथ-साथ प्रकाश गमन करता है, प्रकाश विकीर्ण कहलाती है। प्रकाश को दर्शाने के लिए तीर के शीर्ष वाली सरल रेखा का प्रयोग करते हैं। तीर का शीर्ष प्रकाश के गमन की दिशा को प्रकट करता है। 10. जब प्रकाश की किरणें विविध दिशाओं से आकर किसी एक बिंदु पर मिल जाती है, तो उन किरणों से जो समुच्चय बनता है, वह अभिसारी किरण पुंज कहलाता है।11. परछाई का पूर्ण रूप से काला क्षेत्र, प्रच्छया कहलाता है। इस क्षेत्र में प्रकाश की किरणों का प्रवेश असंभव है। 12. परावर्तन दो नियमों का पालन करता है:- आपतन कोण (i) परावर्तन कोण (r) के समान होता है। आपतित किरण, परावर्तित किरण एवं अभिलंब अपतन बिंदु पर होते हैं अर्थात् सभी एक ही तल पर उपस्थित होते हैं। 13. ऐसा कोई भी पॉलिश किया गया तल जो प्रकाश को उसके उसी मार्ग पर वापस मोड़ देता है, दर्पण कहलाता है। जैसे- आईना, जंगरोधी इस्पात आदि। 14. पार्श्विक परावर्तन वह परिघटना होती है जिसके कारण बायीं तरफ स्थित वस्तु दायीं तरफ तथा प्रतिक्रम में दिखाई देती है। **हॉट प्रश्न –** 1. छात्र स्वयं करें। 2. ऐसे पदार्थ जो स्वतः प्रकाश का उत्सर्जन करते है, दीप्त पदार्थ कहलाते हैं और जो स्वयं प्रकाश का उत्सर्जन नहीं करते है, अदीप्त पदार्थ कहलाते है। **(ख)** 1. **प्रकाश के प्राकृतिक स्त्रोत निम्नलिखित हैं :-** सूर्य- सूर्य प्रकाश का प्रधान स्त्रोत है। यह जलती हुई गैसों का एक विशाल गोला होता है। इससे बड़े पैमाने पर ऊष्मा एवं प्रकाश का उत्सर्जन होता है। चंद्रमा- चंद्रमा, पृथ्वी का एक उपग्रह है तथा यह भी हमारी पृथ्वी पर प्रकाश के प्राकृतिक स्त्रोत का एक रूप है। चंद्रमा का अपना कोई प्रकाश नहीं होता है। यह सूर्य के प्रकाश से ही चमकता है। तारे- तारे प्रकाश का अन्य महत्वपूर्ण प्राकृतिक स्त्रोत हैं। तारों का अपना प्रकाश होता है। आकाश में असंख्य तारे विद्यमान है। कुछ तारे सूर्य की तुलना में बहुत अधिक चमकीले तथा विशाल आकार के हैं। तारे हमारी पृथ्वी से बहुत अधिक दूरी पर स्थित हैं इसलिए ये हमें रात्रि में आकाश में टिमटिमाते हुए दिखाई देते हैं। 2. तीन समान आकार के गत्ते लो। उन पर A, B और C अंकित करो। उनके केंद्र में एक-एक छिद्र बनाओ तथा उसके विपरीत किसी समतल आधार पर उन्हें उर्ध्वाधर रूप में व्यवस्थित करो। गत्ते A के सामने एक जलती हुई मोमबत्ती इस प्रकार रखो कि उसकी लौ ठीक छिद्र के सामने पड़े। अब गत्ते C में बने छिद्र से मोमबत्ती की लौ देखो। मोमबत्ती की लौ दिखाई देती है क्योंकि तीनों गत्तों के छिद्र एक पंक्ति में स्थिर हैं। अब किसी एक गत्ते को उसके स्थान से इधर-उधर कर दो और पुन: मोमबत्ती की लौ देखो। अब हमें मोमबत्ती की लौ दिखाई नहीं देगी क्योंकि गत्तों के छिद्र पंक्तिबद्ध स्थिति में नहीं रहे तथा लौ से निकलने वाला प्रकाश बाधित हो गया। अत: इससे स्पष्ट हो जाता है कि प्रकाश सीधी रेखा में गमन करता है। 3. पिन होल कैमरा वास्तव में गत्ते का एक डिब्बा होता है। इसकी एक दीवार पर 2 से 3 मिमी. व्यास का एक लघु छिद्र बना होता है। ताकि प्रकाश इस छिद्र के माध्यम से डिब्बे में प्रवेश कर सके। छिद्र के सामने वाली दीवार पर सफेद कागज लगा दिया जाता है ताकि उस पर प्रकाश पड़ सके। हम ऊपर से इस डिब्बे के अंदर देख सकते हैं। इस डिब्बे के ऊपर से प्रकाश को अवरूद्ध करने के लिए हम सामान्यत: किसी गहरे रंग के तौलिए या अन्य कपड़े का प्रयोग करते हैं। इस पर बनने वाली प्रतिकृति या प्रतिबिंब वास्तविक, उलटा, पार्श्विक रूप से प्रतिवर्ती एवं छोटा होता है। 4. जब बड़ी संख्या में प्रकाश की किरणें एक-दूसरे के समानांतर गमन करती हैं तो इस तरह की किरणों का समुच्चय, समानांतर किरण पुंज कहलाता है। उदाहरण: किसी सर्च लाइट से निकलने वाली किरणें समानांतर किरण पुंज की रचना करती है। सूर्य से पृथ्वी के धरातल पर आने वाली किरणें भी अधिकांशत:

एक-दूसरे के समानांतर गमन करती हैं। 5. किसी अपारदर्शी वस्तु के पीछे का वह स्थान जहाँ उसके द्वारा प्रकाश को पूर्ण अथवा आंशिक रूप से विच्छेद कर दिया जाता है, परछायी कहलाता है। परछाई की रचना से संबंधित शर्तें निम्नलिखित हैं- प्रकाश का स्त्रोत, अपारदर्शी वस्तु एवं परछायी को ग्रहण करने के लिए अपारदर्शी पट्ट। 6. विस्तृत प्रकाश स्त्रोत में किन्हीं दो बिंदुओं के मध्य का भीतरी भाग प्रकाश को बिल्कुल ग्रहण नहीं करता है। प्रकाश की किरणें इन बिंदुओं के मध्य काला भाग बनाती है, यह प्रच्छाया कहलाता है। प्रच्छाया के बाहर का भाग परछायीं का वह भाग है जो अधिक काला नहीं है। परछायीं के इस हल्के भाग को उपच्छाया कहते है। 7. जब प्रकाश की किरण किसी एक प्रकाशीय माध्यम से अन्य प्रकाशीय माध्यम में गमन करती है तो कोण में परिवर्तन करते हुए उसकी सतह से मुड़ जाती है, तो यह प्रकाश का परावर्तन कहलाता है। परावर्तन दो नियमों का पालन करता है:- आपतन कोण (i) परावर्तन कोण (r) के समान होता है। आपतित किरण, परावर्तित किरण एवं अभिलंब अपतन बिंदु पर होते हैं अर्थात् सभी एक ही तल पर उपस्थित होते हैं। 8. ऐसा कोई भी पॉलिश किया गया तल जो प्रकाश को उसके उसी मार्ग पर वापस मोड़ देता है, दर्पण कहलाता है। जैसे- आईना, जंगरोधी इस्पात आदि। **साधारण दर्पण द्वारा बनाए गए प्रतिबिंब की विशेषताएँ :-** साधारण दर्पण द्वारा प्रतिबिंब आभासी होता है, यानी इसे पट्टे पर नहीं लिया जा सकता। यह प्रतिबिंब सीधा होता है। दर्पण के पीछे प्रतिबिंब ठीक उतनी ही दूरी पर बनता है जितनी दूरी पर उसके सामने वह वस्तु स्थित होती है। वस्तु के आकार के बराबर का प्रतिबिंब बनता है। **(ग)** छात्र अध्यापक की सहायता से स्वयं करें। **(घ)** 1. जब प्रकाश किसी वस्तु पर गिरता है, तो वह उसकी सतह से सभी दिशाओं में बिखर जाता है, इसे प्रकाश का प्रकीर्णन कहते हैं। 2. पारभासी पदार्थ- ऐसी वस्तुएँ जिनके आर-पार प्रकाश पूर्ण रूप से न गुजर आंशिक रूप से गुजर पाता है, पारभासी पदार्थ कहलाते हैं। हम इन वस्तुओं के आर-पार स्पष्ट रूप से नहीं देख पाते हैं। उदाहरण: चिकना कागज, तुषारित काँच आदि। 3. अभिलंब- यह अपतन बिंदु पर परावर्ती तक खींचा गया लंब होता है। 4. प्रतिबिंब- प्रतिबिंब किसी वस्तु पर पड़ रहे प्रकाश द्वारा बनाए गए रूप को दर्शाते है। प्रतिबिंब वस्तु के रंग के अनुरूप ही बनता है तथा इसका आकार वस्तु के समान ही होता है। 5. आपतन बिंदु- परावर्ती सतह पर उपस्थित वह बिंदु जहाँ आपतित किरण टकराती है या परावर्तित किरण मुड़ जाती है, आपतन बिंदु कहलाता है। 6. परावर्तन कोण- वह कोण जिसे परिवर्तित किरण अभिलंब के साथ मिलकर बनाती है, उसे किसी अंग्रेजी वर्ण या अक्षर के माध्यम से दर्शाते हैं। **(ङ)** 1. समानांतर किरण पुंज 2. अपसारी पुंज 3. अभिसारी पुंज **(च)** 1. घ 2. ङ 3. ख 4. च 5. ग 6. क **क्रियाकलाप –** छात्र स्वयं करें।

अध्याय- 16 जल

(क) 1. पृथ्वी धरातल का लगभग तीन-चौथाई भाग जल से घिरा है। 2. मान एवं जीव जंतु मात्र 0.01% जल पर ही निर्भर करते हैं। 3. **जल के उपयोग :-** जल का प्रयोग भोजन पकाने, वस्त्र धोने, सफाई आदि कार्यों में होता है। सिंचाई के लिए जल की आवश्यकता होती है। 4. जल भोजन पचाने में सहायता करता है। यह शरीर के तापमान को नियंत्रित रखता है, ऑक्सीजन तथा कार्बन डाइऑक्साइड के परिवहन में विशेष माध्यम का कार्य करता है। 5. अनावृष्टि से तात्पर्य है ऐसी अवधि से है जिसमें वर्षा के अभाव के कारण जलीय असंतुलन की गंभीर समस्या पनप जाती है तथा जलापूर्ति करने वाले सभी स्त्रोत सूख जाते हैं। 6. **अनावृष्टि की उत्पत्ति के कारण हैं :-** सामान्य से कम वर्षा। वृक्षों अथवा वनों की अंधाधुंध कटाई। 7. जल सरंक्षण का अर्थ है जल का सदुपयोग करना। जल हमारी मूल आवश्यकता है, हमें जल का उपयोग सुचारु तरीके से करना चाहिए इसे व्यर्थ नहीं बहाना चाहिए। 8. जल संभ्रण ऐसी विधि है जिसके अंतर्गत वर्षा के दौरान उसके जल को रोककर उसे गैर-बरसाती मौसम में उपभोग करने के लिए संग्रहित कर लिया जाता है। **हॉट प्रश्न –** 1. बाढ़ की उत्पत्ति के मुख्य कारण भारी वर्षा, चक्रवात, भू-स्खलन के कारण नदियों के मार्ग का अवरुद्ध हो जाना तथा ज्वारीय लहरें अथवा सूनामी है। 2. जल भोजन को पचाने में सहायता करता है। यह शरीर के तापमान को नियंत्रित रखता है। जल शरीर में भोजन, ऑक्सीजन तथा कार्बनडाई ऑक्साइड के परिवहन में विशेष माध्यम का काम करता है। जल का प्रयोग भोजन पकाने, वस्त्र धोने, सफाई आदि कार्यों में होता है। **(ख)** 1. **जल हमारे शरीर में निम्न कार्य संपन्न करता है :-** जल भोजन पचाने में सहायता करता है। यह शरीर के तापमान को नियंत्रित करता है। जल शरीर में भोजन, ऑक्सीजन तथा कार्बन डाइऑक्साइड के परिवहन में विशेष माध्यम का काम करता है। 2. (क) अनावृष्टि से तात्पर्य है ऐसी अवधि से है जिसमें वर्षा के अभाव के कारण जलीय असंतुलन की गंभीर समस्या पनप जाती है तथा जलापूर्ति करने वाले सभी स्त्रोत सूख जाते हैं। **अनावृष्टि की उत्पत्ति के निम्नलिखित कारण होते हैं :-** सामान्य से कम वर्षा होना। जल के प्राकृतिक संसाधनों के रख-रखाव में कमी। वृक्षों तथा वनों की अंधाधुंध कटाई। जल संभ्रण की तकनीकी का अभाव व उसके पालन में कमी। 3. **अनावृष्टि के निम्नलिखित प्रभाव होते हैं :-** असहनीय जल संकट उत्पन्न हो जाता है। खेतों की मिट्टी अत्यधिक शुष्क हो जाती है तथा उसमें फसलों को उगाना असंभव-सा हो जाता है। पशु जलाभाव के कारण बीमार पड़ जाते हैं तथा पशुधन की गंभीर हानि होती है। मृदा में उपस्थित बीजों का अंकुरण नहीं हो पाता है। भूमिगत जल का गंभीर रूप से शोषण होता है। बेरोजगारी की समस्या उत्पन्न होती है। ऐसे क्षेत्रों का स्थायी अथवा अस्थायी रूप से मरुस्थलीय भूमि में परिवर्तित होना अनावृष्टि की कठोरता पर निर्भर करता है। 4. **बाढ़ के निम्नलिखित प्रभाव होते हैं :-** बड़े पैमाने पर लोग बेघर हो जाते हैं। मानव, जंतुओं और पौधों के जीवन की गंभीर रूप से हानि होती है। संचार एवं परिवहन की सुविधाएँ बर्बाद हो जाती हैं। मवेशियों की जल में डूब कर मृत्यु हो जाती है। मृदा की ऊपरी परत की गंभीर हानि होती है। जलीय पौधों तथा जंतु गंभीर रूप से प्रभावित होते हैं। खेतों में खड़ी फसलें नष्ट हो जाती हैं। 5. जल सरंक्षण का अर्थ है जल का सदुपयोग करना। जल हमारी मूल आवश्यकता है, हमें जल का उपयोग सुचारु तरीके से करना चाहिए, इसे व्यर्थ नहीं बहाना चाहिए। **जल सरंक्षण के निम्नलिखित उपाय हैं :-** घर में विविध कार्यों में जल का प्रयोग नियोजित ढंग से करें। जल बचाने के लिए फव्वारों का उपयोग कम से कम करें। जल संभ्रण की तकनीकी का प्रयोग करें। घरों में नलों को खुला न छोड़े। नल एवं जल वहन हेतु लगायी गई पाइपों को रिसाव की स्थिति से सुरक्षित रखें। छतों तथा अन्य स्थानों पर बनायी गई जल की टंकियों के ऊपरी बहाव की पूर्णत: रोकथाम करें। 6. वर्षा जल संभ्रण ऐसी विधि है जिसके अंतर्गत वर्षा के दौरान उसके जल को रोककर उसे गैर-बरसाती मौसम में उपभोग करने के लिए संग्रहित कर लिया जाता है। वर्षा जल का सतह पर संग्रहण करना- यह एक परंपरागत तकनीक एवं संरचना हैं, इसके अंतर्गत घरों की छतों से आने वाले वर्षा जल को एकत्र कर लिया जाता है। जल को पाइपों द्वारा

तालाबों में संग्रहित कर लेते हैं तथा वर्षा ऋतु के बाद इस जल का उपयोग किया जाता है। इस जल को उपयोग से पूर्व निस्यंदित करना पड़ता है। भूमिगत जल के पुनर्भराव हेतु- इस तकनीकी के अंतर्गत वर्षा जल को संग्रहित करने वाली विकास नालियों को सीधे मैदान के अंदर जाने दिया जाता है। यह वर्षा जल संभ्रण की नयी तकनीक है। 7. भू-जल से हमारे पीने के पानी की कमी दूरी होती है। भू-जल के कारण फसलें भी अच्छी होती है। **(ग)** 1. ग 2. क 3. घ 4. ङ 5. ख **(घ)** 1. (✓) 2. (✓) 3. (✗) 4. (✓) 5. (✓) 6. (✗) 7. (✓) 8. (✓) **क्रियाकलाप –** छात्र स्वयं करें।

अध्याय- 17 वायु

(क) 1. वायु सभी जंतुओं के श्वसन के लिए अनिवार्य है, इसके बिना वे जीवित नहीं रह सकते हैं। 2. **हम वायु को विविध प्रकार से अनुभव कर सकते हैं :-** जब वायु प्रवाहित होती है तो वृक्षों की पत्तियाँ हिलती हैं। प्रवाहित वायु में गीले वस्त्रों को किसी रस्सी पर टाँगा जाता है तो वह प्रवाहित वायु की दिशा में हिलते अथवा गति करते दिखाई देते हैं। प्रचंड वेग से प्रवाहित होने वाली वायु वृक्षों को उखाड़ फेंकती है। 3. प्रवाहित वायु वस्त्रों में उपस्थित जल को वाष्पीकृत कर जलवाष्प में बदल देती है जिसके कारण गीले वस्त्र सूख जाते हैं। 4. पृथ्वी के चारों तरफ विद्यमान वायु का यह सघन आवरण वायुमंडल कहलाता है। 5. वायु में उपस्थित जलवाष्प की मात्रा स्थिर नहीं होती है। इसकी मात्रा एक स्थान से अन्य स्थान पर भिन्न पायी जाती है। इतना ही नहीं इसकी मात्रा दिन व रात में भी भिन्न हो सकती है। 6. यदि हम जलती हुई मोमबत्ती को किसी पात्र से ढक देते हैं तो कुछ समय बाद वह बुझ जाती है क्योंकि पात्र में ऑक्सीजन समाप्त हो जाने के कारण वह जल नहीं पाती है। 7. सभी सजीव वस्तुएँ साँस द्वारा ऑक्सीजन ग्रहण करते हैं। 8. वायु द्वारा घेरे गए कुल स्थान का लगभग एक बटा पाँच (1/5) भाग नाइट्रोजन गैस का है। **हॉट प्रश्न –** 1. तीन मोमबत्तियाँ लो। उन्हें मेज पर रखकर एक साथ जलाओ। दो मोमबत्तियों को दो भिन्न आकार वाले जारों से ढक दो। जबकि एक मोमबत्ती बिना ढके ही जलने दो। थोड़ी देर बाद देखेंगे कि ढकी हुई मोमबत्तियाँ बुझ गई और जो बिना ढकी हुई थी वह जल रही है। इससे यह पता चलता है कि वायु जलने में सहायता करती है। 2. जिस वायु को हम श्वास द्वारा ग्रहण करते है वह पृथ्वी धरातल के चारों ओर उपस्थित गैसों का एक सघन आवरण है। यह आवरण अंतरिक्ष में लगभग 1000 कि.मी. की ऊँचाई तक विस्तृत पाया जाता है। पृथ्वी के चारों तरफ विद्यमान वायु का यह सघन आवरण वायुमंडल कहलाता है। **(ख)** 1. **हम वायु को विविध प्रकार से अनुभव कर सकते हैं :-** जब वायु प्रवाहित होती है तो वृक्षों की पत्तियाँ हिलती हैं। प्रवाहित वायु में गीले वस्त्रों को किसी रस्सी पर टाँगा जाता है तो वह प्रवाहित वायु की दिशा में हिलते अथवा गति करते दिखाई देते हैं। प्रचंड वेग से प्रवाहित होने वाली वायु वृक्षों को उखाड़ फेंकती है। 2. जिस वायु को हम ग्रहण करते हैं वह पृथ्वी धरातल के चारों ओर उपस्थित गैसों का एक सघन आवरण है। यह आवरण अंतरिक्ष में लगभग 1000 किमी. की ऊँचाई तक विस्तृत पाया जाता है। पृथ्वी के चारों तरफ विद्यमान वायु का यह सघन आवरण, वायुमंडल कहलाता है। **वायुमंडल का महत्त्व :-** मौसम से संबंधित सभी परिवर्तन वायुमंडल में ही घटित होते है। यह पृथ्वी पर उपयुक्त तापमान बनाए रखने में सहायता करता है। 3. वायु के प्रमुख घटक निम्नलिखित हैं :- जलवाष्प- वायु में उपस्थित जलवाष्प की मात्रा स्थिर नहीं होती है। इसकी मात्रा एक स्थान से अन्य स्थान पर भिन्न पायी जाती है। इतना ही नहीं इसकी मात्रा दिन व रात में भी भिन्न हो सकती है। ऑक्सीजन- वायु में उपस्थित ऑक्सीजन सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण गैस है। इसे सभी सजीव वस्तुएँ साँस द्वारा ग्रहण करती हैं। वायु में उपस्थित यह ऑक्सीजन गैस वस्तुओं के जलने में भी सहायक होती है। नाइट्रोजन- वायु में उपस्थित नाइट्रोजन गैस पौधों की वृद्धि के लिए अनिवार्य होती है। वायु द्वारा घेरे गए कुल स्थान का लगभग 1/5 भाग नाइट्रोजन गैस का है। कार्बन डाइऑक्साइड- मनुष्य एवं जंतु ऑक्सीजन ग्रहण करते हैं और कार्बन डाइऑक्साइड मुक्त करते हैं। इसके विपरीत पौधे अपना भोजन बनाते समय प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया के दौरान कार्बन डाइऑक्साइड ग्रहण करते हैं और ऑक्सीजन को मुक्त करते हैं। 4. ऑक्सीजन जलने में सहायक होती है। एक मोमबत्ती लीजिए। उसे जलाओ और एक जार से ढक दो। थोड़ी देर बाद मोमबत्ती बुझ जाती है क्योंकि जार में उपस्थित ऑक्सीजन मोमबत्ती द्वारा उपयोग कर ली जाती है। जैसे ही ऑक्सीजन की उपस्थित मात्रा समाप्त हो जाती है, मोमबत्ती बुझ जाती है। इससे पता चलता है कि ऑक्सीजन गैस वस्तुओं के जलने में सहायक होती है। 5. **वायु के उपयोग निम्नलिखित हैं :-** वायु सभी जंतुओं एंव पेड़-पौधों के श्वसन के लिए अनिवार्य है। वायु जलने में मदद करती है। वायु में उपस्थित ऑक्सीजन गैस जलने में सहायक होती है। संपीडित वायु को वाहनों की ट्यूबों में भरते हैं। जिससे वे सरलता से गति कर सकें। वायु का प्रयोग विविध कृषि उत्पादों जैसे- अनाजों, दालों आदि को सुखाने के लिए करते हैं। गीले वस्त्रों को सुखाने के लिए वायु आवश्यक है। प्रवाहित वायु वस्त्रों में उपस्थित जल को वाष्पीकृत कर जलवाष्प में बदल देती है। पक्षी वायु में उड़ते हैं। यह उन्हें आकाश में अधिक ऊँचाई तक उड़ने में मदद करती है। हाइड्रोलिक प्रैस एवं हाइड्रोलिक लिफ्ट में संपीडित वायु का प्रयोग होता है। 6. वायु गरम होने पर फैलती है। एक गत्ते का डिब्बा लो। इसमें A तथा B दो छिद्र करो। छिद्र A के नीचे एक जलती हुई मोमबत्ती रखो।इसके दूसरे छिद्र B पर एक अंतर्दाही कागज का टुकड़ा रखो। जलती हुई मोमबत्ती के निकट वायु गरम तथा हल्की हो जाती है। यह ऊपर उठती है तथा छिद्र से बाहर निकलने लगती है। छिद्र B से ठंडी वायु मोमबत्ती की तरफ बहती है। इस अंतर को धुएँ की गति के माध्यम से देखा जा सकता है। 7. जब मरुस्थल के ऊपर वायु गरम होकर ऊपर उठती है तो उसका स्थान घेरने के लिए दूरतम क्षेत्रों से वायु उस ओर दौड़ती है। जब यह ठंडी वायु गरम मरुस्थल के ऊपर से गुजरती है तो यह भी गरम होकर ऊपर उठती है। यह प्रक्रिया लू अर्थात् ग्रीष्म ऋतु में प्रचंड वेग से चलने वाली गरम एवं शुष्क हवाओं का कारण बनती है। **(ग)** 1. ख 2. घ 3. छ 4. ङ 5. ज 6. ग 7. च 8. क **(घ)** 1. नाइट्रोजन- 78% 2. ऑक्सीजन- 21% 3. कार्बन डाइआक्साइड- 0.03% व से 0.004% अन्य गैसें- 0.9% **(ङ)** 1. घटक 2. वायुमंडल 3. स्थिर 4. ऑक्सीजन 5. नाइट्रोजन गैस 6. हानिकारक, धूलिकण 7. संपीडित 8. पक्षी 9. परागण 10. फैलती **(च)** 1. ब 2. अ 3. ब 4. अ 5. ब **क्रियाकलाप –** छात्र स्वयं करें।

कक्षा - 7

अध्याय 1. भोजन तथा पोषण

(क) 1. ऐसे सभी मूल क्रियाकलाप जिन्हें जीवधारी अपने शरीर में संपन्न करते हैं, जैव क्रियाएँ कहलाती हैं। उदाहरण- सभी जीवधारी भोजन को खाते हैं, उसे पचाते तथा पचे हुए भोजन को ग्रहण करते हैं। 2. जन्तुओं में निहित वह प्रक्रिया जिसके तहत वे ऊर्जा की प्राप्ति के लिये भोजन को ग्रहण एवं उपयोग करते हैं ताकि शारीरिक विकास अथवा वृद्धि हो सके, पोषण कहलाता है। 3. हरे पौधे स्वपोषित इसलिये कहलाते हैं, क्योंकि वे अपना भोजन स्वयं सूर्य के प्रकाश पर निर्भर रह कर बनाते हैं। 4. प्रकाश संश्लेषण के दौरान पौधों से ऑक्सीजन गैस अपशिष्ट के रूप में मुक्त होती है। 5. प्रकाश संश्लेषण के लिये सूर्य का प्रकाश, क्लोरोफिल, जल व कार्बन डाइऑक्साइड अनिवार्य है। 6. प्रकाश संश्लेषण का महत्त्व :- (i) इसके अंतर्गत पौधे अपना भोजन संश्लेषित करने में समर्थ बनते है। (ii) यह वायुमंडल में ऑक्सीजन तथा कार्बन डाइऑक्साइड का संतुलन बनाये रखने में महत्त्वपूर्ण योगदान देता है। 7. ऐसे जन्तु जो प्रत्यक्षत: पौधों को अपना भोजन बनाते हैं, शाकाहारी जन्तु कहलाते हैं। उदाहरणत: गाय, भैंस, घोड़ा, हिरण, हाथी आदि। 8. ऐसे परजीवी जो अपने मेज़बान जंतु के शरीर के अंदर रहते हैं, अंत: परजीवी कहलाते हैं। उदाहरणत: गोल कृमि, फीता कृमि आदि। 9. ऐसे जीवधारी अथवा पौधे जो प्रकाश संश्लेषण द्वारा अपना भोजन स्वयं बनाने में अक्षम होते हैं, वे अपने लिये भोजन मृत तथा गले सड़े पादप एवं जांतविक पदार्थों से जुटाते हैं। इनकी पोषण की यह विधि मृतजीवी पोषण के नाम से जानी जाती है। 10. ऐसे हरे-भरे पौधे जो अपने भोजन का कुछ भाग मृदा एवं वायुमण्डल से तो कुछ भाग विविध प्रकार के कीटों से प्राप्त करते हैं। ऐसे पौधे कीटभक्षी पौधे कहलाते हैं। उदाहरण: ड्रीसेरा, घटपर्णी आदि। 11. घटपर्णी नामक पौधे की विशेषताएँ :- (i) इस पौधे की पत्तियाँ घड़ों के रूप में रूपांतरित पायी जाती हैं। (ii) जब कोई कीट इस तरह के किसी घड़े में प्रवेश करता है तो उसके मुख पर उपस्थित ढक्कन स्वत: बंद हो जाता है और कीट उसमें उपस्थित महीन बालों में फँस जाता है। (iii) बाद में इस कीट को घड़े में स्त्रावित होने वाले पाचक रस द्वारा पचा लिया जाता है। 12. लाइकेन में शैवाल तथा फफूँद सहजीवी पोषण का उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। **हॉट प्रश्न –** 1. ऐसे जंतु जो पौधों एवं जन्तुओं दोनों को अपना भोजन बनाते हैं, सर्वाहारी जन्तु कहलाते है। 2. गमले में लगे पौधे को लीजिये जिसकी पत्तियाँ रंग-बिरंगी हो। ऐसा पौधा क्रॉटन या कोलियस का हो सकता है। इसकी रंग-बिरंगी पत्तियों में एक ही पत्ती में हरे रंग व अन्य रंगों के भाग पाए जाते है। क्लोरोफिल केवल उनके हरे भाग में ही उपस्थित पाया जाता है। इस पौधे को 5 या 6 घंटे सूर्य के प्रकाश में रख दीजिए। इसके बाद इस पौधे से कोई पत्ती तोड़ लीजिए। उसकी रूपरेखा कागज पर खींच लीजिए। अब इस पत्ती का स्टार्च परीक्षण कीजिए। पत्ती का गैर हरित भाग स्टार्च की उपस्थिति को क्यों नही दर्शाता है? इस प्रयोग से यह निष्कर्ष सामने आता है कि स्टार्च की रचना मात्र पत्ती के हरे भाग में ही होती है। अतः हम कह सकते है कि प्रकाश संश्लेषण के लिए क्लोरोफिल का होना अनिर्वाय है। **(ख)** 1. पोषण से तात्पर्य :- जन्तुओं में निहित वह प्रक्रिया जिसके तहत वे ऊर्जा की प्राप्ति के लिये भोजन को ग्रहण एवं उपयोग करते हैं ताकि शारीरिक विकास अथवा वृद्धि हो सके, पोषण कहलाता है। **पोषण के प्रकार :-** पोषण मुख्यत: दो प्रकार के होते हैं - (i) स्वपोषित पोषण (ii) परपोषित पोषण **स्वपोषित पोषण :-** स्व का अर्थ है- स्वयं तथा पोषित का अर्थ है- आहार। अत: स्वपोषित पोषण का अर्थ पोषण की ऐसी प्रक्रिया से है, जिसके अंतर्गत कोई जीवधारी किसी बाह्य ऊर्जा स्त्रोत की मदद से अपना भोजन स्वयं बनाने में सक्षम होता है। **परपोषित पोषण :-** पर का अर्थ है- दूसरा अथवा भिन्न एवं पोषित का अर्थ है- आहार। अत: यह पोषण की ऐसी प्रक्रिया है जिसके तहत कोई जीवधारी अपना भोजन स्वयं बनाने में सक्षम नहीं होता है, बल्कि वह अपने भोजन के लिये अन्य जीवधारियों पर निर्भर करता है। 2. ''प्रकाश संश्लेषण के लिये कार्बन डाइऑक्साइड की जरूरत होती है।'' इसे सिद्ध करने के लिये हम एक प्रयोग करेंगे- हम सबसे पहले गमले में लगे किसी स्वस्थ पौधे का चयन करेंगे। इस पौधे को स्टार्च रहित बनाने के लिये 2-3 दिनों तक किसी अँधेरे कोने में रखेंगे। अब किसी मजबूत डाँट वाली बोतल में कॉस्टिक पोटाश का कुछ संतृप्त घोल लेंगे। अब पौधे से कोई एक पत्ती चुनेंगे और इसके आधे भाग को बोतल में घुसा देगें, जबकि शेष आधे भाग को बाहर ही रहने देंगे। कॉस्टिक पोटाश कार्बन डाइऑक्साइड को अवशोषित कर लेता है, इसलिये बोतल में उपस्थित पत्ती के भाग को कार्बन डाइऑक्साइड प्राप्त नहीं होगी और इसके विपरीत इस पत्ती के बोतल से बाहर वाले भाग को कार्बन डाइ ऑक्साइड निरन्तर मिलेगी। इसके बाद बोतल पर कार्क लगाकर पौधे को कुछ समय के लिये सूर्य के प्रकाश में रख देंगे। थोड़ी देर बाद जाँच करेंगे कि पत्ती का कौन-सा भाग काला व कौन-सा भाग नीला रंग दर्शाता है ? निष्कर्ष स्वरूप यह स्पष्ट होता है कि पत्ती के जिस भाग को कार्बन डाइऑक्साइड निरंतर प्राप्त हुई वह तो नीला रंग दर्शाने लगा तथा जिस भाग को कार्बन डाइऑक्साइड प्राप्त नहीं हुई वह काला पड़ गया। अत: स्पष्ट होता है कि प्रकाश संश्लेषण के लिये कार्बन डाइऑक्साइड की जरूरत होती है। 3. पौधे प्रकाश संश्लेषण के दौरान ऑक्सीजन गैस मुक्त करते हैं। इसकी जाँच करने के लिये हम एक प्रयोग करेंगे- सर्वप्रथम हाइड्रला का कोई ताजा पौधा लेंगे तथा उसे किसी जल से भरे बीकर में रखेंगे। अब उस पौधे के ऊपर कोई कीप उलटी करके रख देंगे। उस कीप के वृंत पर कोई जल से भरी परखनली को उलटा करके रखेंगे। सम्पूर्ण तंत्र को सूर्य के प्रकाश में रखने से हाइड्रला के पौधे से बुलबुले उठने लगते हैं, ये बुलबुले ऑक्सीजन गैस के हैं, जिनकी उत्पत्ति प्रकाश संश्लेषण के दौरान होती है ये ऑक्सीजन गैस हाइड्रला का पौधा उत्पन्न करता है। अत: स्पष्ट होता है कि प्रकाश संश्लेषण के दौरान पौधे ऑक्सीजन गैस मुक्त करते हैं। 4. जन्तुओं को उनकी भोजन संबंधी आदतों के आधार पर निम्नलिखित वर्गों में बाँटा जा सकता है- **शाकाहारी** - ऐसे जंतु जो प्रत्यक्षत: पौधों को अपना भोजन बनाते हैं, शाकाहारी जंतु कहलाते हैं। उदाहरणत: गाय, भैंस, घोड़ा, हिरण, हाथी आदि। **मांसाहारी** - ऐसे जंतु जो अन्य जंतुओं का मांस खाते हैं, मांसाहारी जंतु कहलाते हैं। उदाहरणत: बाघ, सिंह, चीता आदि। **सर्वाहारी** - ऐसे जंतु जो पौधों एवं जंतुओं दोनों को अपना भोजन बनाते हैं। सर्वाहारी जंतु कहलाते हैं। उदाहरणत: कौआ, तिलचट्टा, कुत्ता आदि। मनुष्य भी एक सर्वाहारी प्राणी है। 5. कुकुरमुत्ता तथा कवक अपना पोषण प्राप्त करने के लिये मृतजीवी पोषण विधि का प्रयोग करते हैं। इस विधि में पौधे प्रकाश संश्लेषण द्वारा अपना भोजन स्वयं बनाने में सक्षम नहीं होते है। ये पौधे अपने लिये भोजन मृत तथा सड़े-गले पादप एवं जांतविक पदार्थों से जुटाते हैं। कवक मृतोपजीवी होती है, यह गले-सड़े, ब्रैड अथवा अन्य भोजन पदार्थों पर संपोषित होती है। यह पोषण कवक तंतुओं की मदद से ग्रहण करती है, जो ब्रैड के अंदर से पोषक पदार्थों को अवशोषित करते हैं। 6.घटपर्णी - घटपर्णी नामक पौधे की पत्तियाँ घड़ों के रूप में रूपांतरित पायी जाती हैं। जब कोई कीट इस तरह के किसी घड़े में प्रवेश करता है तो उसके मुख पर उपस्थित ढक्कन स्वत: बंद हो जाता है। वह कीट घड़े में उपस्थित महीन बालों में फँसकर रह जाता है। बाद में इस कीट को घड़े से स्त्रावित होने वाले पाचक रस द्वारा पचा लिया जाता है। इस तरह घटपर्णी कीटभक्षी पौधा अपना पोषण सहजीवी पोषण विधि द्वारा बनाता है। **ब्लैडरवर्ट** - ब्लैडरवर्ट

नामक कीटभक्षी पौधे में कीटभक्षी कोष उपस्थित होते हैं। इसके प्रत्येक कोष पर एक वाल्व अथवा कपाट का नियंत्रण रहता है जो प्रोटोजोआ, वाटरफली, कीट लारवा से समृद्ध जल को ग्रहण करने के लिये खुलता है। उसके उपरांत यह कोष जल को तो बाहर निष्कासित कर देता है, किंतु जीवों को पचाने के लिये अपने अवशोषक रोमों (बालों) का प्रयोग करता है। अत: यह जल में उपस्थित कीटों को फाँस कर सरलता से पचा लेता है और इस तरह यह अपना पोषण करता है। **सनड्यू** - सनड्यू नामक पौधा कीटों को फाँसने के लिये अपनी चिपचिपी श्लेष्मा का प्रयोग करता है। इसकी पत्तियाँ घनी रोम ग्रंथियों से ढ़की रहती हैं। यही श्लेष्मा को स्त्रावित करते है। इस श्लेष्मा में कीटों को पचाने वाला रस विद्यमान पाया जाता है। इस प्रकार से यह पौधा अपना भोजन बनाता है। **(ग) 1. प्रकाश संश्लेषण** - हरे पौधों द्वारा अपना भोजन बनाने की प्रक्रिया प्रकाश संश्लेषण कहलाती है। **2. परपोषी** - ऐसे जीव जो अपने भोजन के लिये अन्य जीवों पर निर्भर करते हैं, परपोषी कहलाते हैं। **3. स्वपोषी** - ऐसे जीव जो अपना भोजन स्वयं बनाते हैं, स्वपोषी कहलाते हैं। **4. सर्वाहारी** - ऐसे जंतु जो पौधों एवं जंतुओं दोनों को अपना भोजन बनाते हैं, सर्वाहारी कहलाते हैं। **5. मृतोपजीवी** - ऐसे जन्तु जो अपना भोजन मृत एवं गले-सड़े पौधों एवं जंतुओं से ग्रहण करते हैं, मृतोपजीवी कहलाते हैं। **6. सहजीवी पोषण** - सहजीवी पोषण एक ऐसी विधि है, जिसके तहत कोई दो जीवधारी परस्पर साथ रहते हैं तथा एक दूसरे की भोजन संबंधी आवश्यकताएँ पूरी करते हैं। **7. कीटभक्षी पौधे** - ऐसे हरे-भरे पौधे जो अपने भोजन का कुछ भाग मृदा एवं वायुमण्डल से तो कुछ भाग विविध प्रकार के कीटों से प्राप्त करते हैं। ऐसे पौधे कीटभक्षी पौधे कहलाते हैं। उदाहरण: ड्रीसेरा, घटपर्णी आदि। **(घ)** छात्र स्वयं करें। **(ङ)** 1. जूँ 2. गोल कृमि 3. ब्लैडरवर्ट 4. कुकुरमुत्ता, कवक 5. खटमल 6. पौधे **क्रियाकलाप** – छात्र स्वयं करें।

अध्याय 2. भोजन का उपयोग

(क) 1. वह प्रक्रिया जिसके तहत ऊर्जा प्राप्ति के लिये भोजन का उपयोग किया जाता है, ताकि शारीरिक विकास अथवा वृद्धि हो सके, पोषण कहलाता है। 2. प्राणिसम भोजी विधि में निहित पाँच प्रमुख चरण निम्न है - (i) अंतर्ग्रहण (ii) पाचन (iii) अवशोषण (iv) समीभवन (v) मलत्याग 3. अंतर्ग्रहण एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसके तहत शरीर में भोजन को ग्रहण किया जाता है। विविध जंतुओं में भोजन ग्रहण करने के लिये विशेष अंग पाये जाते हैं। 4. पाचन - विविध पाचक रसों की मदद से भोजन के जटिल तत्त्वों को सरल तत्त्वों में बदलना, पाचन कहलाता है। 5. समीभवन एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसके तहत अवशोषित भोज्य पदार्थों का प्रयोग शरीर की वृद्धि अथवा विकास एवं ऊर्जा की उत्पत्ति के लिये किया जाता है। 6. पैरामीशियम की पोषण विधि - पैरामीशियम एक एककोशिकीय जंतु है। इसके शरीर पर बाल जैसी कठोर संरचनाएँ विद्यमान होती हैं। इन्हें रोमिकायें कहते हैं। समस्त शरीर पर उपस्थित ये सूक्ष्म रोमिकायें भोजन के अंतर्ग्रहण में सहायता करती है। इन रोमिकाओं की स्थिर गति भोज्य पदार्थों को इसकी मुख जैसी संरचना की ओर धकेलती है, जो भोजन को तुरंत ग्रहण कर लेती है। 7. अमीबा में पोषण विधि - अमीबा भी एक एककोशिकीय जंतु है। यह अपने भोजन को अंदर ग्रहण करने के लिये अपने कूटपाद नामक काल्पनिक पैरों का प्रयोग करता है। इसके ये काल्पनिक पैर भोजन के सूक्ष्म टुकड़ों को मुख गुहिका की ओर फेंकने में मदद करते हैं। इसके ये कूटपाद एकजुट होकर एक छोटी-सी गुहिका बनाते हैं, जो इसकी भोजन रिक्तिका कहलाती हैं इस रिक्तिका के अंदर भोजन पाचक रसों की सहायता से पचता है। उसे ऊर्जा की प्राप्ति के लिये अथवा फिर अन्य उद्देश्यों के लिये अवशोषित एवं समीभवन कर लिया जाता है। इस प्रकार अमीबा द्वारा अपना भोजन ग्रहण किया जाता है। 8. हाइड्रा की पोषण विधी - यह एक साधारण बहुकोशिकीय जंतु है। इसके मुख के चारों ओर असंख्य स्पर्शक विद्यमान होते हैं। इसके स्पर्शक भोजन के अंतर्ग्रहण में सहायक होते है। इसके स्पर्शक लघु अथवा छोटे जलीय जंतुओं को फांस लेते हैं तथा उन्हें अपनी डंकदार कोशिकाओं की सहायता से मौत के घाट उतार देते है। शरीर के अंदर की गुहिका में कोशिकायें पाचक रस को स्त्रावित करती हैं, जो उसमें उपस्थित भोजन को पचाने का काम करता है। पचे हुये भोजन को इस गुहिका की भित्तियों द्वारा अवशोषित कर लिया जाता है। बाद में इसका कोशिकाओं में समीभवन कर लिया जाता है। 9. मानव पाचन तंत्र की रचना करने वाले प्रमुख अंग निम्न है- मुख, ग्रास नली, आमाशय, छोटी आँत, यकृत्त एवं बड़ी आँत। 10. पाचन तंत्र का प्रारंभ हमारी ग्रास नली से होता है तथा यह मलद्वार तक विस्तारित पाया जाता है जो एक लंबी तथा खोखली नाल की रचना करता है, जिसे आहार नाल कहते है। 11. अग्र चर्वणक दाँतों की संख्या 8 तथा चर्वणक दाँतों की संख्या भी 8 ही होती है। 12. रोमंथकों के आमाशय के 4 प्रकोष्ठ होते हैं- प्रथम आमाशय, द्वितीय आमाशय, तृतीय आमाशय तथा चतुर्थ आमाशय। **हॉट प्रश्न** – 1. छात्र स्वयं करें। 2. अमीबा एक कोशिकीय जंतु है। यह अपने भोजन को अंदर ग्रहण करने के लिए अपने कूटपाद नामक काल्पनिक पैर भोजन के सूक्ष्म टूकड़ों को मुख गुहिका की ओर फेंकने में मदद करता है। **(ख)** 1. प्राणीसम पोषण से तात्पर्य - पचे हुये भोजन में निहित समस्त पौष्टिक अंश शरीर द्वारा अवशोषित कर लिये जाते हैं एवं इस प्रकार समस्त जैव प्रक्रियाओं को समुचित मात्रा में ऊर्जा प्राप्त हो जाती है। अपचित भोजन शरीर में अपशिष्ट के रूप में संचित होता रहता है तथा इसे बाहर मुक्त कर दिया जाता है। अधिकांश जंतुओं एवं मनुष्यों में निहित पाये जाने वाली पोषण विधि, प्राणिसम भोजन पोषण विधि कहलाती है। इसमें सम्मिलित पाँच प्रमुख चरण इस प्रकार है- (i) अंतर्ग्रहण - यह एक ऐसी प्रक्रिया हैं, जिसके तहत शरीर में भोजन को ग्रहण किया जाता है। विविध जंतु भोजन को विविध प्रकार से ग्रहण करते हैं। उनके शरीर में उस कार्य को संपन्न करने के लिये विशेष अंग पाये जाते हैं। (ii) पाचन - शरीर में ग्रहण किये गये भोजन को शरीर द्वारा उपयोग किये जाने के लिये जटिल रूप से साधारण रूप में परिवर्तित करना अनिवार्य होता है। भोजन को उसके जटिल रूप (स्टार्च, प्रोटीन तथा वसा) से सरल पदार्थों अथवा तत्त्वों (यथा ग्लूकोज, अमिनों अम्ल, वसा अम्ल आदि) में बदलने से संबंधित प्रक्रिया जिसमें अनेक प्रकार के पाचक रसों का प्रयोग किया जाता है, पाचन कहलाती है। (iii) अवशोषण - यह एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसके तहत पचे हुये पोषक पदार्थों को छोटी आँत से अवशोषित कर रक्त परिसंचरण तंत्र द्वारा शरीर के विविध भागों में पहुँचाया जाता है। (iv) समीभवन - यह एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसके तहत अवशोषित भोज्य पदार्थों का प्रयोग शरीर की वृद्धि अथवा विकास एवं ऊर्जा की उत्पत्ति के लिये किया जाता है। (v) मलत्याग - अपचित भोज्य पदार्थ अर्थात् अपशिष्ट उत्पादों को मल के रूप में शरीर से बाहर मुक्त कर दिया जाता है। इस प्रक्रिया को मल उत्सर्जन की प्रक्रिया कहते हैं। 2. भोजन को मुख के जरिये ग्रहण किया जाता है। मुख में जीभ, दाँत एवं विविध लार ग्रंथियाँ पायी जाती हैं। दाँत भोजन को चबाकर छोटे-छोटे टुकड़ों अथवा खण्डों में विभाजित करने में मदद करते हैं। मानव मुख में उपस्थित दाँत विविध आकार एवं आकृतियों के पाये जाते हैं। ये विभिन्न प्रकार के कार्य संपन्न करते हैं। प्रत्येक दाँत मसूढ़े में एक पृथक गुहिका के रूप में सुदृढ़ रहता है। जब हम अपने दाँतों की मदद से भोजन को चबाते हैं, तो हमारे मुख में उपस्थित लार ग्रंथियों से लार स्त्रावित होकर भोजन में मिलती रहती हैं। हमारी

जीभ भोजन में लार को मिलाने तथा उसे अंदर निगलने में विशेष रूप से मदद करती है। हमारे मुख से भोजन आहार नली के माध्यम से पाचन तंत्र में प्रवेश कर जाता है। 3. दाँतों के प्रकार - सामान्यत: चार प्रकार के दाँत पाये जाते हैं- कृंतक, श्वदंत, अग्र, चर्वणक व चर्णवक (i) इन दाँतों की संख्या आठ होती है। ये प्रत्येक जबड़े में चार-चार की संख्या में पाये जाते हैं। दाँत पैने, सपाट शीर्ष वाले छैनी के आकार के होते हैं। चूँकि ये दाँत नुकीले तथा पैने होते हैं, इसीलिये इन्हें काटने वाले दाँत कहते है। (ii) श्वदंत - कृतकों के पार्श्व में स्थित नुकीले दाँत श्वदंत के नाम से जाने जाते है। ये ऊपर तथा नीचे के दोनों जबड़ों में कृंतकों की बगल में स्थित पाये जाते हैं। क्योंकि ये दाँत नुकीले तथा पैने होते हैं, इसीलिये इनका प्रयोग भोजन को चीरने अथवा फाड़ने के लिये किया जाता है। (iii) अग्र-चर्वणक - ये दाँत जबड़े में दो-दो की संख्या में होते है। ये छोटे खाँचों अथवा कूटकों से युक्त सपाट सतह वाले दाँत होते हैं। इसका प्रयोग भोजन को चबाने अथवा पीसने के लिये किया जाता है। (iv) चर्वणक - हमारे दोनों जबड़ों में दोनों तरफ के अंतिम तीन-तीन दाँत चर्वणक कहलाते हैं। ये दाँत सर्वाधिक मजबूत दाँत होते हैं। ये अग्र-चर्वणकों की तुलना में अधिक चौड़े तथा मेड़दार होते है। 4. दाँतों के क्षय की समस्या - हमें भोजन खाने के बाद अपने दाँतों को ठीक से साफ करना चाहिये। यदि भोजन के उपरांत दाँतों को ठीक से साफ नहीं किया जाता है, तो दाँतों में फँसे भोजन के कणों में अनेक तरह के हानिकारक जीवाणु वृद्धि करने लगते हैं। इन जीवाणुओं के कारण दाँतां पर प्लॉक नामक हानिकारक परत बनने लगती है। ये दाँतों में उपस्थित शर्करा को वियोजित करके अम्ल उत्पन्न करते हैं। यह अम्ल धीरे-धीरे दंत वल्क अथवा दाँतों की कठोर बाह्य परत को हानि पहुँचाता है। इसे ही दंतक्षय कहते हैं। 5. यकृत तथा अग्नाशय - यकृत तथा अग्नाशय पाचन तंत्र से संबंधित विशेष अंग होते हैं। यकृत ऐसे पाचक रस स्त्रावित करता है, जो हमारे भोजन को पचाने में मदद करते हैं। ये इस पित्ताशय नामक थैली में पाये जाते हैं। अग्नाशय से इंसुलिन नामक तत्त्व का स्त्रावण होता है। इससे पाचक रस भी स्त्रावित होते हैं। इंसुलिन हमारे शरीर में शर्करा के स्तर को नियंत्रित बनाये रखते हैं। 6. भोजन के छोटी आँत में प्रवेश करने पर पचे हुये भोजन का अवशोषण होता है तथा वह उसके उपरांत रक्त तंत्र में प्रवाहित हो जाता है। इस तरह पोषक पदार्थ शरीर के प्रत्येक भाग में पहुँच जाते हैं। 7. रोमंथकों की पाचन प्रक्रिया - रोमंथक सपाट खुरों वाले जंतु होते है जो आंशिक रूप से पचाये गये भोजन को अपने आमाशय से पुन: अपने मुख में लाकर उसे अच्छी तरह चबाते हैं तथा फिर से निगल लेते हैं। इनके द्वारा की जाने वाली यह प्रक्रिया जुगाली करना कहलाती है। ऐसे जंतुओं को जुगाली करने वाले जंतु भी कहते है। ऐसे जंतु पौधों से प्राप्त भोजन को अधूरा चबाते हुये निगल लेते हैं। इस तरह से इनका भोजन प्रथम आमाशय में प्रवेश कर जाता है। यहाँ पर जीवाणु तथा प्रोटोजोटा भोजन में उपस्थित सेलुलोज पर क्रियाशील होते हैं। उसके बाद अधपचा भोजन द्वितीय आमाशय में प्रवेश कर जाता है। यहाँ से इसे पुन: मुख में लाकर चबाया तथा फिर निगल लिया जाता है। उसके बाद यह तृतीय आमाशय में प्रवेश कर जाता हैं यहाँ भोजन में उपस्थित अधिकांश जल को अवशोषित कर लिया जाता है। उसके उपरांत यह जल रहित भोजन चौथे आमाशय में प्रवेश करता है। यहाँ पर स्त्रावित होने वाले पाचक रस भोजन में उपस्थित प्रोटीनों को पचा लेते हैं। उसके उपरांत यह भोजन अर्धतरल के रूप में छोटी आँत में प्रवेश करता है जहाँ इसका सामान्य रूप से पाचन होता है तथा पचित उत्पादों को अवशोषित कर लिया जाता है। **(ग)** छात्र स्वयं करें। **(घ)** 1. ङ 2. घ 3. च 4. क 5. ख 6. ग **(ङ)** 1. असत्य 2. सत्य 3. असत्य 4. असत्य 5. सत्य 6. सत्य **(च)** 1. 8 2. 4 3. 8 4. 4 5. 4

क्रियाकलाप – छात्र स्वयं करें।

अध्याय 3. ऊन तथा रेशम

(क) 1. ऐसे रेशे जो हमें पौधों एवं जंतुओं से प्राप्त होते है, उन्हें प्राकृतिक रेशे कहते हैं। उदाहरण: ऊन, रेशम आदि। 2. ऊन एक सर्वाधिक लोकप्रिय जांतविक रेशा है। 3. अंगोरा ऊन की प्राप्ति अंगोरा नामक खरगोश से होती है। 4. पशमीना ऊन हिमालयी क्षेत्र में पायी जाने वाली बकरी से प्राप्त की जाती है। इसे खरगोश की समूर अथवा ऊन के साथ मिलाकर एक प्रकार का मिश्रित ऊन तैयार किया जाता है। पशमीना ऊन असाधारण रूप से मुलायम, लचीला तथा रंगाई के अनुकूल होता है। 5. अंगोरा नामक बकरी से मोहेयर ऊन की प्राप्ति होती है। 6. भेड़ के शरीर से ऊन उतारने की प्रक्रिया को कतरना कहते हैं। 7. जब सूत से ऊनी कपड़ा बुन लिया जाता है तो उसकी गुणवत्ता का निरीक्षण करना अनिवार्य होता है। इसके अंतर्गत कपड़े से टूटे हुए धागों तथा रंगों की विविधता आदि की पहचान की जाती है। इस प्रक्रिया से उत्तीर्ण होने वाले कपड़े को परिष्करण की प्रक्रिया से गुजारा जाता है, जिसके तहत कपड़े की लंबाई एवं चौड़ाई दोनों में पड़ी सिलवटों को हटाया जाता है। **8. ऊन के उपयोग** – (i) ऊन का उपयोग स्वेटर, शाल, गुलुबंद, कंबल आदि बनाने में किया जाता है। (ii) ऊन के बने नमदों (संपीड़ित ऊन) का प्रयोग प्यानों की तारों के कवच के रूप में करते हैं। (iii) भारी मशीनों तथा स्टीरियों स्पीकरों में अनावश्यक शोर से बचे रहने के लिये ऊन के बने नमदों का प्रयोग किया जाता है। 9. रेशम की प्राप्ति रेशम के कीट द्वारा बनाये गये कोकून से होती है। 10. जंगली रेशमकीटों के अंतर्गत टसर, ऐरी, ओक टसर, मूगा आदि आते हैं। **11. रेशम के उपयोग** – (i) रेशम का उपयोग पुरूषों तथा महिलाआं के लिये सुंदर अथवा आकर्षक परिधान बनाने के लिये किया जाता है। (ii) रेशम का प्रयोग पैराशूट, साइकिलों के टायर, बुलेट प्रूफ वेस्ट आदि बनाने में किया जाता है। **हॉट प्रश्न** – 1. रेशम का प्रयोग पुरुषों तथा महिलाओं के लिए सुन्दर तथा आकर्षक परिधान बनाने के लिए किया जाता है। रेशम का प्रयोग पैराशूट, साइकिलों के टायर, बुलेट प्रूफ वेस्ट आदि बनाने के लिए किया जाता है। 2. मोटे रेशों को ऐंठ कर उनसे रस्सी जैसी संरचनाएँ तैयार कर ली जाती है। इस प्रक्रम को पूनी बनाना कहते है। **(ख)** 1. ऊन - ऊन एक सर्वाधिक लोकप्रिय जांतविक रेशा है। ऊन से बने वस्त्र गरम प्रकृति के होते हैं तथा इससे बने वस्त्रों को शीत ऋतु में पहनते हैं। ऊन विविध प्रकार के होते हैं। ऊन के कुछ प्रमुख प्रकार निम्नलिखित है- **अंगोरा ऊन** – यह एक ऐसा ऊन है, जिसे अंगोरा नामक खरगोश से प्राप्त किया जाता है। यह ऊन भेड़ से प्राप्त होने वाले ऊन की तुलना में लगभग आठ गुना अधिक नरम तथा मुलायम होता है। **मेरिनों ऊन** – इस ऊन की प्राप्ति मेरिनों नामक भेड़ से होती है। यह भेड़ों से मिलने वाला सबसे कोमल तथा महीन ऊन होता है। मेरिनो ऊन अत्यधिक लहरदार एवं ऐठित ऊन होता है। **पशमीना ऊन** – (क़) पशमीना ऊन हिमालयी क्षेत्र में पायी जाने वाली बकरी से प्राप्त की जाती है। इसे खरगोश की समूर अथवा ऊन के साथ मिलाकर एक प्रकार का मिश्रित ऊन तैयार किया जाता है। पशमीना ऊन असाधारण रूप से मुलायम, लचीला तथा रंगाई के अनुकूल होता है। **मोहेयर ऊन** – इस ऊन की प्राप्ति अंगोरा नामक बकरी से होती है। यह ऊन अपेक्षाकृत लंबा एवं चमकीला होता है। यह ऊन अत्यधिक मुलायम तथा मजबूत भी होता है। 2. ऊन के रेशों से ऊनी कपड़ा बनाने की प्रक्रिया का प्रथम चरण पालन तथा प्रजनन है- **पालन तथा प्रजनन** – हमारे देश के विविध भागों में भेड़-पालन का व्यवसाय अत्यधिक विस्तृत स्तर पर पाया जाता है। भेड़ एक शाकाहारी

जंतु है। यह पौधों की पत्तियाँ अथवा घास को अपने भोजन के रूप में ग्रहण करती है। भेड़ चरने में विशेष रूचि रखती है। भेड़ को चराने के अतिरिक्त अन्य प्रकार का चारा भी उपलब्ध करवाया जाता है, जैसे मक्का, दालें, ज्वार, खली, खनिज, मिश्रण आदि। शीत ऋतु के दौरान भेड़ों को घरों के अंदर रखा जाता है तथा उन्हें अनाज, पत्तियाँ एवं सूखा चारा खिलाया जाता है। भेड़ों की कुछ नस्लों से बेहतर किस्म का ऊन प्राप्त होता है। इन भेड़ों की चयनित नस्ल को अच्छी नस्ल की भेड़ों के सहयोग से शंकर प्रजनन द्वारा प्राप्त किया जाता है। **3. ऊन की धुलाई** - कच्चा ऊन अत्यधिक चिकना तथा गंदगी से भरा होता है। क्योंकि इसमें बड़ी मात्रा में पसीना तथा अन्य प्रकार की गंदगी निहित होती है। अत: इसे साफ करना अनिवार्य होता है। कच्चे ऊन को साफ करने के लिए साबुन के पानी से भरी नालियों की एक विस्तृत श्रृंखला में से गुजारा जाता है। पहली नाली को 60^{0} से. के उच्च तापमान पर स्थापित किया जाता है। उसके बाद इस कच्चे ऊन को ठंडे जल में खंगाला जाता है। इस चरण के तहत ऊन में उपस्थित गंदगी एवं समस्त चिकनाई अलग हो जाती है। इसके उपरांत इस ऊन पर प्रसाधकों एवं साबुन का प्रयोग किया जाता है। उसके बाद इस ऊन को रोलरों एवं रंजकों में से गुजारा जाता है। वर्तमान अभिमार्जन का अधिकांश कार्य आधुनिक मशीनों द्वारा किया जाता है। **4. रेशम** - रेशम भी प्रकृति से प्राप्त एक जांतविक रेशा है। यह अपने प्राकृतिक सौंदर्य तथा मजबूती के रूप में विश्व भर में जाना जाता है। रेशम को सभी तंतुओं की रानी की संज्ञा दी जाती है। इसका रेशा त्रिभुजाकार प्रीज्म जैसी संरचना लिये होता है। रेशम के कपड़े पर पड़ने वाला प्रकाश विविध कोणों में परिवर्तित होता है तथा एक विशेष प्रकार के झिलमिलाहट के कारण ही रेशम से बना कपड़ा अथवा वस्त्र बहुत अच्छे दाम पाता है। रेशम की प्राप्ति रेशम के कीट द्वारा बनाये गये कोकून से होती है। **5. रेशम का इतिहास** - रेशम कीट का मूल स्थान चीन था। रेशम का विकास तथा खोज चीन वासियों द्वारा की गई थी। प्रारंभ में रेशम के रेशों से कपड़ा बुनने की प्रक्रिया एक रहस्य थी। इसका ज्ञान मात्र चीन के लोगों को ही था। 206 ई. पू. से 220 ई. बाद चीन साम्राज्य का विस्तार हुआ तथा रेशम का निर्यात फारस को किया जाने लगा। चीन से सीरिया, एशिया माइनर तथा भारत के बीच रेशम के व्यापार के लिये एक मार्ग का विकास हुआ, जिसे रेशम मार्ग के नाम से जाना जाता था। इन देशों में चौथी शताब्दी ई. पू. के प्रारंभ में ही रेशम का उपयोग शुरू हो गया था। मध्यकाल तक इसके उपयोग का विस्तार इटली, स्पेन, फ्रांस तथा इंग्लैंड जैसे राष्ट्रों तक में हो गया था। **6. कोकून से रेशम प्राप्त करने की प्रक्रिया** - इसके तहत सर्वप्रथम कोकूनों को पानी में उबालते हैं अथवा भट्टियों में पचारित करते हैं। कीटों को गरमी देकर मारा जाता है। कोकून में रीलिंग या फिल्चर की प्रक्रिया द्वारा रेशम के रेशे प्राप्त किये जाते है। कोकूनों को जल में गरम करने पर उनमें विद्यमान गोंद जैसा पदार्थ पानी में घुल जाता है। उसके उपरांत रेशे ढीले पड़ जाते हैं तथा पाँच से आठ कोकूनों के रेशों को आपस में जोड़कर ऐंठा जाता है। उसके उपरांत कई रेशों को परस्पर मिलाकर धागों के रूप में कात लेते हैं। इन धागों को एक रील के रूप में लपेट लिया जाता है। इस तरह से प्राप्त रेशम, कच्चा रेशम कहलाता है। **7. जंगली रेशम** - जंगली रेशम का उत्पादन गैर-पालतू रेशमकीटों से किया जाता है। जंगली रेशम घरेलू रेशम की तुलना में भिन्न संरचना एवं रंगों में पाई जाती है। जंगली रेशमकीट मध्यम से बड़े आकार वाले पाये जाते हैं। जंगली रेशमकीटों को जंगली वृक्षों पर पाला जाता है। किंतु इनका पालन एवं प्रजनन पूर्णत: मानवीय नियंत्रण में ही रहता है। इनके कोकून घरेलू रेशमकीट द्वारा बनाये गये कोकूनों की तुलना में बड़े आकार के होते हैं। जंगली रेशमकीटों के अंतर्गत टसर, ऐरी, ओक टसर, मूगा आदि रेशमकीट पाले जाते हैं। मूगा रेशमकीट मुख्यत: उत्तर-पूर्वी भारत विशेषत: असम में पाला जाता है। इस तरह की रेशम को इसी अर्ध घरेलू रेशमकीट द्वारा स्थापित किया जाता है। इस तरह की रेशम का रेशा समस्त प्राकृतिक देशों में सर्वाधिक मजबूत रेशा होता है। **(ग)** 1. ऊन का उपयोग - (i) ऊन का उपयोग स्वेटर, शाल, गुलुबंद, कंबल आदि बनाने में किया जाता है। (ii) ऊन के बने नमदों (संपीड़ित ऊन) का प्रयोग प्यानों की तारों के कवच के रूप में करते हैं। (iii) भारी मशीनों तथा स्टीरियो स्पीकरों में अनावश्यक शोर से बचे रहने के लिये ऊन के बने नमदों का प्रयोग किया जाता है। (iv) ऊनी रेशे मजबूत तथा लचीले होते हैं, इसीलिये इनका प्रयोग कालीन बनाने के लिये किया जाता है। ऊन को कालीन बनाने के लिये आदर्श रेशा माना जाता है। (v) रद्दी अथवा पुरानी ऊन का प्रयोग सस्ते ऊनी वस्त्र, शालें व कंबल बनाने के लिये किया जाता है। **2. रेशम के उपयोग** - (i) रेशम का उपयोग पुरूषों तथा महिलाओं के लिये सुंदर अथवा आकर्षक परिधान बनाने के लिये किया जाता है। (ii) रेशम का प्रयोग पैराशूट, साइकिलों के टायर, बुलेट प्रूफ वेस्ट आदि बनाने में किया जाता है। **(घ) 1. जांतविक रेशे** - जंतुओं से प्राप्त रेशे जांतविक रेशे कहलाते हैं। **2. अंगोरा ऊन** - यह एक ऐसा ऊन है, जिसे अंगोरा नामक खरगोश से प्राप्त किया जाता है। यह ऊन भेड़ से प्राप्त होने वाले ऊन की तुलना में लगभग आठ गुना अधिक नरम तथा मुलायम होते हैं। **3. मोहेयर ऊन** - इस ऊन की प्राप्ति अंगोरा नामक बकरी से होती है। यह ऊन अपेक्षाकृत लंबा एवं चमकीला होता है। यह ऊन अत्यधिक मुलायम तथा मजबूत भी होता है। 4. रद्दी अथवा पुरानी ऊन का प्रयोग सस्ते ऊनी वस्त्र, शालें व कंबल बनाने के लिये किया जाता है। **5. रेशमकीट पालन** - बड़े पैमाने पर रेशम के उत्पादन को ध्यान में रखते हुये रेशम के कीटों को पालना, रेशमकीट पालन कहलाता है। **6. बुक** - कच्चे रेशम को छोटे बंडलों में बांधना बुक कहलाता है। **(ङ)** छात्र स्वयं करें। **(च)** 1. रेशों 2. पशमीना 3. बर्र, मोटे रेशे 4. संपीड़ित ऊन, कवच 5. चीन 6. 2, 4.5 7. जंगली 8. कीट **क्रियाकलाप** – छात्र स्वयं करें।

अध्याय 4. ऊष्मा प्रवाह तथा तापमान

(क) 1. तापमान एक तुलनात्मक माप होती है जो इस बात का ज्ञान कराती है कि कौन-सी गरम अथवा कौन-सी वस्तु ठंडी होती है। 2. हमारे शरीर से ऊष्मा का किसी वस्तु में प्रवाहित होना अथवा किसी वस्तु से हमारे शरीर में ऊष्मा प्रवाहित होना ऊष्मा का प्रवाह कहलाता है। 3. दो विभिन्न प्रकार के तापमानों की वस्तुओं के परस्पर सम्पर्क में आने पर होने वाला ऊष्मा का प्रवाह, ऊष्मा स्थानान्तरण कहलाता है। 4. थर्मामीटर के लिये पारे के दो महत्त्व - (i) पारा थर्मामीटर की दीवारों पर चिपकता नहीं है। (ii) यह चमकीला, रजत-श्वेत तरल होता है, जिसे सरलता से देखा जा सकता है। 5. प्रयोगशाला थर्मामीटर एक लिक्विड इन ग्लास (काँच में तरल) थर्मामीटर होता है। यह तरल अर्थात् पारा गर्म होने पर नली के साथ-साथ फैलता है। 6. वह प्रक्रिया जिसके अंतर्गत ऊष्मा एक तत्त्व से अन्य तत्त्व में निम्न तापमान की दिशा में अपने माध्यम के तत्त्वों की वास्तविक गति के बिना ही स्थानांतरित होती है, चालन कहलाती है। 7. ऊष्मा कुचालक पदार्थों के नाम- प्लास्टिक, लकड़ी, काँच आदि। 8. वह घटना जिसके कारण किसी माध्यम के तत्त्व वास्तव में ऊर्जा के स्त्रोत की ओर गति करते हैं एवं फिर ऊष्मा ऊर्जा को अवशोषित करने के बाद इससे दूर गति कर जाते हैं, संवहन कहलाता है। 9. संवहन के व्यावहारिक उपयोग - शीत ऋतु में होटलों व घरों में

सवंहन धाराओं के सिद्धांत के आधार पर कमरों को गर्म रखा जाता है। **10. विकिरण के दो व्यावहारिक उपयोग** - (i) विभिन्न भवनों अथवा इमारतों की पुताई सफेद रंग से की जाती है ताकि वे ग्रीष्म ऋतु में ठंडी बनी रह सकें। क्योंकि हल्के रंग सूर्य से आने वाली अधिकांश ऊष्मा ऊर्जा को परावर्तित करा देते हैं। (ii) ग्रीष्म ऋतु में हल्के रंग के वस्त्र पहनना राहत प्रदान करता है, क्योंकि ये सूर्य से आने वाली अधिकांश ऊर्जा को परावर्तित कर देते हैं। **हॉट प्रश्न** – 1. थर्मस फ्लास्क में धातु के आवरण में एक कार्क लगा होता है तथा इसकी गर्दन एक रबड़ के छल्लें से सुरक्षित बना दी जाती है। फ्लास्क तथा बर्तन के बीच वायु, कार्क एवं रबड़ ऊष्मा के कुचालक होते है। अतः वे चालन अथवा संवहन द्वारा ऊष्मा के स्थानांतरण पर प्रतिबंध लगाए रखते है। अतः फ्लास्क के अन्दर की ऊष्मा बाहर तथा बाहर की ऊष्मा अन्दर प्रवाहित नहीं हो पाती है। यही कारण है कि निर्वात अथवा थर्मस फ्लास्क में गरम पेय लंबे समय तक गरम रहता है। 2. बर्फ में बड़ी मात्रा में वायु अवरुद्ध रहती है जो रोधक के रूप में कार्य करती है। यही कारण है कि इसके अंदर उत्पन्न की गई ऊष्मा बाहर मुक्त नही हो पाती है। अतः वह निरन्तर गरम बना रहता है। **(ख)** 1. ठंडक तथा गरमाहट की तुलनात्मकता - सर्वप्रथम तीन समान आकार के पात्र लेंगे। पहले पात्र में गरम, दूसरे पात्र में गुनगुना तथा तीसरे पात्र में ठंडा जल भरेंगे। अब अपना एक हाथ गरम जल में तथा दूसरा ठंडे जल में डालेंगे। उसके बाद दोनों हाथों को गुनगुने जल में डालेंगे। हम पायेंगे कि गरम जल में डाला गया हाथ, ठंडे जल में डाले गये हाथ की तुलना में अधिक ठंडा महसूस होता है। अत: इससे स्पष्ट होता है कि ठंडक तथा गरमाहट आपस में तुलनात्मक शब्द है। **2. थर्मामीटर** - परिमाणात्मक तापमान को मापने के लिये प्रयोग किया जाने वाला यंत्र थर्मामीटर कहलाता है। **थर्मामीटर के प्रकार** - थर्मामीटर मुख्यत: दो प्रकार का होता है- (i) प्रयोगशाला थर्मामीटर - प्रयोगशाला थर्मामीटर एक लिक्विड इन ग्लास (काँच में तरल) थर्मामीटर होता है। यह तरल अर्थात् पारा गर्म होने पर नली के साथ-साथ फैलता है। पारे के ऊपर कोई वायु नहीं होती है, इसी कारण नली के साथ-साथ यह सरलता से गति करता है। प्रयोगशाला थर्मामीटर पर उपस्थित पैमाना सेल्सियस पैमाना कहलाता है। (ii) चिकित्सकीय थर्मामीटर - मानव शरीर के तापमान को मापने के लिये चिकित्सकीय थर्मामीटर का प्रयोग किया जाता है। इस थर्मामीटर द्वारा 35° से. से 42° से. तक का तापमान मापा जा सकता है, क्योंकि स्वस्थ मनुष्य के शरीर का तापमान 37^{0} से. होता है और इस थर्मामीटर के द्वारा 42° से. से ज्यादा का तापमान नहीं मापा जा सकता है। 3. चालन - ऊष्मा तत्त्वों के वास्तविक विस्थापन के बिना ही ठोसों में संचरित होती है, वह प्रक्रिया जिसके अंतर्गत ऊष्मा एक तत्त्व से अन्य तत्त्वों की वास्तविक गति के बिना ही स्थानांतरित होती है, चालन कहलाती है। यह बात विशेष रूप से ध्यान रखने योग्य है कि जब किन्हीं दो वस्तुओं या किसी समान वस्तु के दो भाग समान तापमान प्राप्त कर लेते हैं तो चालन ठहर या थम जाता है। किसी एक वस्तु से अन्य वस्तु में ऊष्मा के स्थानांतरण के लिये अनिवार्य है कि दोनों वस्तुओं का परस्पर संपर्क होना चाहिये तथा दोनों के तापमान में भी भिन्नता होनी चाहिये। 4. वायु ऊष्मा की कुचालक है अथवा सुचालक ? स्पष्ट करने के लिये हम एक प्रयोग करेंगे- एक कठोर काँच की परखनी लेंगे। उसमें मोम का छोटा-सा टुकड़ा डालेंगे। परखनली के मुख पर कार्क लगाएँगें। परखनली को उसके मुख के निकट गरम करेगें। हम देखेंगे कि कुछ मिनटों के बाद कार्क विस्फोटित हो जाता है अथवा दूर उड़ जाता है तथा मोम पिघलता नहीं है। इसके पीछे कारण यह है कि परखनली के अंदर उसके मुख के निकट की वायु गरम होती है तथा वह दबाव डालती है तथा इसी कारण परखनली के मुख पर लगा कार्क विस्फोट के साथ दूर उड़ जाता है, जबकि मोम पिघलता नहीं है। इससे स्पष्ट होता है कि वायु ऊष्मा की सुचालक नहीं है, अर्थात् वायु ऊष्मा की कुचालक है। **5. प्राकृतिक संवहन धारा** - स्थलीय तथा सागरीय समीर प्राकृतिक संवहनीय धारा के सजीव उदाहरण हैं। दिन के समय स्थल भाग सागर की तुलना में अधिक मात्रा में ऊष्मा का अवशोषण करता है। गरम वायु हल्की होकर उठती है तथा इसका स्थान घेरने के लिये सागर की ठंडी वायु इस ओर प्रवाहित होती है। यह सागरीय समीर का कारण बनती है। इसके विपरीत रात के समय स्थल भाग सागर की तुलना में अतिशीघ्रता से ठंडा होता है। सागर से वायु गरम होकर ऊपर की ओर उठती है तथा इसके द्वारा बनाये गये रिक्त-स्थान को भरने के लिये स्थल की ओर से ठंडी वायु सागर की ओर प्रवाहित होती है, यह स्थलीय समीर कहलाती है। **6. विकिरण** - विकिरण ऊष्मा के स्थानांतरण की एक ऐसी प्रक्रिया होती है जिसमें ऊष्मा बिना किसी प्रवेशीय माध्यम वाले अभिकर्ता के प्रत्यक्षत: एक से अन्य स्थान पर यात्रा करती है। विकिरण की इस प्रक्रिया के द्वारा स्थानांतरित होने वाली ऊष्मा विकिरित ऊष्मा अथवा ताप विकिरण कहलाती है। यद्यपि इसमें चालन एवं संवहन की भाँति माध्यम विशेष भूमिका निभाता है तथापि यह अपने में से गुजरने वाली ऊष्मा को अवशोषित कर सकता है। अत: यह स्वयं गरम होता है। यह विकिरण के माध्यम से सूर्य से ऊर्जा प्राप्त करते हैं। जबकि बीच में लगभग 150 मिलियन किलोमीटर का रिक्त-स्थान विद्यमान है। हम रूम हीटर के सामने खड़े होते हैं तो हम इस प्रक्रिया के माध्यम से ऊष्मा प्राप्त करते हैं। किसी गरम बर्तन को ठंडा करने के लिये लौ से दूर रखा जाता है, क्योंकि यह विकिरण द्वारा ऊष्मा को प्रतिवेश में स्थानांतरित करती है। **7. निर्वात फ्लास्क** - निर्वात अथवा थर्मस फ्लास्क में गरम तरल गरम जबकि ठंडा तरल ठंडा बना रहता है। यह सामान्यत: ऊष्मा के चालन, संवन तथा विकिरण को रोककर अथवा उसमें कमी करके संभव हो पाता है। यह साधारणत: दोहरी दीवारों वाला एक काँच का बर्तन होता है। काँच स्वत: ऊष्मा का कुचालक होता है। यह ऊष्मा के स्थानांतरण की अनुमति नहीं देता है। इसकी दोनों दीवारों के बीच रिक्त-स्थान बना रहता है। इसी कारण इसे निर्वात फ्लास्क का नाम दिया जाता है। इसमें निर्वात अथवा रिक्त-स्थान, चालन तथा संवहन पर रोक लगाकर ऊष्मा के स्थानांतरण पर प्रतिबंध लगा देता है। इसके अतिरिक्त इसकी भीतरी दीवार की बाह्य सतह तथा बाह्य दीवार की भीतरी सतह रजतन की गई होती है। अत: विकिरण के कारण होने वाली ऊष्मा की हानि से बचाव हो सकता है। **(ग)** छात्र स्वयं करें। **(घ)** छात्र अध्यापक की सहायता से स्वयं करें। **(ङ)** छात्र स्वयं करें। **(च)** 1. स 2. अ 3. स 4. ब 5. स **क्रियाकलाप** – छात्र स्वयं करें।

अध्याय 5. अम्ल, क्षार तथा उदासीन तत्त्व

(क) 1. तत्त्वों को तीन प्रमुख वर्गों में विभाजित किया जाता है- अम्लीय, क्षारीय तथा उदासीन तत्त्व। 2. सूचक - सूचक प्राकृतिक रूप से उत्पन्न जटिल तत्त्व होते हैं, जो अन्य तत्त्वों के संपर्क में आने पर अपने रंग को बदल लेते हैं। उदाहरणत: लिटमस, फिनालफ्थेलीन तथा मेथिल आरेंज। 3. ऐसे तत्त्व अथवा पदार्थ जिनका स्वाद खट्टा होता है, अम्लीय तत्त्व कहलाते हैं। 4. ऐसे अम्ल जो प्राकृतिक उत्पादों से प्राप्त होते हैं, जैविक अम्ल कहलाते हैं। सिट्रिक अम्ल मुख्यत: नींबू, संतरे, अंगूरों में निहित पाया जाता है। 5. उग्र अम्लों के दो उदाहरण - सल्फयुरिक अम्ल, नाइट्रिक अम्ल, हाइड्रोक्लोरिक अम्ल, फास्फोरिक अम्ल आदि। 6. ऐसे अम्ल जो बहुत कम संख्या में हाइड्रोजन के आयन

उत्पन्न करते है। उन्हें मंद अम्ल कहते है। 7. **अम्ल के गुणधर्म** - (i) अम्लों का स्वाद खट्टा होता है। (ii) अम्ल यौगिक होते हैं तथा उनमें हाइड्रोजन निहित होती है। (iii) सभी अम्ल लिटमस को नीले तथा मिथेल आरेंज को लाल रंग में परिवर्तित कर देते हैं। (iv) उग्र अथवा शक्तिशाली अम्ल हमारी त्वचा पर संक्षरित क्रिया को दर्शाते हैं तथा त्वचा पर दर्दनाक फफोले उत्पन्न करते हैं। 8. समाक्षर वे तत्त्व होते है जो स्वाद में कड़वे एवं त्वचा पर चिकने स्पर्श का अनुभव कराने वाले होते है। उदाहरणत: सोडियम हाइड्रोक्साइड (NaOH), पोटेशियम हाइड्रोक्साइड (KOH) आदि। **9. क्षारकों के गुणधर्म** - (i) इनका स्वाद कड़वा होता है। (ii) क्षारकों अथवा क्षारों का विलयन साबुन जैसा स्पर्श देने वाला अथवा चिकना होता है। (iii) सभी क्षारक विलयन में हाइड्रोक्साइड आयनों (OH) को प्रदान करते हैं। (iv) क्षारक हमारी त्वचा के संपर्क में आने पर दर्द भरे फफोले उत्पन्न करते हैं। 10. समस्त क्षारक नमक तथा जल बनाने के लिए अम्लों के साथ अभिक्रिया करते है। यह प्रक्रिया उदासीनीकरण के नाम से जानी जाती है। **11. उदासीनीकरण के दो लाभ-** (i) चींटी तथा मधुमक्खी के डंक में फार्मिक अम्ल होता है। इसके इलाज के लिये साबुन रगड़ना चाहिये। इससे अम्ल व क्षार की अभिक्रिया के परिणामस्वरूप उदासीनीकृत की प्रक्रिया संपन्न होती है तथा दर्द कम हो जाता है। (ii) अनेक खाद्य पौधे अम्लीय मृदा में ठीक से वृद्धि नहीं कर पाते हैं। ऐसे पौधों से पर्याप्त मात्रा में उत्पादन प्राप्त करने के लिये किसान अम्लीय मृदा को उदासीनीकृत करते हैं। वे इस उद्देश्य के लिये उसमें चूना मिलाते है। **हॉट प्रश्न** – 1. ऐसे तत्व अथवा पदार्थ जिनका स्वाद खट्टा होता है, अम्ल कहलाते है। अम्ल दो प्रकार के होते है – (अ) जैविक अम्ल – ऐसे अम्ल जो प्राकृतिक उत्पादों से प्राप्त होते है, जैविक अम्ल कहलाते है। (ब) खनिज अम्ल – पृथ्वी की भू-पर्पटी में निहित खनिजों से बनाए अथवा तैयार किए जाने वाले अम्ल खनिज अम्ल कहलाते है। 2. कुछ समाक्षार जल में विलेय होते है। ये विलेय समाक्षार, क्षार कहलाते है। इनका स्वाद कड़वा होता है। क्षारक हमारी त्वचा के संपर्क में आने पर दर्द भरे फफोले उत्पन्न करते है। सभी क्षारक लाल लिटमस को नीले रंग में तथा मेथिल नारंगी को पीले रंग में परिवर्तित करते है। **(ख) 1. सूचक** - सूचक प्राकृतिक रूप से उत्पन्न जटिल तत्त्व होते हैं, जो अन्य तत्त्वों के संपर्क में आने पर अपने रंग बदल लेते है। **सामान्य सूचक** - कुछ सामान्य सूचक हैं, जैसे लिटमस, फिनालफ्थेलीन तथा मेथिल आरेंज। निस्यंदक (फिल्टर) कागज की पतली आयताकार पट्टियों को लिटमस के विलयन में डुबोइये। उसके बाद उन्हें सुखा लेगें। इस तरह हमें लिटमस कागज की पट्टियाँ प्राप्त हो जायेंगी। अब यह हमारा सूचक होगा। **2. अम्ल** - एसिड (अम्ल) एक लेटिन शब्द है, जिसका अर्थ खट्टा है। अर्थात् ऐसे तत्त्व अथवा पदार्थ जिनका स्वाद खट्टा होता है, अम्लीय तत्त्व कहलाते हैं। **अम्ल के सामान्य गुणधर्म** - (i) अम्लों का स्वाद खट्टा होता है। (ii) अम्ल यौगिक होते हैं तथा उनमें हाइड्रोजन निहित होती है। (iii) सभी अम्ल लिटमस को नीले तथा मिथेल आरेंज को लाल रंग में परिवर्तित कर देते हैं। (iv) उग्र अथवा शक्तिशाली अम्ल हमारी त्वचा पर संक्षारित क्रिया को दर्शाते हैं तथा त्वचा पर दर्दनाक फफोले उत्पन्न करते हैं। (v) अम्ल जल में विलेय होते हैं, जब किसी अम्ल को जल में घोलते हैं तो तनु अम्ल बनता है एवं साथ ही साथ ऊष्मा मुक्त होती है। **3. क्षारक** - क्षारक वे तत्त्व होते हैं, जो स्वाद में कड़वे एंव त्वचा पर चिकने स्पर्श का अनुभव कराने वाले होते हैं। कुछ समाक्षर जल में विलेय होते हैं, वे क्षार कहलाते हैं। **क्षारकों का नामकरण** - क्षारकों के नाम धातु से प्रारंभ होते हैं तथा उनका अंत आक्साइड अथवा हाइड्रोक्साइड से होता है। सामान्य रूप से प्रयोग होने वाले कुछ क्षारक है- सोडियम हाइड्रोक्साइड (NaOH), पोटेशियम हाइड्रोक्साइड (KOH), कैल्शियम हाइड्रोक्साइड [$Ca(OH)_2$], अमोनियम हाइड्रोक्साइड (NH_4OH) तथा एल्युमिनियम हाइड्रोक्साइड [AL (OH_3] **4. क्षारकों के सामान्य उपयोग** - (i) सोडियम हाइड्रोक्साइड (NaOH) सामान्य रूप से कास्टिक सोडे के रूप में जाना जाता है। इसका उपयोग साबुन बनाने तथा कपड़ा एवं प्लास्टिक उद्योगों में किया जाता है। यह तेल शोध कारखानों में भी इस्तेमाल होता है। इसके अतिरिक्त इसके प्रयोग से दवाईयाँ, कागज एवं लुग्दी भी बनाई जाती है। (ii) अमोनियम हाइड्रोक्साइड का प्रयोग उर्वरक यथा अमोनियम नाइट्रेट आदि बनाने में होता है। इसके अलावा इसके उपयोग से वस्त्र धोने का सोडा, नायलान, प्लास्टिक आदि भी बनाये जाते हैं। (iii) मेंग्नेशियम हाइड्रोक्साइड एवं एल्युमिनियम हाइड्रोक्साइड का इस्तेमाल हमारे पेट में उत्पन्न अम्लता की स्थिति से निपटने के लिये प्रत्यम्ल के रूप में किया जाता है। (iv) कैल्शियम हाइड्रोक्साइड का उपयोग ब्लीचिंग पाउडर बनाने में भी करते है। (v) एल्युमिनियम हाइड्रोक्साइड का अग्निशामकों में फनन कारक के रूप में उपयोग होता है। **5. उदासीन तत्त्व** - उदासीन तत्त्व वे तत्त्व होते हैं, जो सामान्य सूचकों के रंग में किसी तरह का परिवर्तन नहीं करते हैं। कुछ सामान्य उदासीन तरल है, जैसे- जल, एल्कोहल, इथर, बेंजेन, पेट्रोल, केरोसिन आदि। हाइड्रोजन, नाइट्रोजन, आक्सीजन, मीथेन गैसें तथा कुछ ठोस, जैसे चीनी, नमक, चूना-पत्थर आदि भी इसी प्रकार के तत्त्वों के उदाहरण है। **6. उदासीनीकरण** - समस्त क्षारक नमक तथा जल बनाने के लिये अम्लों के साथ अभिक्रिया करते हैं। यह प्रक्रिया उदासीनीकरण के नाम से जानी जाती है। क्षारक एवं अम्ल परस्पर अभिक्रिया करते हैं एवं एक दूसरे के प्रभावों को निष्क्रिय करते हैं। **उदासीनीकरण अभिक्रियाओं के दो उदाहरण** -

(i) $\underset{\text{हाइड्रोक्लोरिक अम्ल (अम्ल)}}{HCl} + \underset{\text{सोडियम हाइड्रोक्साइड (क्षारक)}}{NaOH} \longrightarrow \underset{\text{सोडियम क्लोराइड (नमक)}}{HNaCl} + \underset{\text{(जल)}}{H_2O}$

(ii) $\underset{\text{सल्फ्युरिक अम्ल (अम्ल)}}{H_2SO_4} + \underset{\text{साडियम हाइड्रोक्साइड (क्षारक)}}{2\,NaOH} \longrightarrow \underset{\text{सोडियम सल्फेट (नमक)}}{Na_2SO_4} + \underset{\text{(जल)}}{2H_2O}$

7. उदासीनीकरण के सामान्य उपयोग- (i) हमारा आमाशय हाइड्रोक्लोरिक अम्ल स्त्रावित करता है, जो पाचन में सहायक होता है। किंतु कभी-कभी आमाशय द्वारा यह अम्ल आवश्यकता से अधिक मात्रा में स्त्रावित कर दिया जाता है, जिस कारण अम्लता की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। यह पेट में अपच का कारण बनती है। इस स्थिति से निपटने के लिये मेंग्नेशियम हाइड्रोक्साइड, कैल्शियम कार्बोनेट, एल्युमीनियम हाइड्रोक्साइड से मुक्त गोली लेकर उदासीनीकृत की प्रक्रिया संपन्न की जाती है। (ii) चींटी तथा मधुमक्खी के डंक में फार्मिक अम्ल होता है। इसके इलाज के लिये साबुन रगड़ना चाहिये। इससे अम्ल व क्षार की अभिक्रिया के परिणामस्वरूप उदासीनीकृत की प्रक्रिया संपन्न होती है तथा दर्द कम हो जाता हैं। (iii) अनेक खाद्य पौधे अम्लीय मृदा में ठीक से वृद्धि नहीं कर पाते है। ऐसे पौधों से पर्याप्त मात्रा में उत्पादन प्राप्त करने के लिये किसान अम्लीय मृदा को उदासीनीकृत करने के लिये उसमें चूना मिलाते है। **(ग)** छात्र स्वयं करें। **(घ)** 1. अम्ल - एसेटिक अम्ल को खाद्य अम्ल के रूप में प्रयोग किया जाता है। इसका उपयोग भोज्य पदार्थों के परीक्षण के लिये भी किया जाता है। टार्टरिक अम्ल का प्रयोग खाने का सोडा बनाने के लिये किया जाता है। कार्बनिक अम्ल

सामान्यत: सादा या साधारण सोडा होता है। इसे चीनी तथा सिट्रिक अम्ल में मिला कर मृदु पेय तैयार किये जाते हैं। बोरिक अम्ल का प्रयोग सामान्यत: अनाज के परिरक्षण एवं आँखों को विशेषत: फ्लू नामक रोग के दौरान धोने के लिये करते हैं। 2. क्षारक कुछ समाक्षार जल में विलेय होते है, ये विलेय समाक्षार या क्षारक कहलाते है। सोडियम तथा पोटेशियम के ऑक्साइड एवं हाइड्रोक्साइड शक्तिशाली क्षारक है। 3. (i) सोडियम हाइड्रोक्साइड (NaOH) सामान्य रूप से कास्टिक सोडे के रूप में जाना जाता है। इसका उपयोग साबुन बनाने तथा कपड़ा एवं प्लास्टिक उद्योगों में किया जाता है। यह तेल शोध कारखानों में भी इस्तेमाल होता है। इसके अतिरिक्त इसके प्रयोग से दवाईयाँ, कागज एवं लुग्दी भी बनाई जाती है। (ii) अमोनियम हाइड्रोक्साइड का प्रयोग उर्वरक यथा अमोनियम नाइट्रेट आदि बनाने में होता है। इसके अलावा इसके उपयोग से वस्त्र धोने का सोडा, नायलान, प्लास्टिक आदि भी बनाये जाते है। (iii) अमेंग्नेशियम हाइड्रोक्साइड एवं एल्युमिनियम हाइड्रोक्साइड का इस्तेमाल हमारे पेट में उत्पन्न अम्लता की स्थिति से निपटने के लिये प्रत्यम्ल के रूप में किया जाता है। (iv) कैल्शियम हाइड्रोक्साइड का उपयोग ब्लीचिंग पाउडर बनाने में भी करते हैं। (v) एल्युमिनियम हाइड्रोक्साइड का अग्निशामकों में फनन कारक के रूप में उपयोग होता है। **3. उदासीनीकरण** – (i) हमारा आमाशय हाइड्रोक्लोरिक अम्ल स्त्रावित करता है, जो पाचन में सहायक होता है। किंतु कभी-कभी आमाशय द्वारा यह अम्ल आवश्यकता से अधिक मात्रा में स्त्रावित कर दिया जाता है, जिस कारण अम्लता की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। यह पेट में अपच का कारण बनती है। इस स्थिति से निपटने के लिये मेंग्नेशियम हाइड्रोसाइड, कैल्शियम कार्बोनेट, एल्युमीनियम हाइड्रोक्साइड से मुक्त गोली लेकर उदासीनीकृत की प्रक्रिया संपन्न की जाती है। (ii) चींटी तथा मधुमक्खी के डंक में फार्मिक अम्ल होता है। इसके इलाज के लिये साबुन रगड़ना चाहिये। इससे अम्ल व क्षार की अभिक्रिया के परिणामस्वरूप उदासीनीकृत की प्रक्रिया संपन्न होती है तथा दर्द कम हो जाता है। (iii) अनेक खाद्य पौधे अम्लीय मृदा में ठीक से वृद्धि नहीं कर पाते है। ऐसे पौधों से पर्याप्त मात्रा में उत्पादन प्राप्त करने के लिये किसान अम्लीय मृदा को उदासीनीकृत करने के लिये उसमें चूना मिलाते हैं। (iv) उद्योगों से उत्पन्न होने वाले अपशिष्ट को क्षारीय तत्त्वों द्वारा निपटाने से पूर्व उदासीनीकृत कर दिया जाता हैं। यदि ऐसे अपशिष्ट को बिना उपचारित किये जल राशियों में बहा दिया जाता है तो वह जलीय जंतुओं के विनाश का कारण बन सकता है। **(ङ)** छात्र अध्यापक की सहायता से स्वयं करें। **(च)** 1. संतरा 2. चूना 3. नाइट्रिक अम्ल 4. सल्फ्यूरिक अम्ल **(छ)** 1. हल्दी एक सूचक है। 2. खट्टे स्वाद वाले तत्त्व अम्लीय तत्त्व कहलाते हैं। 3. सभी क्षारक लाल लिटमस को नीले रंग में बदल देते हैं। 4. ''सल्फ्यूरिक अम्ल'' रसायनों का राजा कहलाता है। 5. उदासीन तत्त्व सामान्य सूचकों के रंग में कोई परिवर्तन नहीं दर्शाते हैं। **(ज)** 1. सत्य 2. असत्य 3. सत्य 4. सत्य 5. असत्य 6. असत्य 7. असत्य **(झ)** 1. इसका उपयोग भोज्य पदार्थों के परिरक्षण के लिये किया जाता है। 2. इसका उपयोग रसोईघरों में विद्यमान सिंक एवं अन्य स्वास्थ्य संबंधी सामान को साफ करने में किया जाता है। 3. इसका उपयोग वाहनों की बैटरियों, दवाईयाँ आदि बनाने में किया जाता है। 4. इसका प्रयोग खाने का सोडा बनाने में किया जाता है। 5. इसका प्रयोग विस्फोटक पदार्थ बनाने में किया जाता है। **क्रियाकलाप** – छात्र स्वयं करें।

अध्याय– 6 रासायनिक तत्त्व तथा अभिक्रियाएँ

(क) 1. प्रकृति में लगभग 115 शुद्ध तत्त्व विद्यमान पाए जाते हैं। 2. ऐसे तत्त्व जिसमें किसी अन्य प्रकार के रासायनिक तत्त्व नहीं मिश्रित हैं। 3. किसी अवयव या तत्त्व की सबसे छोटी इकाई जो किसी रासायनिक अभिक्रिया में भाग लेती है, परमाणु कहलाती है। 4. अवयव तीन प्रकार के होते हैं- धातुएँ, अधातुएँ व अभिजात गैसें। 5. यदि किसी तत्त्व में निम्नलिखित गुण पाए जाते हैं तो वह धातु कहलाता है। आभा अर्थात् यह चमकीला होता है अथवा इसमें धात्विक चमक निहित पायी जाती है। यह ऊष्मा या विद्युत के सुचालक होते हैं। तन्यता अर्थात् इसे तार के रूप में खींचा जा सकता है। आघातवर्ध्य, यानी इसे पीटकर चादरों के रूप में तैयार किया जाता है। यह सामान्य तापमान पर ठोस अवस्था में होता है। इसका उच्च गलनांक अथवा क्वथनांक होता है। यह प्रहार करने पर अनुनादी ध्वनि या गूँज उत्पन्न करता है। कुछ धातुएँ हैं- सोडियम, कोबाल्ट, ताँबा, निकल, लोहा आदि। 6. जॉन डाल्टन नामक रसायनज्ञ की आधुनिक व्यवस्था में प्रत्येक तत्त्व प्रदान किये गए। इनके नामकरण की आधुनिक व्यवस्था में प्रत्येक तत्त्व को उसके नाम का प्रथम अक्षर समान पाया जाता है। ऐसी अवस्था में तत्त्व को उसके दो वर्णों के रूप में दर्शाते है। संकेत का प्रथम वर्ण बड़ा जबकि दूसरा या तीसरा वर्ण छोटा रखा जाता है। 7. कुछ प्रमुख अधातुएँ हैं- हाइड्रोजन, नाइट्रोजन और ऑक्सीजन। 8. जब किसी तत्त्व के अणु में विविध तत्त्वों के दो या अधिक परमाणु निहित पाए जाते हैं तथा परस्पर एक निश्चित अनुपात में संयोजित होते हैं तो उसे किसी यौगिक का अणु कहते हैं। किसी रासायनिक यौगिक का प्रतीकात्मक रूप, रासायनिक सूत्र कहलाता है। **9. (i)** रासयनिक अभिक्रिया में भाग लेने के लिए एक या अधिक तत्व उपस्थित होने चाहिए। **(ii)** रासयनिक अभिक्रिया के तहत ऊर्जा अवशोषित अथवा मुक्त होनी चाहिए। **10.** कुछ रासायनिक अभिक्रियाओं के लक्षण अभिकर्त्ताओं के रंग में परिवर्तन के माध्यम से दिखाई देते हैं। उदाहरणत: जब हरे रंग के कॉपर कार्बोनेट को अत्यधिक मात्रा में गरम करते हैं तो कॉपर ऑक्साइड का काले रंग का अवशेष बचता है। 11. जब कोई अपेक्षाकृत अधिक सक्रिय तत्त्व कम सक्रिय तत्त्व से उसके जलीय लवण विलयन में विस्थापित होता है तो इस तरह घटित होने वाली अभिक्रिया, रासायनिक विस्थापन कहलाती है। **हॉट प्रश्न** – 1. धातुओं में आभा अर्थात् यह चमकीला होता है। अधातु में चमक अथवा आभा नहीं होती है। धातु में तन्यता अर्थात् इसे तार के रूप में खींचा जा सकता है। जबकि अधातु में तन्यता नहीं पायी जाती है। अर्थात् इसे तार के रुप में नहीं खीचा जा सकता है। 2. रूई को पानी में डूबाकर फिर उसे दो भागों में विभाजित कीजिए। इसके पहले आधे भाग को चाइना प्लेट में फैलाइए तथा उस पर पॉलिश युक्त लोहे की कुछ चमकीली कीलें रखिए। अब रूई के दूसरे भाग से इन कीलों को ढक दीजिए। अब इस संपूर्ण तंत्र को दो दिन के लिए किसी कोने में रख दीजिए। दो दिन बाद कीलों पर जंग का लाल भूरा चूर्ण दिखाई देता है। इसका कारण यह है कि आयरन आयरन ऑक्साइड बनाने के लिए ऑक्सीजन के साथ संयोजित होता है। यही रासायनिक अभिक्रिया है। **(ख)** 1. यदि किसी तत्त्व में निम्नलिखित गुण पाए जाते हैं तो वह धातु कहलाता है। आभा अर्थात् यह चमकीला होता है अथवा इसमें धात्विक चमक निहित पायी जाती है। यह ऊष्मा या विद्युत के सुचालक होते हैं। तन्यता अर्थात् इसे तार के रूप में खींचा जा सकता है। आघातवर्ध्य, यानी इसे पीटकर चादरों के रूप में तैयार किया जाता है। यह सामान्य तापमान पर ठोस अवस्था में होता है। इसका उच्च गलनांक अथवा क्वथनांक होता है। यह प्रहार करने पर अनुनादी ध्वनि या गूँज उत्पन्न करता है। कुछ धातुएँ हैं- सोडियम, कोबाल्ट, ताँबा, निकल, लोहा आदि। 2. जब एक अथवा एक से अधिक तत्त्व ऊर्जा के अवशोषण अथवा उत्सर्जन के माध्यम से रासायनिक परिवर्तन पाते हैं तथा किसी एक या अधिक नए उत्पादों की रचना करते हैं तो संयुक्त रूप से घटित होने वाला यह परिवर्तन,

रासायनिक अभिक्रिया कहलाता है। **रासायनिक अभिक्रिया हेतु अनिवार्य परिस्थितियाँ निम्नलिखित हैं :-** रासायनिक अभिक्रिया में भाग लेने के लिए एक या अधिक तत्त्व उपस्थित होने चाहिए। रासायनिक अभिक्रिया के तहत ऊर्जा अवशोषित अथवा मुक्त होनी चाहिए। रासायनिक अभिक्रिया के दौरान एक अथवा अधिक तत्त्वों की रचना होती है। 3. **रासायनिक अभिक्रिया के गुणधर्म निम्नलिखित हैं :-** गैस का निकास-किसी रासायनिक अभिक्रिया के अंतर्गत गैस का निष्कासन होता है। यदि कोई एक अभिकर्त्ता तरल या विलयन का रूप होता है, तो तरल में गैस निष्कासन का बुदबुदाहट अथवा बुलबुलों के रूप में देखा जाता है। गैस के निष्कासन को एक उर्ध्वाधर तीर (↑) के निशान द्वारा दर्शाते हैं। रंग परिवर्तन- जब कोई अपेक्षाकृत अधिक सक्रिय तत्त्व कम सक्रिय तत्त्व से उसके जलीय लवण विलयन में विस्थापित होता है तो इस तरह घटित होने वाली अभिक्रिया, रासायनिक विस्थापन कहलाती है। अवक्षेप की रचना- जब किसी विलयन में दो रसायन परस्पर अभिक्रिया करते हैं तो एक विलेय तत्त्व की रचना होती है, जो अवक्षेप के रूप में तलहटी में जमा हो जाता है। किसी रासायनिक अभिक्रिया में अवक्षेप की रचना को निम्न शीर्ष वाले (अधातुएँ) के जरिए दर्शाते हैं। ऊर्जा परिवर्तन- कुछ रासायनिक परिवर्तन में ऊर्जा के मुक्त अथवा अवशोषित होने का गुण दृष्टिगोचर होता है। अवस्था परिवर्तन- कुछ रासायनिक अभिक्रियाओं में भौतिक अवस्था में परिवर्तन होता है। अवस्था परिवर्तन को दर्शाने के लिए उनके प्रतीक अथवा सूत्र के साथ-साथ ठोस के लिए - S, तरल के लिए L और गैस के लिए G लिखते हैं। 4. जब दो या अधिक तत्त्व या यौगिक एकलक नए उत्पाद की रचना के लिए परस्पर रासायनिक रूप से अभिक्रिया करते हैं तो उनके बीच संपन्न रासायनिक अभिक्रिया रासायनिक संयोजन कहलाती है। रूई को पानी में डुबोइए तथा फिर उसे दो भागों में विभाजित कीजिए। इसके पहले आधे भाग को चाइना प्लेट में फैलाइए तथा उस पर पॉलिश युक्त लोहे की कुछ चमकीली कीलें रखिए। अब रूई के दूसरे भाग से इन कीलों को ढक दीजिए। अब इस संपूर्ण तंत्र को दो दिन के लिए किसी कोने में रख दीजिए। दो दिन के उपरांत कीलों को देखिए। कीलों पर जंग का लाल-भूरा चूर्ण दिखाई देता है। इसका कारण यह है कि आयरन, आयरन ऑक्साइड बनाने के लिए ऑक्सीजन के साथ संयोजित होता है। 5. जब कोई अम्लीय विलयन किसी क्षार या धात्विक कार्बोनेट के साथ किसी लवण की उत्पत्ति हेतु अभिक्रिया करता है तो इस तरह की अभिक्रिया उदासीनीकरण अभिक्रिया कहलाती है। उदाहरण : HCL (हाइड्रोजन अम्ल) + NaOH (सोडियम हाड्रोक्साइड) NaCL (सोडियम क्लोराइड) + H_2O (जल) 6. क्रिस्टल सपाट पार्श्वों वाली एक ठोस सरंचना होती है। क्रिस्टलों से अनेक तत्त्व बनते हैं। क्रिस्टल बनाने की विधि किसी तत्त्व के घोल को सांद्रित बनाकर की जाती है। सामान्यत: विलयन को धीरे-धीरे गरम करते हैं, विलायक वाष्प बनकर उड़ते है तथा अंत में ऐसी अवस्था आती है जब विलायक बहुत कम मात्रा में विद्यमान रह जाता है। यह विलयन सांद्रित विलयन कहलाता है। जब तक विलयन तृप्त नहीं हो जाता है उसमें विलेय का सांद्रण बढ़ता जाता है एवं विलयन को धीरे-धीरे ठंडा होने दिया जाता है तो घुले हुए तत्त्वों के क्रिस्टल पृथक होना शुरू कर देते हैं। यह प्रक्रिया क्रिस्टलीकरण कहलाती है। इसका प्रयोग किसी तत्त्व को उसके शुद्धतम रूप में प्राप्त करने के लिए करते हैं। **(ग)** छात्र अध्यापक की सहायता से स्वयं करें। **(घ)** 1. ङ 2. ग 3. छ 4. ख 5. घ 6. क 7. च **(ङ)** 1. $H_2SO_4 + 2NaOH \rightarrow Na_2SO_4 + 2H_2O$ 2. $CuSO_4 + Fe \rightarrow Fe SO_4 + Cu$ 3. $CUCO_3 \rightarrow CUO + CO_2\uparrow$ 4. $2Mg + O_2 \rightarrow 2MgO$ 5. $Ca COH_2 \rightarrow CaO + H_2O$ 6. $HNO_3 + NaOH \rightarrow Na NO_3 + H_2O$ **(च)** 1. धातुओं 2. धातु 3. अधातुएँ 4. अभिकर्त्ता 5. उत्पाद 6. रासायनिक सूत्र 7. तत्व 8. हीलियम 9. अभिकर्त्ता **क्रियाकलाप –** छात्र स्वयं करें।

अध्याय–7 सजीवों का संसार

(क) 1. किसी स्थान विशेष पर लंबे समय तक बनी रहने वाली मौसम की औसत दशाएँ, जलवायु कहलाती हैं। 2. **जलवायु को प्रभावित करने वाले प्रमुख कारक हैं :-** विषुवत रेखा से दूरी। सागर अथवा ऊँची पर्वतीय श्रृंखला से दूरी। सागर तल से ऊँचाई अर्थात् ऊँचाई की ओर जाते हुए ठंडक बढ़ती है। 3. ऐसी विशेषताएँ जो किसी जंतु को उसके वास-स्थल में रहने योग्य बनाती हैं, अनुकूलन कहलाती हैं। 4. मेंढक, टोड़, जलीय छिपकली, न्यूट आदि उभयचर हैं। 5. ऐसे जंतु जो वृक्षों पर निवास करते हैं, वृक्षवासी जंतु कहलाते हैं। उदाहरण: गिलहरी, बंदर, कोयल, भालू आदि। 6. स्थलीय जंतुओं में स्थल पर चलने-फिरने के लिए विशेष अंग पाए जाते हैं। इनमें इनके विविध वास-स्थलों के अनुसार विविध प्रकार के अनुकूलन पाए जाते हैं। जैसे ऊँट गरम तथा शुष्क रेगिस्तान में रहता है। इसके पैरों का आकार चौड़ा होता है। अत: इसके पैर रेत में धंसते नहीं है। इसकी कमर पर एक बड़ा सा कूबड़ होता है। इस कूबड़ में भोजन संचित होता है। इसके विपरीत ध्रुवीय भालू आर्कटिक क्षेत्र में वास करता है जो वर्ष भर बर्फ से ढका रहता है। इसके पंजे चौड़े तथा त्वचा मोटी होती है। इसके शरीर पर समूर की दो परतें तथा त्वचा के नीचे वसा की मोटी परत संचित पायी जाती है जो इसे ठंड से बचाकर रखती है। 7. कुछ जलीय जंतुओं की शारीरिक सरंचनाएँ इस तरह की होती हैं कि वे जल में सरलता से तैर तथा गोता लगा सकते हैं। मछलियों में मीनपक्ष होते हैं जो उन्हें तैरने में मदद करते हैं। इसी तरह सी लायन (मछली) तथा सागरीय कच्छप आदि जलीय जंतुओं में तरणक पाद होते हैं। 8. मेंढक अपनी त्वचा के माध्यम से श्वसन कर सकता है। इसके अतिरिक्त इसमें श्वसन के लिए फेंफड़े भी उपस्थित पाए जाते हैं। इसके पश्चपाद अर्थात् पिछली टाँगे लंबी होती है जो स्थल पर फुदकने तथा जल में तैरने में मदद करती हैं। इसकी लंबी तथा चिपचिपी जीभ कीटों को पकड़ने में सहायक होती है। इसका रंग अपने वास-स्थल के अनुकूल होता है। अत: यह अपने भक्षकों से सुरक्षित बना रहता है। 9. पृथ्वी भू-पर्पटी की सबसे ऊपरी परत को मिट्टी कहते हैं। मिट्टी मृदा के नाम से भी जानी जाती है। मिट्टी में अनेक प्रकार के छोटे जीव पाए जाते हैं तथा अनेक पौधे उगते हैं। 10. ह्यूमस मृत पौधों एवं जंतुओं के गले-सड़े अवशेष होते हैं। ये मिट्टी को उपजाऊ बनाने में सहायक होते हैं। 11. मिट्टी के कणों के बीच उपस्थित रंध्रों में जल उपस्थित पाया जाता है। यह पौधों के उगने के लिए अनिवार्य होता है। ह्यूमस मृदा की जल धारण क्षमता को बढ़ाता है। 12. दोमट मिट्टी में ह्यूमस पर्याप्त मात्रा में उपस्थित होता है। इसकी जल धारण क्षमता बेहतर होती है। इसके कणों के बीच वायु की उपस्थिति के लिए उपर्युक्त रिक्त-स्थान विद्यमान होता है। यह मिट्टी पौधों के उगने के लिए आदर्श मिट्टी होती है। **हॉट प्रश्न –** 1. किसी स्थान विशेष पर लंबे समय तक बनी रहने वाली मौसम की औसत दशाएँ, जलवायु कहलाती है। इसे प्रभावित करने वाले कारक है – (अ) विषवुत रेखा से दूरी (ब) वायु में उपस्थित आद्रता अथवा नमी (स) सागर अथवा ऊँची पर्वतीय श्रृंखला से दूरी। 2. मरुस्थलीय मृदा भारत के राजस्थान, गुजरात के कुछ भागों व पश्चिमी हरियाणा में पायी जाती है। यहाँ गेहूँ, ज्वार, बाजरा, अंगूर की फसलें प्रमुखता से होती है। **(ख)** 1. किसी विशेष स्थान पर बहुत लंबे समय तक बनी रहने वाली मौसम की औसत दशाएँ, जलवायु कहलाती हैं। **किसी स्थान की जलवायु को प्रभावित करने वाले कारक निम्नलिखित हैं :-** विषुवत रेखा से दूरी। सागर अथवा ऊँची पर्वतीय श्रृंखला से दूरी। सागर

तल से ऊँचाई अर्थात् ऊँचाई की ओर जाते हुए ठंडक बढ़ती जाती है। पवनें-जलवायु इस बात पर निर्भर करते है कि पवनें गरम, ठंडी, आद्र या शुष्क हैं। वायु में उपस्थित आर्द्रता अथवा नमी। 2. ऐसी विशेषताएँ जो किसी जंतु को उसके वास-स्थल में रहने योग्य बनाती हैं, अनुकूलन कहलाती है। स्थलीय जंतुओं में स्थल पर चलने-फिरने के लिए विशेष अंग पाए जाते हैं। इनमें इनके विविध वास-स्थलों के अनुसार विविध प्रकार के अनुकूलन पाए जाते हैं। जैसे ऊँट गरम तथा शुष्क रेगिस्तान में रहता है। इसके पैरों का आकार चौड़ा होता है। अत: इसके पैर रेत में धंसते नहीं है। इसकी कमर पर एक बड़ा सा कूबड़ होता है। इस कूबड़ में भोजन संचित होता है। इसके विपरीत ध्रुवीय भालू आर्कटिक क्षेत्र में वास करता है जो वर्ष भर बर्फ से ढका रहता है। इसके पंजे चौड़े तथा त्वचा मोटी होती है। इसके शरीर पर समूर की दो परतें तथा त्वचा के नीचे वसा की मोटी परत संचित पायी जाती है जो इसे ठंड से बचाकर रखती है। 3. पृथ्वी भू-पर्पटी की सबसे ऊपरी परत को मिट्टी कहते हैं। मिट्टी मृदा के नाम से भी जानी जाती है। यह एक भुर-भुरा पदार्थ होता है। मिट्टी की संरचना एक स्थान से अन्य स्थान पर भिन्न पायी जाती है। मिट्टी की प्रकृति अपनी जनक शैलों पर निर्भर करती है सभी प्रकार की मिट्टियों में निम्नलिखित घटक सामान्य रूप से निहित पाए जाते हैं :- (1) शैल कण- मिट्टी में अपनी जनक अथवा पैतृक शैलों के कण प्रमुख मात्रा में विद्यमान पाए जाते हैं। (2) ह्यूमस- यह मृत पौधों एवं जंतुओं के गले-सड़े अवशेष हैं। ये मिट्टी को उपजाऊ बनाने में विशेष योगदान देते हैं। जल- मिट्टी के कणों के बीच उपस्थित रंध्रों में जल उपस्थित पाया जाता है। यह पौधों के उगने के लिए अनिवार्य है। (3) वायु- मिट्टी कणों के बीच उपस्थित रंध्रों में जल उपस्थित पाया जाता है। मिट्टी में निवास करने वाले जंतु इसी वायु को साँस द्वारा ग्रहण करते हैं। 4. यदि हम किसी स्थान पर भूमि को उर्ध्वाधर रूप में खोदें तो खोदे गए गडढे के पार्श्व भागों में मृदा की कई परतें अथवा संस्तर दिखाई देते हैं। इन संस्तरों की व्यवस्था, मृदा परिच्छेदिका कहलाती है। **मिट्टी की चार प्रमुख परतें होती है :-** A संस्तर अथवा ऊपरी परत- यह सबसे ऊपरी परत होती है। यह रंग में गहरी तथा ह्यूमस की समृद्ध वाली मिट्टी होती है। यह अत्यधिक उपजाऊ परत है। यह मुलायम, सरंध्र एवं जल धारण क्षमता वाली होती है। शाक पौधों की जड़ें इसी परत में निहित पायी जाती हैं। B संस्तर अथवा उप-मृदा- यह ऊपरी मृदा की तुलना में हल्का रंग लिए होती है। यह A संस्तर की अपेक्षा अधिक कठोर तथा सुसंहत होती है। यह मृदा खनिजों तथा लौह ऑक्साइड के रूप में समृद्ध होती है। C संस्तर- यह अपक्षयित जनक शैलों की परत होती है। जो ऊपरी मृदा के निर्माण में योग देती हैं। यह परत सामान्यत: निम्नतम भाग अर्थात् आधारीय शैलों तक विस्तारित पायी जाती है। आधारीय शैलें- इसे कभी-कभी D संस्तर भी कहते हैं। यह मृदा की निम्नतम परत है। अत: मृदा परिच्छेदिका में सबसे निचली परत है। यह जनक पदार्थों के रूप में समृद्ध होती है। 5. मिट्टी के कणों के बीच उपस्थित रिक्त-स्थानों में वायु भी उपस्थित पायी जाती है। मिट्टी में निवास करने वाले जंतु इसी वायु को साँस द्वारा ग्रहण करते हैं। 6. **हमारे देश में विविध प्रकार की मिट्टियाँ पायी जाती हैं :-** लाल मृदा- इस मृदा का निर्माण प्राचीन कायांतरित शैलों से हुआ है। इसमें आयरन ऑक्साइड की उपस्थित प्रचुर मात्रा में पायी जाती है। अत: इसी कारण इस मृदा का रंग लाल दिखाई देता है। इसमें ह्यूमस कम मात्रा में विद्यमान पाया जाता है। अत: यह कम जल धारण करने वाली मृदा है। काली मृदा- इस मिट्टी का निर्माण ज्वालामुखी शैलों से हुआ है। यह बेसाल्ट शैलों से निष्कासित लोहे, मेंग्नेशियम तथा कैल्शियम के रूप में समृद्ध मृदा है। यह गन्ने तथा कपास की खेती के लिए आदर्श मृदा है। जलोढ़ मृदा- यह अति उपजाऊ मृदा है। यह अपनी सरंचना के रूप में दोमट तथा ह्यूमस की समृद्ध मात्रा वाली मृदा है। इस मृदा में विविध प्रकार की फसलें सरलता से उगाई जा सकती सकती हैं। मरूस्थलीय मृदा- यह मुलायम तथा सरंध्र होती है। इसकी जल धारण क्षमता बहुत कम होती है। यह फसलें उगाने के लिए श्रेष्ठ मृदा नहीं मानी जाती है। पर्वतीय मृदा- इस मृदा में कंकड़, पत्थर, बजरी, चीका आदि प्रचुर मात्रा में सम्मिलित पाए जाते हैं। यह मृदा अत्यंत उपजाऊ होती है। लेटराइट मृदा- यह लाल रंग की मृदा होती है। यह एल्युमिनियम के हाइड्रेटिड ऑक्साइड तथा क्वार्टज कणों के साथ ही लोहे के रूप में समृद्ध होती है। यह अनुपजाऊ एवं ह्यूमस के अभाव वाली मृदा है। 7. प्रश्न संख्या (6) एवं (7) का उत्तर समान है। 8. मृदा अथवा मिट्टी की हानि अथवा उसका अपने स्थान से हट जाना ही मृदा अपरदन कहलाता है। प्रवाहित जल अथवा वायु मृदा अपरदन का कारण बनते है। **मृदा अपरदन की रोकथान के लिए निम्न उपाय किए जा सकते है –** (1) खेतों में पवनों के प्रभाव को निष्क्रिय बनाए रखने के लिए उनके चारों तरफ घने वृक्ष अथवा पौधे उगाने चाहिए। (2) वननाशन की रोकथाम के उपाय किए जाने चाहिए। अधिकाधिक संख्या में नए वृक्ष उगाने चाहिए तथा वनों में उपस्थित वृक्षों को संपूर्ण सरंक्षण प्रदान करना चाहिए। (3) पर्वतीय ढलानों पर सीढ़ीदार खेत बनाए जाने चाहिए। इस तरह के खेत बनाकर वर्षा जल के प्रवाह को मंद करके मृदा अपरदन की रोकथाम की जा सकती है। (4) फसल चक्र मृदा की उर्वरता को बनाए रखता है। इससे मृदा की जल धारण क्षमता सतत बनी रहती है। **(ग)** 1. विषुवत रेखा के निकटतम स्थान अपेक्षाकृत गरम होते हैं क्योंकि विषुवत रेखा पर सूर्य की किरणें इससे अत्यधिक दूर स्थित उत्तर या दक्षिण की तुलना में अधिक सघनता से केंद्रित रहती है। 2. ऊँट के पैरों का आकार चौड़ा होता है। अत: इसके पैर रेत में धंसते नहीं हैं। 3. ध्रुवी भालू के पंजे चौड़े तथा त्वचा मोटी होती हैं। इसके अतिरिक्त इसके शरीर में घने बाल विद्यमान पाए जाते हैं। अत: बर्फ पर चलते हुए भी यह फिसलता नहीं है। 4. मिट्टी के कणों के बीच उपस्थित रिक्त-स्थानों में वायु भी उपस्थित पायी जाती है। मिट्टी में निवास करने वाले जंतु इसी वायु को साँस द्वारा ग्रहण करते हैं। 5. ऊपरी परत रंग में गहरी तथा ह्यूमस की समृद्ध मात्रा वाली मिट्टी होती है। यह मुलायम, सरंध्र एवं जल धारण क्षमता वाली होती है। 6. रेतीली मृदा की जल धारण क्षमता नाममात्र ही होती है क्योंकि इसमें जल त्वरित गति से नीचे रिस जाता है। 7. दोमट मिट्टी में ह्यूमस पर्याप्त मात्रा में पायी जाती है तथा इसकी जल धारण क्षमता बेहतर होती है। 8. पर्वतीय ढ़लानों पर सीढ़ीदार खेत बनाकर वर्षा जल के प्रवाह को मंद करके मृदा अपरदन की रोकथाम की जा सकती है। **(घ)** 1. ह्यूमस- ह्यूमस मृत पौधों एवं जंतुओं के गले-सड़े अवशेष होते हैं। ये मिट्टी को उपजाऊ बनाने में सहायक होते हैं। 2. मृदा परिच्छेदिका- यदि हम किसी स्थान पर भूमि को उर्ध्वाधर रूप में खोदें तो खोदे गए गडढ़े के पार्श्व भागों में मृदा की कई परतें अथवा संस्तर दिखाई देते हैं। इन संस्तरों की व्यवस्था, मृदा परिच्छेदिका कहलाती है। 3. काली मृदा- इस मिट्टी का निर्माण ज्वालामुखी शैलों से हुआ है। यह बेसाल्ट शैलों से निष्कासित लोहे, मेग्नेशियम तथा कैल्शियम के रूप में समृद्ध मृदा है। यह गन्ने तथा कपास की खेती के लिए आदर्श मृदा है। 4. जलोढ़ मृदा- यह अति उपजाऊ मृदा है। यह अपनी सरंचना के रूप में दोमट तथा ह्यूमस की समृद्ध मात्रा वाली मृदा है। इस मृदा में विविध प्रकार की फसलें सरलता से उगाई जा सकती है। 5. चीका- चीका के कण आकार में अत्यधिक छोटे होते हैं इसलिए यह एक-दूसरे से निकटता से सटे रहते हैं। अत: इस मिट्टी में जल आसानी

से रिस नहीं पाता है। इस मिट्टी में सर्वाधिक जल धारण करने की क्षमता पायी जाती है। यह अत्यधिक चिपचिपी होती है। 6. मरूस्थलीय मृदा- यह मुलायम तथा सरंध्र होती है। इसकी जल धारण क्षमता बहुत कम होती है। यह फसलें उगाने के लिए श्रेष्ठ मृदा नहीं मानी जाती है। **ग. निम्नलिखित में अंतर बताइए –** अध्यापक की सहायता से करें। **(ङ)** अध्यापक की सहायता से करें। **(च)** 1. काली मृदा- महाराष्ट्र, गुजरात 2. लाल मृदा- मध्य प्रदेश, तमिलनाडु 3. जलोढ़ मृदा- पंजाब, बिहार 4. मरूस्थलीय मृदा- राजस्थान, गुजरात 5. पर्वतीय मृदा- हिमालयी क्षेत्र, उत्तर पूर्व भारत 6. लेटराइट मृदा- उड़ीसा, असम **(छ)** 1. ब 2. ब 3. स 4. ब 5. स **(ज)** 1. ग 2. ङ 3. घ 4. च 5. क 6. ख **क्रियाकलाप –** छात्र स्वयं करें।

अध्याय– 8 श्वसन

(क) 1. ऑक्सीजन वह साधन है जो पचे हुए भोजन से ऊर्जा मुक्त करने का कार्य करता है एंव यह ऊर्जा ही हमारे शरीर के लिए विविध कार्य करने की क्षमता प्रदान करती है। ऑक्सीजन के अभाव में जैव क्रियाओं जैसे गति करना, वृद्धि करना, प्रजनन आदि को संपन्न करने में हम स्वयं को असमर्थ पाएँगे। 2. वह प्रक्रिया जिसके अंतर्गत ऑक्सीजन को शरीर के अंदर ग्रहण तथा कार्बन डाइऑक्साइड को बाहर मुक्त किया जाता है, श्वसन कहलाता है। 3. जब हम भोजन ग्रहण करते हैं तो घाँटी ढक्कन हमारी श्वास नली को ढक लेता है ताकि उसमें भोजन का अंश प्रेवश न कर सके। 4. हमारी श्वासनली ठीक आहार नली के सामने स्थित होती है। श्वासनली से वायु कंठ से होते हुए वृक्ष के केंद्रीय भाग में पहुँचती है। यहाँ पहुँचकर यह दो भागों में विभाजित होती है। जो ब्रोंकनी अथवा श्वसन कहलाती है एवं वायु का दो स्पंजी फेंफड़ों तक प्रतिनिधित्व करती है। 5. जब हम श्वसन अंदर लेते हैं तो पसलियों को ऊपर-नीचे गति करते देखते हैं यह गति निश्वसन कहलाती है। 6. पौधे के सभी भाग श्वसन करते हैं। जड़ें मूल रोमों की मदद से मृदा में उपस्थित ऑक्सीजन को ग्रहण करती है। मूल रोम जड़ों की बाह्य भाग पर विस्तारित पाए जाते हैं। गैसों के विनियम की प्रक्रिया विसरण कहलाती है। 7. पौधों की जड़ों में संपन्न होने वाला वायु विनयम, विसरण कहलाता है। 8. वातपेक्षी श्वसन का अर्थ है कि रासायनिक अभिक्रिया के लिए ऑक्सीजन की आवश्यकता होती है। इसके तहत भोजन के अणु ऑक्सीजन के साथ संयोजित होते हैं। 9. किसी कीट में एक विस्तृत शाखीय नलिका तंत्र उपस्थित पाया जाता है जिसे श्वास वाहिका तंत्र कहते है। इस तंत्र के माध्यम से वायु इसके शरीर के विविध भागों में पहुँचती है। इसकी ये वाहिकाएँ शरीर की सतह पर वात छिद्रों के रूप में खुलती हैं। इन्हें श्वसन छिद्र कहते हैं अधिकांश वयस्क कीटों के वृक्ष पर दो जोड़े तथा उदर पर आठ जोड़े वात छिद्र उपस्थित पाए जाते हैं। 10. पक्षियों में श्वसन प्रणाली वायु कोषों एवं फेंफड़ों की अनोखी प्रणाली होती है। इनके फेंफड़ों में सूक्ष्म नलिकाएँ उपस्थित पायी जाती हैं। यहाँ वायु कोषों के विस्तृत तंत्र से वायु को निरंतर आदान-प्रदान अथवा विनियम होता रहता है। **हॉट प्रश्न –** 1. मछली अपने गिलों की मदद से जल में घुली ऑक्सीजन को ग्रहण करती है। मछली अपने मुख द्वारा जल को अंदर ग्रहण करती है तथा अपने सिर के दोनों तरफ स्थित गिलों के बीच से बलपूर्वक इस जल को प्रवाहित करती है। 2. वातपेक्षी तथा वात निरपेक्षी श्वसन में अंतर – **वातपेक्षी –** (1) यह ऑक्सीजन की उपस्थिति में संपन्न होता है। (2) यह समस्त सजीवों में संपन्न होता है। (3) यह अधिक मात्रा में ऊर्जा प्रदान करता है। **वात निरपेक्षी –** (1) यह ऑक्सीजन की अनुपस्थिति में संपन्न होता है। (2) यह केवल जीवाणुओं, फफूँद, अंकुरित बीजों, कुछ जन्तुओं के उत्तकों में संपन्न होते है। (3) यह कम मात्रा में ऊर्जा उत्पन्न करता है। **(ख)** 1. मानव में वायु नाक द्वारा ग्रहण की जाती है। उसके उपरांत यह नासछिद्रों से गुजरती है जहाँ निस्यांदित हो जाती है। इस दौरान वायु गरम तथा आर्द्र भी हो जाती है। उसके उपरांत यह हमारी श्वासनली में प्रवेश करती है। हमारी श्वासनली ठीक आहार नली के सामने स्थित होती है। जब हम भोजन खाते हैं तो एक कंठछद अथवा घाँटी ढक्कन हमारी श्वासनली का मुख बंद कर देती है जिससे भोजन इसमें प्रवेश नहीं कर पाता है। श्वासनली से वायु कंठ से होते हुए वक्ष के केंद्रीय भाग में पहुँचती है। यहाँ पहुँचकर यह दो भागों में विभाजित हो जाती है। जो ब्रोंकनी अथवा श्वसनी कहलाती है एवं वायु का दो स्पंजी फेंफड़ों तक प्रतिनिधित्व करती है। फेंफड़ों के अंदर श्वसन आगे चलकर अन्य भागों में विभाजित होती है जिसे श्वसन बहुशासन कहते हैं। 2. **श्वसन की प्रक्रिया में दो चरण सम्मिलित होते हैं :-** निश्वसन, अच्छवसन। जब आप श्वसन अंदर लेते हैं तो पसलियों को ऊपर-नीचे गति करते हैं। वास्तव में जब आप निश्वसन करते हैं तो पसलियाँ ऊपर-नीचे गति करती हैं। इसके विपरीत जब आप श्वास बाहर छोड़ते हैं अथवा उच्छवसन करते हैं तो पसलियाँ नीचे की ओर अथवा अंदर गति करती हैं। पसलियों की यह गति वक्ष की मांसपेशियों के कारण संभव होती हैं। 3. फेंफड़ों तथा शरीर के निम्न भाग के बीच मांसपेशियों का एक मोटा स्तर विद्यमान पाया जाता है। इसे डायफ्राम कहते हैं। निश्वसन के दौरान डायफ्राम चपटा होता जाता है तथा वायु फेफड़ों में तीव्रता से प्रवेश करती है। किंतु जैसे ही डायफ्राम अपनी मूल अवस्था को प्राप्त होता हैं तो यह फेफड़ों के अंदर वायु को धकेलने का कारण बनता है। 4. केंचुए में गैसों का विनियम उसकी त्वचा द्वारा होता है। इसकी पतली तथा आर्द्र त्वचा में कोशिकाएँ एक विस्तृत संजाल के रूप में पायी जाती हैं। जो वायुमंडल से ऑक्सीजन सोख लेती हैं एवं उसे शेष शरीर में आपूर्तित करती हैं। यह अवशोषी शरीर अथवा कोशिकाओं का संजाल शरीर से कार्बन डाइऑक्साइड को मुक्त करने का दायित्व भी कुशलता से निभाता है। 5. पौधे के सभी भाग जैसे जड़, तना एवं पत्तियाँ वैयष्टिक रूप से श्वसन करते हैं। जड़ें मूल रोमों की मदद से मृदा में उपस्थित ऑक्सीजन को ग्रहण करती हैं। मूल रोम जड़ों की बाह्य भाग पर विस्तारित पाए जाते हैं। गैसों के विनियम की प्रक्रिया जो जड़ों में घटित होती है, विसरण कहलाती है। ऑक्सीजन मृदा से जड़ों में गति करती है तथा कार्बन डाइऑक्साइड जड़ों से मुक्त हो जाती है। पत्तियों में स्टोमेटा नामक सूक्ष्म छिद्र पाए जाते हैं। स्टोमेटा नियमित रूप से खुलते अथवा बंद होते रहते हैं। जो वायुमंडल से ऑक्सीजन को अंदर तथा कार्बन डाइऑक्साइड को बाहर मुक्त करते हैं। 6. वातपेक्षी श्वसन का अर्थ है कि रासायनिक अभिक्रिया के लिए ऑक्सीजन होती है। इसके तहत भोजन के अणु ऑक्सीजन होते हैं। ये भोजन के अणु कार्बन डाइऑक्साइड तथा जल में वियोजित होते हैं एवं ऊर्जा को मुक्त करते हैं। समस्त भोजन अणुओं में कार्बन, हाइड्रोजन तथा ऑक्सीजन के परमाणु निहित पाए जाते हैं। ऑक्सीजन की प्रक्रिया कार्बन को कार्बन डाइऑक्साइड में परिवर्तित करती है तथा हाइड्रोजन जल में परिवर्तित हो जाती है। उसी समय यह प्रक्रिया ऊर्जा को मुक्त करती है। $C_6H_{12}O_6$ (ग्लूकोज) $2C_2H_5OH$ (इथाईल एल्कोहल) + 2 CO_2 (जल) + ऊर्जा 7. किसी परखनली को पारे से भरो तथा इसे पारे से भरी पेट्री डिश में व्यवस्थित करो। पारे से भरी परखनली में मटर के अंकुरित बीज डालो। बीज तुरंत ऊपर शीर्ष की ओर उठ जाते हैं। अब इस समस्त व्यवस्था को एक दिन के लिए अबाधित रूप से रखे रहने दो। आप देखेंगे कि परखनली में पारे का स्तर गिर जाता है एवं पारे के ऊपर का स्थान गैस से भर जाता है। अब कास्टिक पोटाश अथवा पोटेशियम हाइड्रोऑक्साइड

(घजक) की छड़ इसमें लो। पारे का स्तर पुन: शीर्ष तक चढ़ जाता है। क्योंकि घजक कार्बन डाइऑक्साइड को सोख लेता है। यह इस बात का सक्ष्य है कि इसमें उपस्थित गैस कार्बन डाइऑक्साइड ही है। अंकुरित बीजों को ऑक्सीजन नहीं मिल पाती इसी कारण उन्हें वापनिरपेक्षी श्वसन करना पड़ता है। **(ग)** 1. च 2. ड 3. ग 4. घ 5. छ 6. ख 7. क **(घ)** छात्र अध्यापक की सहायता से स्वयं करें। **(ङ)** 1. घाँटी ढक्कन 2. श्वसन बहुशाखन 3. श्वसनी 4. विसरण 5. श्वसन **(च)** श्वसनी बहुशाखन- हमारी श्वासनली ठीक आहार नली के सामने स्थित होती है। श्वासनली से वायु कंठ होते हुए वृक्ष के केंद्रिय भाग में पहुँचती है। यहाँ पहुँचकर यह दो भागों में विभाजित होती है। जो ब्रोंकनी अथवा श्वसन कहलाती है एवं वायु का दो स्पंजी फेंफड़ों तक प्रतिनिधित्व करती है। फेंफड़ों के अंदर श्वासनली आगे चलकर अन्य दो भागों में विभाजित होती है जिसे श्वसन बहुशाखन कहते हैं।फेंफड़ों तथा शरीर के निम्न भाग के बीच मांसपेशियों का एक मोटा स्तर विद्यमान पाया जाता है। इसे डायफ्राम कहते हैं। निश्वसन के दौरान डायफ्राम चपटा होता जाता है तथा वायु फेफड़ों में तीव्रता से प्रवेश करती है। किंतु जैसे ही डायफ्राम अपनी मूल अवस्था को प्राप्त होता हैं तो यह फेफड़ों के अंदर वायु को धकेलने का कारण बनता है। श्वास छिद्र- श्वास वाहिका तंत्र के माध्यम से वायु इसके शरीर के विविध भागों में पहुँचती है। इसकी ये वाहिकाएँ शरीर की सतह पर वात छिद्रों के रूप में खुलती हैं। इन्हें श्वसन छिद्र कहते हैं। श्वासोच्छवास आयतन- हमारे द्वारा किसी एकल प्रयास में अंदर जाने अथवा बाहर मुक्त होने वाली वायु का आयतन श्वासोच्छवास आयतन कहलाता है। यह लगभग 500 मिली. होता है। जब हम व्यायाम करते अथवा दौड़ते हैं तो यह अधिकतम तथा जब विश्राम करते या सोते हैं तो यह निम्नतम होता है। स्टोमेटा- पत्तियों में स्टोमेटा नामक सूक्ष्म छिद्र पाए जाते हैं। स्टोमेटा नियमित रूप से खुलते अथवा बंद होते रहते हैं। जो वायुमंडल में ऑक्सीजन तथा कार्बन डाइऑक्साइड को बाहर मुक्त करते रहते हैं। गिल- मछली अपने गिलों की सहायता से जल में घुली ऑक्सीजन को ग्रहण करती है। मछली अपने मुख द्वारा जल को अंदर ग्रहण करती है तथा अपने सिर के दोनों तरफ स्थित गिलों के बीच से बलपूर्वक इस जल को प्रवाहित करती है। **क्रियाकलाप –** छात्र स्वयं करें।

अध्याय– 9 भोजन का वहन तथा उत्सर्जन

(क) 1. पौधों में जल, खनिजों तथा भोजन का वहन जड़ों, तनों एवं पत्तियों के डंठलों में उपस्थित विशेष ऊतकों के माध्यम से होता है। ये विशेष ऊतक संवहनी ऊतक कहलाते हैं। 2. जल तथा घुले हुए खनिज पौधों की जड़ों में उपस्थित मूल रोमों द्वारा मृदों से अवशोषित कर लिए जाते हैं। उसके उपरांत ये पौधों के विविध भागों तने, पत्तियों एवं जाइलम ऊतकों के माध्यम से ऊपर की ओर संचरण करते हैं। इसी तरह पत्तियों में शर्करा के रूप में फ्लीअम ऊतकों के जरिए पौधों के विविध भागों में पहुँचती है। जाइलम तथा फ्लीअम ऊतक परस्पर मिलकर संवहन बंडल की रचना करते हैं। 3. फ्लीअम द्वारा पदार्थों के वहन का कार्य सजीव कोशिकाओं की क्रिया पर निर्भर करता है जो चालनी नलिका कहलाती हैं। 4. पौधे की हरी पत्तियाँ ग्लूकोज बनाती हैं। 5. रक्तवाहिकाएँ निम्न प्रकार की होती हैं- धमनियाँ, शिराएँ एवं कोशिकाएँ। रक्त बहुशोखीय लचीली नलिकाओं के माध्यम से संचरित होता है। इन्हें रक्त वाहिकाएँ कहते हैं। हृदय से रक्त ले जाने वाली वाहिकाएँ धमनियाँ कहलाती हैं। ऐसी नलिकाएँ जो शरीर के विविध अंगों से अशुद्ध रक्त लेकर जाती हैं शिराएँ कहलाती है। 6. आक्सीकृत रक्त शुद्ध रक्त को कहते हैं, जिसमें ऑक्सीजन गैस आदि जीवनदायी अवयव मिले होते हैं। 7. अपनी ऊँगली को कलाई के ऊपर रखिए। आप इससे ठीक नीचे धक-धक महसूस करेंगे। यह धक-धक की संवेदना ही नाड़ी अथवा नब्ज के नाम से जानी जाती है। 8. बिंबाणु लाल रक्त कोशिकाओं से आकार में छोटे होते हैं। ये रक्त में थक्के बनाने में सहायता करते हैं। 9. श्वेत रक्त कोशिकाएँ हमारे शरीर में प्रवेश करने वाले हानिकारक जीवाणु व विषाणुओं का भक्षण करती हैं। 10. जब किसी स्वस्थ व्यक्ति के शरीर से रक्त लेकर रोगी या घायल व्यक्ति के शरीर में स्थानांतरित किया जाता है तो यह प्रक्रिया रक्त आधान कहलाती है। **हॉट प्रश्न –** 1. छात्र स्वयं करें। 2. पौधे श्वसन अथवा प्रकाश संश्लेषण के तहत उत्पन्न अपशिष्ट गैसों को पत्तियों में उपस्थित स्टोमेटा व तनों में उपस्थित रंध्रों के जरिए मुक्त करते है। कुछ अपशिष्ट उत्पाद हानि रहित उत्पादों में परिवर्तित कर दिए जाते है जो पौधों के शरीर में संचित होते रहते है। रबड़ तथा रेफाइड ऐसे ही उत्पाद है। **(ख)** 1. पौधे की पत्तियों द्वारा बनाए गए भोजन का फ्लीअम कोशिकाओं के विशेष तंत्र द्वारा पौधे के विविध भागों में वहन होता है। भोजन का पौधे की पत्तियों से अन्य भागों में वहन होने की यह प्रक्रिया स्थानांतरित कहलाती है। फ्लीअम द्वारा पदार्थों के वहन का कार्य सजीव कोशिकाओं की क्रिया पर निर्भर करता है जो चालनी नलिका कहलाती है। 2. भोजन के अणु पत्तियों की भोजन उत्पादन कोशिकाओं से फ्लीअम कोशिकाओं में प्रवेश करते हैं। एक बार प्रवेश करने के बाद वे पौधों के विविध भागों में जड़ों सहित ऊपर तथा नीचे की ओर संचलित होते हैं। यह वहन अथवा परिवहन अनिवार्य होता है क्योंकि पौधे के विविध भागों को ऊर्जा के शोषण, वृद्धि एवं अपनी उत्तरजीविका बनाए रखने के लिए भोजन की जरूरत होती है। 3. हृदय एक मांसपेशीय पंप होता है। यह रक्त को रक्त वाहिकाओं के माध्यम से शरीर के विविध भागों में पहुँचाता है। इसके विपरीत यह शरीर के विविध भागों से अशुद्ध अथवा अनाक्सीकृत रक्त को प्राप्त करने का दायित्व भी निभाता है। रक्त वाहिकाओं में धमनियाँ, शिराएँ एवं कोशिकाएँ सम्मिलित होती हैं। 4. रक्त के प्रमुख कार्य निम्नलिखित हैं :- यह शरीर के विविध भागों तक ऑक्सीजन का वहन करता है। यह पचे हुए भोजन को उसके अवशोषण हेतु विविध शारीरिक अंगों तक लेकर जाता है। यह हमारे शरीर को रोगाणुओं से मुक्त रखता है। यह अपशिष्ट पदार्थों को उत्सर्जन में अंगों तक लेकर जाता है। यह हार्मोनों तथा अन्य तत्त्वों का वहन करता है। 5. पौधे अपने अंदर उत्पन्न अपशिष्ट पदार्थों को उत्सर्जित करने के लिए विविध विधियों का इस्तेमाल करते हैं। श्वसन अथवा प्रकाश संश्लेषण के तहत उत्पन्न अपशिष्ट गैसों (CO_2, O_2 तथा H_2O) को पत्तियों में उपस्थित स्टोमेटा व तनों में उपस्थित रंध्रों के जरिए मुक्त करते हैं। प्रकाश संश्लेषण से संबंधित कुछ अपशिष्ट वृक्ष अपनी पत्तियों व छाल में एकत्र करते हैं। अत: इन्हें मुक्त करने के लिए वे अपनी पत्तियों व छाल को गिराते हैं। कुछ अपशिष्ट उत्पाद हानिरहित उत्पादों में परिवर्तित कर दिए जाते हैं जो पौधों के शरीर में संचित होते रहते हैं। रबड़ तथा रेफाइड ऐसे ही उत्पाद हैं। **(ग)** 1. बिंबाणु- बिंबाणु लाल रक्त कोशिकाओं से आकार में छोटे होते हैं। ये रक्त में थक्के बनाने में सहायता करते हैं। 2. रक्त वाहिकाएँ - रक्तवाहिकाएँ निम्न प्रकार की होती हैं- धमनियाँ, शिराएँ एवं कोशिकाएँ। रक्त बहुशाखीय लचीली नलिकाओं के माध्यम से संचरित होता है। इन्हें रक्त वाहिकाएँ कहते हैं। हृदय से रक्त ले जाने वाली वाहिकाएँ धमनियाँ कहलाती हैं। ऐसी नलिकाएँ जो शरीर के विविध अंगों से अशुद्ध रक्त लेकर जाती हैं शिराएँ कहलाती हैं। 3. रक्त में मुख्यत: श्वेत रक्त कोशिकाएँ, लाल रक्त कोशिकाएँ तथा बिंबाणु सम्मिलित होते है। 4. सर्वभौम रक्तदान कर्त्ता- ऐसे लोग जिनका रक्त वर्ग O का होता है, सर्वभौम रक्तदान कर्त्ता

कहलाते हैं। अत: इनका रक्त किसी भी रक्त वर्ग के व्यक्ति को दिया जा सकता है। 5. सर्वभौम रक्तप्राप्तकर्त्ता- ऐसे लोग जिनका रक्त वर्ग AB होता है, सर्वभौम रक्तप्राप्तकर्त्ता कहलाते हैं। ये सर्वभौम रक्तदानकर्त्ता के विपरित होते हैं। 6. महाधमनी - वह मुख्य धमनी जो हृदय से जुड़ी हुई होती है एवं अन्य छोटी-छोटी धमनियाँ महाधमनी से जुड़ी होती हैं। **(घ)** छात्र स्वयं करें। **(ङ)** 1. ङ 2. छ 3. क 4. च 5. ग 6. ख 7. घ **(च)** 1. ऑक्सीजन, भोजन 2. घुला 3. पत्तियाँ 4. हृदय 5. 72 **(छ)** 1. स 2. ग 3. स **क्रियाकलाप** – छात्र स्वयं करें।

अध्याय- 10 पौधों में प्रजनन

(क) 1. समस्त सजीव वस्तुएँ अपनी संख्या में वृद्धि करने के लिए अपने जैसी संतान की उत्पत्ति करती हैं। वंश वृद्धि की इस प्रक्रिया को ही प्रजनन कहते हैं। 2. अमीबा द्विअंगी विभाजन का उदाहरण है। 3. अनेक फफूँद तथा जीवाणु उपर्युक्त परिस्थितियों में बीजाणुओं द्वारा उत्पन्न होते हैं। बीजाणु अत्यंत लघु अथवा सूक्ष्मदर्शी द्वारा उत्पन्न होते हैं। बीजाणु अत्यंत लघु अथवा सूक्ष्मदर्शी संरचनाएँ होती हैं जो एक सख्त आवरण के बीच विद्यमान पायी जाती हैं। 4. जब आलू को अनेक टुकड़ों में इस तरह काटा जाता है कि उसके प्रत्येक टुकड़े में एक 'आँख' अथवा कलिका विद्यमान हो तथा उन टुकड़ों को मिट्टी में दबा दिया जाता है। यह आँख अथवा कलिका अंकुरित होती है तो इससे नए पौधे की पत्तियाँ तथा जड़े विकसित होना प्रारंभ कर देती हैं। 5. दाब कलम विधि के अंतर्गत किसी पौधे की निम्न टहनी को मोड़कर मिट्टी की परत में दबा दिया जाता है। मिट्टी की परत पर जल का छिड़काव करके उसे आर्द्र बनाए रखते हैं। कुछ दिनों इसमें नए पौधे के रूप में जड़ विकसित हो जाती हैं तथा वह टहनी एक नए पौधे का रूप ले लेती है। इसे दाब कलम विधि कहते हैं। 6. ऊतक कृषि के तहत किसी पौधे के वृद्धि युक्त शीर्ष से ऊतक का टुकड़ा काट लिया जाता है। कोशिकाएँ अलग करके नियंत्रित परिस्थितियों में पोषक पदार्थों के उपर्युक्त माध्यम में हार्मोंस निहित रहते हैं जो कोशिका का विभाजन करते हैं। 7. **वानस्पतिक प्रजनन की हानियाँ :-** वानस्पतिक प्रजनन की अधिकांश विधियाँ जनक पौधे की हूबहू अथवा वास्तविक प्रतिकृति उत्पन्न करती हैं। अत: नए पौधे में उसके जनक पौधे में उपस्थित अवांछित विशेषताएँ भी स्थानांतरित हो जाती हैं। इन पौधों का प्रकीर्णन बड़े पैमाने पर संभव नहीं हो पाता है। 8. लैंगिक प्रजनन सर्वसमान्य विधि है जिसके तहत अधिकांश पौधे जन्म लेते हैं। लैंगिक प्रजनन के लिए नर तथा मादा दो जनकों की आवश्यकता होती है। 9. कीट एक फूल से अन्य फूल की यात्रा करते हैं। वे मकरंद को चूसने के लिए फूल के आधार तक पहुँचने का प्रयास करते हैं। जब वे ऐसा करते हैं अर्थात् फूलों के परागकोश तथा स्त्री केसर से होकर गुजरते हैं तो कीट की गति के कारण पारगकोश को झटका लगता है। इस तरह वह झुक अथवा मुड़ जाता है तथा कीट के पृष्ठ पर स्पर्श होता है। इस दौरान उसकी पीठ पर पराग कण निक्षेपित हो जाते हैं। जब वही कीट मकरंद चूसने के लिए किसी अन्य फूल पर जाता है, तो ये पराग कण वहाँ गिर जाते हैं। 10. प्रकीर्णन वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा बीज दूरवर्ती स्थान पर ले जाए जाते हैं ताकि वे पौधे के आसपास न उगें तथा पौधे आसानी से विस्तारित हो सकें। **हॉट प्रश्न –** 1. वनस्पतिक प्रजनन की अधिकांश विधियाँ जनक पौधे की हूबहू अथवा वास्तविक प्रतिकृति उत्पन्न करती है। अतः नए पौधे में उसके जनक पौधे में उपस्थित अवांछित विशेषताएँ भी स्थानांतरित हो जाती है। 2. पौधों की पत्तियों के सीमांत भाग पर कलिकाएँ उपस्थित पायी जाती है। ये कलिकाएँ मैदान पर गिरकर नए पौधों के रूप में विकसित हो जाती है। **(ख)** 1. समस्त सजीव वस्तुएँ अपनी संख्या में वृद्धि करने के लिए अपने जैसी संतान की उत्पत्ति करती हैं। वंश वृद्धि की इस प्रक्रिया को ही प्रजनन कहते हैं। प्रजनन अपनी प्रजाति अथवा वंश को सतत बनाए रखने के लिए अनिवार्य है। कोई भी एक विशेष किस्म की प्रजाति किसी अन्य प्रजाति के जीव को उत्पन्न करने में सक्षम नहीं होती है। इस तरह हम कह सकते हैं कि कोई विशेष प्रजाति अपने मृत सदस्यों के स्थान पर नए सदस्यों को जन्म देने के माध्यम से ही अपने वंश को सदैव बनाए रख सकती है। 2. ऐसा प्रजनन जिसमें लैंगिक संबंधी अंगों की बिना ही प्रजनन कार्य संभव हो जाता है, अलैंगिक प्रजनन कहलाता है। किसी नए जीव को जन्म देने के लिए केवल एक जीवधारी ही पर्याप्त होता है। 3. वानस्पतिक प्रजनन एक ऐसी विधि है जिसके अंतर्गत बिना दो जनक सजीवों अर्थात् नर तथा मादा एवं बिना किसी विशेष प्रजनन संबंधी अंग के नए पौधों को जन्म मिल जाता है। इसके तहत नए पौधों की उत्पत्ति मुख्यत: पौधे की पत्तियों, तनों तथा जड़ों से होती है। **वानस्पतिक प्रजनन के लाभ निम्नलिखित हैं :-** यह किसानों को त्वरित गति से नए पौधे उगाने के काबिल बनाता है क्योंकि इसके तहत पौधों से बीज उत्पन्न होने की प्रतीक्षा करने के बजाय उनके विविध भागों से नए पौधे उगा लिए जाते हैं। बीजरहित पौधों को उगाना संभव होता है। ऊतक कृषि को किसी ऋतु विशेष के बजाए वर्ष भर प्रयोग में लाया जा सकता हे। वानस्पतिक प्रजनन से उत्पन्न पौधों को उनके प्रारंभिक काल में बीजों से उगने वाले पौधों की तुलना में बहुत कम देखभाल की जरूरत पड़ती है। 4. छात्र आरेख स्वयं बनाए। 5. वह प्रक्रिया जिसके तहत किसी फूल के पराग कण पराग कोश से वतिकाग्र में स्थानांतरित होते हैं, वे किसी समान अथवा उससे संबंधित किसी अन्य प्रजाति के फूल में स्थानांतरित हो सकते हैं। यह प्रक्रिया परागण कहलाती है। स्थलीय पौधों के फूलों में परागण सामान्यत: कीटों तथा वायु द्वारा संपन्न किया जाता है। कुछ फूलों में परागण जंतुओं द्वारा भी संपन्न होता है। कुछ जलीय पौधों में परागण प्रवाहित जल द्वारा भी संपन्न होता है। 6. कीटों द्वारा परागित होने वाले पौधों में निम्नलिखित विशेषताएँ होती हैं - (क) इन पौधों के फूल विभिन्न रंगों के होते हैं। (ख) इनके फुल सुगंधित होते हैं। (ग) इनके फूलों में स्थित मकरंद कीटों को अपनी ओर आकर्षित करता है। 7. युग्मग्ज की रचना के बाद बाह्य दल, पुष्प दल, वर्तिकाग्र, वर्तिका आदि सूख जाते हैं। केवल अंडाशय शेष रह जाता है। प्रत्येक बीजांड तब बीज के रूप में विकसित होता है तथा युग्मग्ज भ्रूण के रूप में विकसित बीजांड जिसमें भ्रूण विद्यमान होता है, बीज के रूप में जाना जाता है। जैसे ही बीज बनते हैं अंडाशय फूलना शुरू कर देता है। समय के साथ-साथ यह फल के रूप में परिवर्तित होता है। अत: फल वास्तव में एक विकसित अंडाशय होता है। 8. यदि फल अथवा बीज दूरवर्ती स्थानों पर बिखरने के बजाए पौधे के निकट ही बिखर जाते हैं तो वे पौधे के आसपास ही उग जाते है। इससे पौधे के प्रसरण अथवा विस्तार पर अंकुश लग जाता है। इस स्थिति पर नियंत्रण पाने में मदद करने वाले प्रमुख कारक पवन, प्रवाहित जल, पशु आदि हैं जो इनके फलों या बीजों के प्रकीर्णन में सहयोग देते हैं। वायु द्वारा प्रकीर्णन- कुछ फलों अथवा बीजों के पंख अथवा रोएँ होते हैं। अत: ऐसे फल या बीज वायु के साथ आसानी से उड़ सकते हैं। इसके अतिरिक्त कुछ बीज अत्यधिक हल्के होने के कारण सरलता से हवा के साथ उड़ जाते हैं। जल द्वारा प्रकीर्णन- कुछ पेड़-पौधे जल राशियों में अथवा आस-पास उगते हैं। इन पौधों के बीज अथवा फल जल के साथ सरलता से एक से अन्य स्थानों पर बह जाते हैं तथा उपर्युक्त परिस्थितियाँ पाकर वहाँ उग जाते हैं। **(ग)** छात्र अध्यापक की सहायता से स्वयं करें। **(घ)** छात्र अध्यापक की सहायता से स्वयं करें। **(ङ)** 1. ख 2. घ 3. च 4. ङ 5. ग 6. क **(च)** 1. संतान 2. तना 3. वानस्पतिक 4. पपीता, मक्का 5. युग्मग्ज **क्रियाकलाप** – छात्र स्वयं करें।

अध्याय– 11 गतिशील वस्तुएँ तथा मापन

(क) 1. समय वह है जिसे हम घड़ी पर पाते अथवा पढ़ते हैं। 2. पृथ्वी द्वारा अपने अक्ष पर एक घूर्णन पूरा करने में लगने वाला समय दिन कहलाता है। पृथ्वी सूर्य के चारों ओर परिक्रमा करती है। एक परिक्रमा पूरी करने में एक वर्ष का समय लगता है। एक वर्ष में 12 मास होते हैं। 3. दिन को तीन लघु इकाईयों में विभाजित किया जाता है- घंटा, मिनट तथा सेकेंड। 4. एक लीप वर्ष में 366 दिन होते हैं। 5. सूर्य घड़ी का ऐसा उपकरण है जिसका प्राचीन काल में समय मापने के लिए प्रयोग किया जाता है। यह आसमान में सूर्य की स्थिति के अनुरूप किसी वस्तु की परछाई की लंबाई तथा स्थिति परिवर्तन के सिद्धांत पर आधारित है। 6. एक आदर्श साधारण लोलक भारी द्रव्यमान होता है जो एक भार, गैर विस्तारित तथा संपूर्ण रूप से लचीली डोरी पर लटका हुआ होता है। यह डोरी किसी मजबूत सहारे से बँधी होती है। 7. साँप, चिड़िया, मछली तथा हाथी आदि में गति दृष्टिगोचर होती है। 8. **गतिशील वस्तु की विशेषताएँ :-** गतिशील वस्तु की स्थिती को बताने के लिए संदर्भ बिंदु का होना अनिवार्य है। गतिशील वस्तु समय के साथ-साथ अपने संदर्भ बिंदु के प्रति अपनी स्थिति को बदलती रहती है। 9. **स्थिर गति की विशेषताएँ :-** गतिशील वस्तु समान समयांतरालों के समान दूरी तय करती है। समयांतराल बहुत छोटे भी हो सकते हैं। तय की गई दूरी तथा समय का ग्राफ एक सरल रेखा होता है। 10. चाल की मानक इकाई मीटर/सेकेंड है। **हॉट प्रश्न –** 1. जब कोई वस्तु समान समयांतरालों में समान दूरी तय करती है तो उसके द्वारा की जाने वाली गति स्थिर गति के रूप में जानी जाती है किन्तु जब कोई वस्तु समान समयांतरालो में असमान दूरी तय करती है तो उसे अस्थिर चाल कहते है अथवा उसकी चाल अस्थिर चाल कहलाती है। 2. क्वार्टज क्रिस्टल घड़ी की तकनीकी त्वरित स्पंदन वाले क्वार्ट्ज क्रिस्टल द्वारा नियंत्रित रहती है। इसका प्रत्येक सैकण्ड लगभग 33000 स्पंदन दर्शाता है। **(ख)** 1. समय हमारे दैनिक जीवन का एक महत्त्वपूर्ण अंग है। समय वह है जिसे हम किसी घड़ी पर पाते अथवा पढ़ते हैं। पृथ्वी अपने अक्ष पर घूर्णन करती है तथा इसके साथ ही साथ सूर्य के चारों ओर परिक्रमा करती है। पृथ्वी द्वारा अपने अक्ष पर एक घूर्णन पूरा करने में लगने वाला समय दिन कहलाता है। पृथ्वी सूर्य के चारों ओर एक परिक्रमा पूरी करने में लगने वाला समय दिन कहलाता है। पृथ्वी द्वारा सूर्य के चारों ओर एक परिक्रमा पूरी करने में लगने वाला समय एक वर्ष कहलाता है। एक वर्ष में 12 मास होते हैं। सामान्यत: एक मास अथवा महीने में 30 या 31 दिन होते हैं। इसके अतिरिक्त किसी साधारण वर्ष में फरवरी में 28 दिन तथा किसी लीप वर्ष के अंतर्गत फरवरी में 29 दिन होते हैं। 2. सौर घड़ी एक ऐसा उदाहरण है जिसका प्राचीन काल में समय मापने के लिए प्रयोग किया जाता था। यह आसमान में सूर्य की स्थिति के अनुरूप किसी वस्तु की लंबाई तथा स्थिति परिवर्तन के सिद्धांत पर आधारित है। सूर्य घड़ी द्वारा दिखाया जाने वाला समय लगभग सही होता है। यद्यपि सौर घड़ियों का उपयोग सूर्यास्त के बाद संभव नहीं होता है। 3. किसी ठोस सहारे से बँधी डोरी पर कोई धात्विक गेंद लटकाइए। इस साधारण लोलक को गति में लाइए। जब यह लोलक अपनी चरम स्थिति पर पहुँचे (जैसे A) तो इसके समय को नोट कर लीजिए। जब यह धातु की गेंद या बॉब पुन: स्थिति A पर पहुँचे तो गिनिए। यह गेंद प्रत्येक बार स्थिति A पर पहुँचती है। अपनी गिनती में एक-एक की वृद्धि करते जाए। ऐसे 25 दोलन पूरे हो जाने पर समय की जाँच कीजिए। अब 25 दोलनों में लगे समय को ज्ञात कीजिए। गणना : 25 दोलनों में लगाया गया समय = स 1 दोलन में लगा समय = स/25 4. क्वार्ट्ज क्रिस्टल घड़ी की तकनीकी त्वरित स्पंदन वाले क्वार्ट्ज क्रिस्टल द्वारा नियंत्रित रहती है। इसका प्रत्येक सेकेंड लगभग 33000 स्पंदन दर्शाता है। इनके एक इलैक्ट्रानिक परिपथ होता है जो इन स्पंदनों का प्रयोग सूइयों को चलाने अथवा घड़ी में संख्याओं को बदलने के लिए प्रयोग करता है। 5. जब कोई वस्तु अपने आसपास के प्रतिवेश के प्रति अपनी स्थिति में किसी तरह का परिवर्तन नहीं दर्शाती है, विश्राम अवस्था में कहलाती है। इसके विपरीत जब कोई वस्तु अपने प्रतिवेश एवं समय के संदर्भ में अपनी स्थिति को निरंतर बदलती रहती है तो वह गति अवस्था कहलाती है। 6. जब कोई वस्तु अपने आसपास के प्रतिवेश के प्रति अपनी स्थिति में किसी तरह का परिवर्तन नहीं दर्शाती है, विश्राम अवस्था में कहलाती है। 7. **गतिशील वस्तु की विशेषताएँ :-** गतिशील वस्तु की स्थिती को बताने के लिए संदर्भ बिंदु का होना अनिवार्य है। गतिशील वस्तु समय के साथ-साथ अपने संदर्भ बिंदु के प्रति अपनी स्थिति को बदलती रहती है। 8. किसी एक दूरी को तय करने में विविध वस्तुएँ विविध समय ले सकती हैं। अत: हम चाल को इस तरह से परिभाषित कर सकते हैं कि- किसी वस्तु द्वारा प्रति इकाई समय में तय की गई दूरी उसकी चाल कहलाती है। चाल की मानक इकाई मीटर/सेकेंड है। संक्षेप में इसे मी/से. लिखते हैं। 9. चाल दो प्रकार की होती हैं- स्थिर तथा अस्थिर। जब कोई गतिमान वस्तु समान समयांतरालों में समान दूरी तय करती है, भले ही ये समयांतराल कितने भी छोटे हों, स्थिर चाल कहलाती है। उदाहरण: यदि कोई वाहन एक घंटे में 30 किमी. की दूरी तय करता है और इसी तरह अगले घंटे में 30 किमी की ही दूरी तय करता है तथा इसी तरह आगे भी दूरियाँ तय करता है तो उसकी चाल, स्थिर चाल कहलाती है। जब कोई वस्तु समानांतरालों में असमान दूरी तय करती है तो उसे अस्थिर चाल कहते हैं। उदाहरण: यदि कोई वाहन पहले एक घंटे में 30 किमी., दूसरे घंटे में 25 किमी. तथा तीसरे घंटे में 15 किमी. की दूरी तय करता है और आगे भी इसी तरह समान समयांतरालों में असमान दूरी तय करता है तो उसकी चाल अस्थिर चाल कहलाती है। **(ग)** 1. घ 2. ग 3. च 4. ड 5. ख 6. क **(घ)** छात्र स्वयं करो। **(ङ)** 1. सूर्य घड़ी 2. लोलक दीवार घड़ी 3. रेत घड़ी 4. डिज़िटल घड़ी **(च)** छात्र स्वयं करें। **(छ)** 1. समय 2. अक्ष 3. 29 4. चौबीस, घंटे 5. सेकेंड 6. रेत घड़ी 7. विश्राम **क्रियाकलाप –** छात्र स्वयं करें।

अध्याय– 12 विद्युत धारा तथा परिपथ

(क) 1. किसी अंतराल क्षेत्र के माध्यम से बहने वाली आवेश की दर को विद्युत धारा के रूप में जाना जाता है। 2. विद्युत धारा को धनात्मक ध्रुव से ऋणात्मक ध्रुव तक पहुँचाने के लिए उसके परिपथ में प्रयुक्त होने वाले तार, बैटरी आदि विविध पदार्थ। 3. विद्युत धारा के नियमित प्रवाह वाले व्यवस्थित मार्ग को पूर्ण विद्युत परिपथ कहते हैं। 4. **विद्युत सुचालक के उदाहरण हैं :-** धातुएँ, नमक विलयन, अम्ल विलयन, क्षार आदि। 5. **विद्युत कुचालक के उदाहरण हैं :-** प्लास्टिक, रबड़, कागज़, वायु आदि। 6. विद्युत परिपथ के विविध घटकों के लिए विविध चिह्नों का उपयोग किया जाता है इन्हें विद्युत संकेत कहते हैं। 7. **विद्युत परिपथ के दो घटक हैं :-** सैल या बैटरी तथा धनात्मक टर्मिनल। 8. जब विद्युत धारा किसी तार में से प्रवाहित होती हे तो वह तार गरम हो जाती है। इसे विद्युत धारा का ऊष्मण अथवा प्रभाव कहते हैं। 9. जब धनात्मक एवं ऋणात्मक तारें एकाएक परस्पर स्पर्श कर लेती हैं तो शार्ट सर्किट कहलाता है। 10. कभी-कभी किसी शार्ट-सर्किट की वजह से परिपथ में एकाएक धारा प्रवाह की दर बहुत बढ़ जाती है। यह स्थिति तारों को बहुत अधिक गरम कर देती है तथा आग लगने का कारण बन सकती है। प्रत्येक परिपथ में निहित संगलक अथवा फ्यूज परिपथ को इस स्थिति से सुरक्षित रखता है। 11. एल्युमिनियम की पत्तरी की एक 3 सेमी. लंबी पट्टी लो। एल्युमिनियम की इस पट्टी के दोनों सिरों पर दो क्रोकोडाइल पिनें लगाओ। इन्हें किसी स्वीच

की मदद से किसी बैटरी में संयोजित करो। संगलन अथवा फ़्यूज तैयार है। 12. विद्युत चुंबक का प्रयोग टेलीफोन, टेलीग्राफ, विद्युत मोटरों आदि में किया जाता है। बुलेट ट्रेन भी विद्युत चुंबक सिद्धांत पर ही कार्य करती हैं। **हॉट प्रश्न –** 1. विद्युत परिपथ विद्युतधारा के लिए एक ऐसा सतत् संयोजित पथ होता है जिसमें परिपथ के विविध घटक यथा लैंप, संयोजन तारें आदि तथा विद्युत स्रोत, यथा सैल अथवा बैटरी समाहित रहते है। 2. जब घंटी के बटन को दबाया जाता है तो विद्युत परिपथ पूर्ण हो जाता है तथा विद्युत धारा कुंडली में से प्रवाहित होने लगती है। विद्युत धारा के कारण चुंबकत्व उत्पन्न होता है तथा नरम लोहे का आर्मेचर इसकी ओर आकर्षित होता है। परिणाम स्वरूप हथौड़ा गोंग पठ प्रहार करता है तथा इस तरह घंटी से ध्वनि उत्पन्न होती है या घंटी बजती है। **(ख)** 1. किसी अंतराल क्षेत्र के माध्यम से बहने वाली आवेश दर को विद्युत धारा अथवा सामान्य धारा के रूप में जाना जाता है। अधिकांश विद्युत उपकरण विद्युत धारा के इसी नियम पर कार्य करते हैं। किसी संचालक के अंदर इलैक्ट्रान की स्वच्छंद गति के कारण विद्युत उत्पन्न होती है। यह विद्युत धारा संयोजन पदार्थों के माध्यम से अपने स्त्रोत से प्रवाहित होता है। उसके उपरांत यह विविध संयोजन पदार्थों के माध्यम से प्रवाहित होता है तथा अंततः ऋणात्मक ध्रुव तक पहुँचता है और इस तरह विद्युत परिपथ संपूर्ण अथवा पूर्ण हो जाता है। 2. विद्युत परिपथ विद्युत धारा के लिए एक ऐसा संतत संयोजित पथ होता है जिसमें परिपथ के विविध घटक यथा लैंप, संयोजन तारें आदि तथा विद्युत स्त्रोत यथा सैल अथवा बैटरी समाहित रहते हैं। विद्युत धारा के नियमित प्रवाह वाले व्यवस्थित मार्ग बंद अथवा पूर्ण विद्युत कहलाता है। सैल अथवा बैटरी के ऋणात्मक तथा धनात्मक टर्मिनल के बीच में उपस्थित विविध तारों/उपकरणों को संयुक्त रूप से विद्युत परिपथ के घटक कहते हैं। विद्युत धारा का प्रवाह केवल उसी अवस्था में होता है जब विद्युत परिपथ के समस्त घटक एक-दूसरे के साथ विद्युत संपर्क में होते हैं। यदि इनमें से कोई भी घटक विद्युत संपर्क में नहीं होता तो विद्युत धारा का प्रवाह बंद हो जाता है। ऐसा विद्युत परिपथ अपूर्ण परिपथ कहलाता है। 3. ऐसे पदार्थ जिनमें से विद्युत धारा सरलता से गुजर जाती है, विद्युत सुचालक पदार्थ कहलाते हैं। इसके विपरीत जो पदार्थ तथा तत्त्व अपने आर-पार विद्युत धारा के प्रवाह की अनुमति नहीं देते, विद्युत सुचालक अथवा विद्युत रोधी पदार्थ कहलाते हैं। उदाहरणतः धातुएँ, नमक विलयन, अम्ल विलयन, क्षार आदि। विद्युत सुचालक प्लास्टिक, कागज, रबड़, मोम आदि विद्युत कुचालक हैं। 4. जब विद्युत धारा किसी तार में से प्रवाहित हो तो वह तार गरम हो जाता है। इसे विद्युत धारा का ऊष्मण अथवा तापन प्रभाव कहते हैं। विद्युत धारा के ऊष्मण प्रभाव के आधार पर अनेक विद्युत उपकरण कार्य करते हैं। ऐसे कुछ उपकरण हैं- गीजर, हीटर, विद्युत टोस्टर आदि। 5. एक 75 सेमी. लंबी ताँबे की प्रतिरोधित तार का टुकड़ा 4 इंच लंबी लोहे की कील पर सख्ती से बाँध कर एक कुंडली बनाओ। इसके एक स्वच्छंद सिरे को सैल टर्मिनल से जोड़ो। कील के उस ओर के सिरे के पास जिस पर तार की कुंडली लपेटी गई है कुछ लोहे की कीलें रखो। अब तार के स्वतंत्र सिरे को सैल से जोड़ों आप देखेंगे कि कीलें बड़ी कील के शीर्ष से चिपक जाती है। इस क्रियाकलाप में विद्युत धारा के प्रवाह के समय तार की कुंडली चुंबक की भाँति व्यवहार करती है। जब विद्युत धारा का प्रवाह बंद कर देते हैं तो कुंडली सामान्यतः चुंबकत्व खो देती है। चुंबक की तरह व्यवहार करने वाली ऐसी कुंडली, विद्युत चुंबक कहलाती है। **विद्युत चुंबक के व्यावहारिक उपयोग :-** कारखानों में भारी सामान जैसे लोहे, इस्पात आदि को उठाने तथा उसे एक से अन्य स्थान पर रखने के लिए चुंबक की शक्ति का इस्तेमाल किया जाता है। टेलीफोन, टेलीग्राफ, विद्युत जनरेटरों आदि में विद्युत चुंबक का उपयोग होता है। बुलेट ट्रेन भी विद्युत चुंबक सिद्धांत पर ही कार्य करती है। अस्पतालों में शल्य चिकित्सक आँखों या घावों से इस्पात की किरच आदि को निकालने के लिए इसी चुंबक का प्रयोग करते हैं। 6. कुंडली में विद्युत प्रवाह की वृद्धि करके विद्युत चुंबक की शक्ति में वृद्धि करने के लिए क्रोड के चारों ओर की कुंडलियों की संख्या भी बढ़ाई जा सकती है। 7. विद्युत घंटी वह उपकरण है जो प्रत्यक्षतः विद्युत चुंबक के आधार पर कार्य करता है। यह हमारे घरों तथा कार्यालयों में काम आने वाला एक सामान्य विद्युत उपकरण है। जब घंटी के बटन को दबाया जाता है तो विद्युत परिपथ पूर्ण हो जाता है तथा विद्युत धारा कुंडली से प्रवाहित होने लगती है। विद्युत धारा के कारण चुंबकत्व उत्पन्न होता है तथा नरम लोहे का आर्मेचर इसकी ओर आकर्षित होता है। परिणामस्वरूप हथौड़ा गोंग पर प्रहार करता है तथा इस तरह घंटी की ध्वनि उत्पन्न होती है। **(ग)** 1. बल्ब 2. एमीटर 3. धारामापी या G 4. मीटर 5. तंतु लैंप 6. सैल **(घ)** 1. ग 2. घ 3. ख 4. ङ 5. क **(ङ)** छात्र स्वयं करें। **(च)** 1. स 2. अ 3. स 4. अ 5. ब 6. अ 7. ब **क्रियाकलाप –** छात्र स्वयं करें।

अध्याय- 13 वर्षा, गरजना और बिजली

(क) 1. पृथ्वी धरातल के साथ-साथ वायु की क्षितिजीय गति पवन कहलाती है। 2. दबाव की परिस्थितियों में होने वाले त्वरित परिवर्तन ही वायु के प्रवाह अथवा बहाव के कारण बनते हैं। 3. कुछ पवनें वायुमंडलीय परिस्थितियों में परिवर्तन के फलस्वरूप कुछ समयावधि के लिए उल्टी दिशा में बहती है। ऐसी पवनों को समसामयिक पवनें कहते हैं। 4. वे पवन जो सारा साल एक निश्चित दिशा में प्रवाहित होती रहती हैं स्थायी पवनें या ग्रहीय पवनें कहलाती हैं। 5. ऐसी पवनें जो शीतोष्ण कटिबंध में उपोष्ण कटिबंधीय उच्च दाब क्षेत्रों की ओर प्रवाहित होती हैं, पश्चिमी पवनें कहलाती हैं। 6. मानसून पवनों का विकास भारतीय उपमहाद्वीप के ऊपर देखने को मिलता है। 7. रात के समय स्थल भाग अपने निकटतम स्थित जल भंडारों की तुलना में अतिशीघ्र ठंडा हो जाता है। स्थल पर उच्च दाब क्षेत्र उत्पन्न हो जाता है। अतः पवनें स्थल से सागर की तरफ प्रवाहित होने लगती हैं। ये पवनें स्थलीय समीर कहलाती हैं। 8. उत्तर अमेरिका के राकी पर्वत के पूर्वी पार्श्व में जो गरम तथा शुष्क पवनें प्रवाहित होती हैं, उन्हें चिनूक कहते हैं। 9. उत्तर-पश्चिम अफ्रीका में प्रवाहित होने वाली शुष्क पवनें, हरमत्तन के नाम से जानी जाती है। ये पवनें पूर्णतः शुष्क तथा अशंतः शीतल होती है। 10. तड़ित झंझा एक अत्यंत शक्तिशाली तूफान होता है जो मुख्यतः भारी वर्षा या ओलों के साथ-साथ बिजली और गरजना से युक्त ऊपर उठती हुई प्रचंड पवनों का कारण बनता है। **तडित झंझा के समय निम्न सावधानियाँ रखनी चाहिए :-** किसी अकेले वृक्ष की शरण नहीं लेनी चाहिए। किसी धात्विक छड़ वाले छाते का प्रयोग न करें। किसी धात्विक वस्तु से दूर बने रहने का प्रयास करें। 11. चक्रवात के समय चलते वाहन को रोक देना चाहिए। सुरक्षित आश्रयों की पहचान करें ताकि वहाँ शरण ली जा सकें। चक्रवात की ऋतु से पूर्व घरों की खिड़कियों, दरवाजों, दीवारों आदि की मजबूती सुनिश्चित कर लें। **हॉट प्रश्न –** 1. उष्ण कटिबंध में उत्पन्न होने वाली प्रचण्ड वृत्ताकार पवनों को जो भारी वर्षा के साथ प्रकट होती है, चक्रवात के रूप में जाना जाता है। 2. पृथ्वी धरातल पर वायु की क्षितिजीय गति पवन कहलाती है। दबाव की परिस्थितियों में होने वाले त्वरित परिवर्तन ही वायु के प्रवाह अथवा बहाव के कारण बनते है। **(ख)** 1. उच्च दवाब क्षेत्रों से निम्न दबाव क्षेत्रों की ओर पवनें सदैव प्रवाहित होती रहती हैं। पृथ्वी धरातल के साथ-साथ वायु की क्षितिजीय गति पवन कहलाती है। वायु की उर्ध्वाधर अथवा लगभग उर्ध्वाधर गति अर्थात् जब वायु ऊपर की ओर उठती अथवा नीचे की ओर डूबती हुई गति करती है तो वह वायु धारा कहलाती है। दबाव की परिस्थितियों में

होने वाले त्वरित परिवर्तन ही वायु के प्रवाह अथवा बहाव के कारण बनते हैं। 2. ग्रहीय पवनों के कारण पृथ्वी धरातल पर उपस्थित लगभग स्थायी उच्च तथा निम्न दबाव क्षेत्र बनते हैं। **ये पवनें तीन प्रमुख प्रकार की होती हैं :-** व्यापारिक पवनें- ऐसी पवनें जो उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में तथा उपोष्ण कटिबंधीय उच्च दबाव क्षेत्रों में विषुवतीय निम्न दाब क्षेत्रों की ओर चलती हैं, व्यापारिक पवनों के नाम से जानी जाती हैं। पश्चिमी पवनें- ऐसी पवनें जो शीतोष्ण कटीबंध में उपोष्ण कटिबंधीय उच्च दाब क्षेत्रों की ओर प्रवाहित होती हैं, पश्चिमी पवनें कहलाती हैं। ध्रुवीय पवनें - ऐसी पवनें जो शीत कटीबंध में उपोष्ण कटिबंधीय उच्च दाब क्षेत्रों से उप ध्रुवीय क्षेत्रों की ओर प्रवाहित होती हैं, ध्रुवीय पवनों के नाम से जानी जाती हैं। 3. **आवर्ती पवनों की उत्पत्ति के निम्नलिखित कारण होते हैं :-** पृथ्वी धरातल का असमान रूप से शीतल अथवा गरम होना। वायुमंडलीय दबाव में होने वाला स्थानिक परिवर्तन। ये पवनें वर्ष की किसी खास अवधि या दिन को एक निश्चित दिशा में बहती है। इसके प्रमुख प्रकार हैं- मानसून पवनें और स्थलीय तथा सागरीय समीर। 4. तड़ित झंझा अत्यंत शक्तिशाली तूफान होता है जो मुख्यत: भारी वर्षा या ओलों के साथ-साथ बिजली और गरजना से युक्त ऊपर उठती हुई प्रचंड पवनों का कारण बनता है। तड़ित झंझा वायुमंडल में निलंबित जलवाष्प के लाखों बिंदुकों से ज्यादा और कुछ नहीं होता है जो सामान्यत: बिजली, वर्षा, ओलों तथा टोरंडो का कारण बनते हैं। दिन के समय सूर्य पृथ्वी धरातल को अत्यधिक गरम करता है। सतह के आसपास की वायु गरम हो जाती है क्योंकि गरम वायु ठंडी वायु की अपेक्षा हल्की होती है। अत: यह ऊपर उठना प्रारंभ कर देती है। यदि वायु आर्द्र होती है तो गरम वायु कपासी मेघों के रूप में संघनित हो जाती है। जब कपासी मेघ बहुत अधिक भारी हो जाते हैं तो इसके अंदर विद्यमान जल विशाल तथा भारी हो जाता है। जब उठती हुई वायु नहीं संभाल पाती तो यह वर्षा के रूप में धरती पर गिरने लगती है। इसी समय ठंडी वायु इस बादल में प्रवेश करने लगती है बादल नीचे की ओर उतरने लगता है। इस स्थिति में अधोगामी विस्थापन भारी जल को नीचे की ओर खींचता है तथा वर्षा करता है। जैसे ही इस बादल में अधो-विस्थापन होता है यह कपासी वर्षी मेघ में बदल जाता है कपासी वर्षी मेघ तड़ित झंझा का केन्द्र होता है और लगभग डेढ़ घंटे बाद तडित झंझा छितरना शुरू कर देता है। 5. **हमें तड़ित झंझा के समय निम्न सावधानियाँ रखनी चाहिए :-** किसी अकेले वृक्ष के नीचे शरण नहीं लेनी चाहिए। मैदान पर न लेटे। यदि आप उस समय जल में उपस्थित हो तो बाहर निकल आएँ तथा किसी भवन में शरण ले लें। किसी धात्विक छड़ वाले छाते का प्रयोग न करें। किसी धात्विक वस्तु से दूर बने रहने का प्रयास करें। 6. उष्णकटिबंध में उत्पन्न होने वाली प्रचण्ड पवनों को, जो भारी वर्षा के साथ प्रकट होती हैंचक्रवात के रूप में जाना जाता है। इनके केन्द्र में उच्च दाब उपस्थित होता है। चक्रवातों की उत्पत्ति का कारण गरम सागर का तापमान अपेक्षाकृत उच्च आर्द्रता तथा वायुमंडलीय अस्थीरता आदि संयुक्त रूप से बनते हैं। चक्रवात निम्न वायुमंडलीय दाब का क्षेत्र या कटिबंध होता है जो उष्ण महासागरों तथा शीतोष्ण तथा उष्ण कटिबंधीय अक्षांशों पर स्थित सागरों में उत्पन्न होता है। यह एक शक्तिशाली भँवरदार वायुमंडलीय विक्षोभ होता है जो प्रचण्ड वेग से चलने वाली पवनों जिनकी गति 300 किमी/घ. से अधिक होती है, के साथ प्रकट होता है। 7. **चक्रवात प्रबंधन हेतु निम्न कदम उठाने चाहिए :-** आपको टी.वी. तथा रेडियो पर मौसम संबंधी समाचार सुनने चाहिए। सुरक्षित आश्रयों की पहचान करें जैसे कि पक्के भवन तथा आपके क्षेत्र में विद्यमान चक्रवात शरण स्थल। मछुआरों को समय पर सूचित कर देना चाहिए ताकि वे सागर में न उतरें। चक्रवात के दौरान चलते वाहन को रोक देना चाहिए। लोगों को क्षतिग्रस्त विद्युत खंभों, तारों, पुलों एवं भवनों के बारे में सूचित कर देना चाहिए। प्रचंड चक्रवात की चेतावनी मिलने पर सुरक्षित स्थान पर पलायन करने के लिए तैयार रहें। **(ग)** 1. वायुधारा- वायु का उर्ध्वाधर अथवा लगभग उर्ध्वाधर गति यानी जब वायु ऊपर की ओर उठती अथवा नीचे की ओर डूबती हुई चलती हैं, वायु धारा कहलाती है। 2. ग्रहीय पवन- वे पवन जो सारा साल एक निश्चित दिशा में प्रवाहित होती रहती है स्थायी पवनें या ग्रहीय पवनें कहलाती हैं। 3. फॉन- शीत ऋतु में एल्पस पर्वत के आरपार जो शुष्क तथा गरम पवनें प्रवाहित होती हैं उन्हें फॉन कहते हैं। 4. उत्तर अमेरिका के राकी पर्वत के पूर्वी पार्श्व में जो गरम तथा शुष्क पवनें प्रवाहित होती हैं, चिनूक कहते हैं। 5. सूर्य की गरमी से सतह के आसपास की वायु गरम हो जाती है। गरम वायु ठंडी वायु की अपेक्षाकृत हल्की होती है। अत: यह ऊपर उठना प्रारंभ कर देती है। यदि वायु आर्द्र होती है तो गरम वायु कपासी मेघों के रूप में संघनित हो जाती है। **(घ)** 1. घ 2. ङ 3. च 4. ग 5. ख 6. छ 7. क **(ङ)** 1. स्थलीय समीर 2. ग्रहीय 3. फॉन 4. चिनूक 5. हरमत्तन 6. धरातल 7. सीडलिंग **(च)** छात्र अध्यापक की सहायता से स्वयं करें। **(छ)** 1. सत्य 2. असत्य 3. असत्य 4. सत्य 5. सत्य **(ज)** 1. पश्चिमी पवनें शीतोष्ण कटिबंध में चलती है। 2. हरमत्तन को डॉक्टर पवन भी कहते हैं। 3. चिनूक पवनों का संबंध रॉकी पर्वत से है। 4. आस्ट्रेलिया में चक्रवात को विली-लिलीज कहते हैं। **क्रियाकलाप** – छात्र स्वयं करें।

अध्याय– 14 प्रकाश

(क) 1. प्रकाश एक अदृश्य ऊर्जा है जो हमारी दृष्टि संवेदना का कारण बनती हैं। 2. यदि प्रकाश के लघु तरंगीय स्वभाव की उपेक्षा कर दी जाए तो हम उसे एक सरल रेखा के साथ-साथ प्रसरण करा पाते हैं। प्रकाश का सरल रेखा के रूप में प्रसरण करने का यह गुण उसका सरल रेखीय प्रसरण कहलाता है। 3. प्रकाश की किरण द्वितीय प्रकाशिक माध्यम द्वारा कोण परिवर्तन के साथ ही प्रथम प्रकाशिक माध्यम से वापस आ सकती है। यह परिघटना प्रकाश परावर्तन कहलाता है। **यह दो प्रकार का होता है:-** नियमित परावर्तन, अनियमित परावर्तन। 4. ऐसा कोई भी चिकना पॉलिश युक्त धरातल जो प्रकाश की किरणों को उसी माध्यम में वापस लौटा सकता है, दर्पण कहलाता है। 5. साधारण दर्पण से बनने वाला प्रतिबिंब वस्तु के समान आकार वाला होता है। 6. गोले से केंद्र C जो दर्पण का एक भाग हैं, दर्पण का वक्रता केंद्र कहलाता है। 7. गोलीय दर्पण वक्राकार के होते हैं। यह अपने ऊपर आपतित होने वाली किरणों को अभिसारित और अपसारित करते हैं। 8. दर्पण के फोकस F तथा इसके ध्रुव P के बीच की दूरी दर्पण की फोकस दूरी कहलाती है। 9. इंद्रधनुष में सात रंग होते है जैसे लाल, नारंगी, पीला, नीला, हरा, जामुनी एवं बैंगनी। 10. प्रकाश के उसके अवयवी रंगों में विभक्त होने की प्रक्रिया, वर्ण-विशेषण कहलाती है। **हॉट प्रश्न** – 1. वास्तविक प्रतिबिंब तथा आभासी प्रतिबिंब में अन्तर – **वास्तविक प्रतिबिंब** – (1) इसे पट्ट पर ले सकते है। (2) यह सदैव प्रतिलोमी होता है। (3) प्रकाश की किरणें परावर्तन या अपवर्तन के बाद एक बिन्दु पर मिलती है। **आभासी प्रतिबिंब** – (1) इसे पट्ट पर नहीं लिया जा सकता है। (2) यह सदैव सीधा किन्तु पार्श्विक रूप से प्रतिलोमी होता है। (3) प्रकाश की किरणें परावर्तन या अपवर्तन के बाद एक बिन्दु पर केवल मिलती प्रतीत होती है। 2. उत्तल लैंस द्वारा बनाया गया प्रतिबिंब सीधा तथा ह्वासित होता है जबकि अवतल लैंस हमेशा एक आभासी, सीधा तथा ह्वासमान प्रतिबिंब बनाता है। **(ख)** 1. प्रकाश एक अदृशय ऊर्जा है जो

हमारी दृष्टि संवेदना का कारण बनती है। यदि प्रकाश के लघु तरंगीय स्वभाव की उपेक्षा कर दी जाए तो हम उसे एक सरल रेखा के साथ-साथ प्रसरण करा पाते हैं। प्रकाश का सरल रेखा के रूप में प्रसरण करने का यह गुण, उसका सरल रेखीय प्रसरण कहलाता है। प्रकाश के सरल रेखीय प्रसरण का प्रत्यक्ष परिणाम परछाईं का बनना तथा ग्रहणों का लगना है। 2. अवतल दर्पण प्रकाश का परावर्तन अंदर की ओर से वक्राकार धरातल से करता है जबकि उत्तल दर्पण बाहर की ओर उभरे वक्राकार तल से प्रकाश का परावर्तन करता है। अवतल दर्पण का प्रयोग वाहनों के शीर्ष बत्तियों में परावर्तक के रूप में किया जाता है और चिकित्सक द्वारा दाँतों के पीछे का भाग देखने के लिए किया जाता है क्योंकि ये सीधा तथा प्रतिबिंब आवर्धित प्रतिबिंब बनाते हैं। उत्तल दर्पणों का प्रयोग पीछे देखने वाले दर्पणों के रूप में करते हैं क्योंकि ये सीधा, हवासमान तथा प्रतिबिंब चालक की आँखों के निकट बनाते हैं। 3. प्रकाश की किरण द्वितीय प्रकाशिक माध्यम द्वारा कोण परिवर्तन के साथ ही प्रथम प्रकाशिक माध्यम से वापस आ सकती है। यही परिघटना प्रकाश परावर्तन के नाम से जानी जाती है। **परावर्तन सामान्यत: दो प्रकार का होता है :-** नियमिति परावर्तन- जब विविध किरण पुंज किसी चिकने दर्पण के समान परावर्तित सतह पर आपतित होती हैं तो परावर्तित किरणं एक-दूसरे के सामानंतर गमन करती हैं। किसी चिकनी सतह पर होने वाला परावर्तन, नियमित परावर्तन कहलाता है। अनियमित परावर्तन- यदि परावर्तित सतह खुरदरी होती है तो किरणें विविध दिशाओं में परावर्तित हो जाती है। किसी खुरदरी सतह से परावर्तित होने वाला प्रकाश परावर्तन अनियमित परावर्तन कहलाता है। 4. वे लैंस जो किनारों की अपेक्षा बीच से मोटे होते हैं, उत्तल लैंस कहलाते हैं। सामान्यत: उत्तल लैंस, उस पर पड़ने वाले प्रकाश को अभिसारित कर देता है। इसी कारण इसे अभिसारी लैंस भी कह सकते हैं। यदि प्रकाश पुंज प्रधान धुरी के समांतर उत्तल लैंस पर गिरता है तो किरणें परावर्तन के पश्चात् अपसरित हो जाती है। यदि प्रकाश की किरणें पीछे की ओर प्रसारित होती हैं तो एक बिंदु से आती हुई प्रतीत होती हैं। यह बिंदु उत्तल लैंस का फोकस कहलाता है। चूँकि किरणें केवल एक फोकस से आती हुई प्रतीत होती हैं वास्तव में वहाँ मिलती नहीं है। अत: एक उत्तल लैंस में एक आभासी फोकस होता है। यदि आप उत्तल दर्पण को सूर्य के सम्मुख रखते हैं तो यह फोकस पर सूर्य का आभासी प्रतिबिंब बनाता है। 5. लगभग 10 सेमी. व्यास की गत्ते की एक वृत्ताकार डिस्क या चकती काटिए। इस डिस्क को सात भागों में विभाजित कीजिए। इन भागों को इन्द्रधनुष के सात रंगों से रंगिए। डिस्क के केन्द्र भाग पर एक छोटा सा सुराख बनाइए। अब इस डिस्क को किसी बॉल पैन की रीफिल की नोक पर ढीले से इस प्रकार लगाइए कि यह सरलता से घूर्णन कर सके। अब इस डिस्क को सूर्य के प्रकाश में लाइए एवं तेजी से घुमाइए। जब डिस्क तेजी से घूमती है तो इसके सभी रंग आपस में मिल जाते है तथा यह श्वेत सी प्रतीत होती है। इस डिस्क को सामान्यत: न्यूटन की डिस्क कहते हैं। **(ग)** 1. प्रकाश का सरल रेखीए प्रसरण - यदि प्रकाश के लघु तरंगीय स्वभाव की उपेक्षा कर दी जाए तो हम उसे एक सरल रेखा के साथ-साथ प्रसरण करा पाते हैं। प्रकाश का सरल रेखा के रूप में प्रसरण करने का यह गुण उसका सरल रेखीय प्रसरण कहलाता है। 2. प्रकाश का परावर्तन- प्रकाश की किरण द्वितीय प्रकाशिक माध्यम द्वारा कोण परिवर्तन के साथ ही प्रथम प्रकाशिक माध्यम से वापस आ सकती है। यह परिघटना प्रकाश परावर्तन कहलाता है। **यह दो प्रकार का होता है:-** नियमित परावर्तन, अनियमित परावर्तन। 3. दर्पण- ऐसा कोई भी चिकना पॉलिश युक्त धरातल जो प्रकाश की किरणों को उसी माध्यम में वापस लौटा सकता है, दर्पण कहलाता है। 4. प्रतिबिंब- किसी दर्पण या लैंस के आरपार या अंदर बनने वाली किसी प्रदीप्त वस्तु का बिंब ही उसका प्रतिबिंब कहलाता है। 5. दर्पण का वक्राकार केन्द्र- गोले से केंद्र C जो दर्पण का एक भाग है, दर्पण का वक्रता केंद्र कहलाता है। 6. दर्पण की प्रधान धुरी- दर्पण के वक्रता-केंद्र तथा उसके ध्रुव के बीच से गुजरने वाली रेखा, उसकी प्रधान धुरी कहलाती है। 7. दर्पण की फोकस दूरी- दर्पण के फोकस F तथा इसके ध्रुव P के बीच की दूरी दर्पण की फोकस दूरी कहलाती है। **(घ)** 1. ख 2. घ 3. च 4. ङ 5. ग 6. क **(ङ)** 1. परछाई बनना, ग्रहणों का लगना 2. परावर्तन 3. चिकनी 4. विसरित 5. सीधा **(च)** छात्र स्वयं करें। **(छ)** 1. सत्य 2. असत्य 3. सत्य 4. असत्य 5. सत्य **क्रियाकलाप –** छात्र स्वयं करें।

अध्याय– 15 जल का अभाव

(क) 1. जीवन के लिए जल का होना अनिवार्य है। कोई व्यक्ति भोजन के अभाव में कई सप्ताह तक जीवित रह सकता है किंतु जल के बिना वह मात्र कुछ ही दिन जीवित रह पाएगा। 2. पृथ्वी के धरातल का तीन चौथाई भाग जल से घिरा है। 3. पृथ्वी पर मनुष्य के उपयोग योग्य जल 0.01% है। 4. जल सिंचाई के लिए आवश्यक होता है। जल विद्युत का उत्पादन तथा विविध उद्योगों में काम आता है। जल का प्रयोग हम अपने दैनिक कार्य जैसे भोजन पकाना, सफाई करना आदि के लिए करते हैं। जल पौधों की वृद्धि के लिए भी आवश्यक हैं। 5. महासागरों तथा सागरों में उपस्थित जल सतही जल कहलाता है। इसके अतिरिक्त वर्षा का जो जल नदियों, नालों के रूप में बहता है तथा झीलों, जलाश्यों आदि के रूप में संचित होता है वह भी सतही जल का ही रूप होता हैं। 6. **भूमिगत जल के मुख्य स्त्रोत :-** कुएँ, नलकूप आदि सम्मिलित हैं। 7. भारत में कृषि क्षेत्र में उपयोग किए जाने वाले जल का 70 प्रतिशत है। 8. उद्योगों में जल के उपयोग का 25 प्रतिशत है। 9. भारत में लगभग 80% वर्षा केवल चार महीनों यानी जून से सितंबर तक होती है। वर्ष के शेष महीने में कोई वर्षा नहीं होती है अर्थात् ये महीने शुष्क रहते हैं। अत: इन महीनों में जल का अभाव बना रहता है। जब वर्षा ऋतु में काफी दिनों अथवा महीनों तक भी नहीं होती है तो जल के अभाव के कारण सूखे की स्थिति पनप जाती है। 10. **जल सरंक्षण के उपाय:-** परिवार नियोजन को अपनाते हुए बढ़ती हुई जनसंख्या को नियंत्रित किया जाना चाहिए। हमें अपने घरों तथा खेतों में जल की बर्बादी से बचना चाहिए। **हॉट प्रश्न –** 1. रोजगार के अवसरों में कमी आ जाती है। स्वच्छता की विकृत परिस्थितियों के फलस्वरूप रोगों के फैलने की आशंका बनी रहती है। भूखमरी के कारण जीवन की गंभीर हानि होती है। 2. जब झीलों, तालाबों तथा वर्षा से जल भूमि के अंदर चला जाता है तो वह मिट्टी के कणों अथवा बजरी कणों अर्थात् मिट्टी या शैलों की अपारगम्य परतों में संचित हो जाता है। मृदा की विविध परत ही अपारगम्य परत होती है। **(ख)** 1. जीवन के लिए जल का होना अनिवार्य है। कोई व्यक्ति भोजन के अभाव में कई सप्ताह तक जीवित रह सकता है। किंतु जल के बिना वह मात्र कुछ ही दिन जीवित रह पाएगा। मानव शरीर के कुल भार के 70% भाग की रचना जल से ही होती है। जल मानव शरीर में घटित होने वाली उपापचय संबंधी अभिक्रियाओं में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। जल हमारे शरीर के तापमान को नियंत्रित बनाए रखने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। गरम मौसम में हम प्रचुर मात्रा में जल का सेवन करते हैं। इस तरह हमारे शरीर का तापमान नियंत्रित रहता है। 2. जल बीजों के अंकुरण के लिए ही अनिवार्य नहीं बल्कि पौधों की वृद्धि के लिए भी आवश्यक है। इसके अतिरिक्त जल मृदा से पोषक पदार्थ तथा पत्तियों से भोजन के अन्य भागों

में संचालन में भी विशेष योगदान करता है। 3. सतही जल- महासागरों तथा सागरों में उपस्थित जल सतही जल कहलाता है। इसके अतिरिक्त वर्षा का जो जल नदियों, नालों के रूप में बहता है तथा झीलों, जलाशयों आदि के रूप में संचित होता है वह भी सतही जल का ही रूप होता है। नदियों तथा नालों को पर्वतों पर जमीं बर्फ के पिघलने से भी जल की प्राप्ति होती है। सतही जल में विविध प्रकार के लवण तथा निलंबित अशुद्धियाँ घुली रहती हैं। इसमें जीवाणु भी उपस्थित होते हैं। भूमिगत जल- जब झीलों, तालाबों तथा वर्षा से जल भूमि के अंदर चला जाता है तो वह मिट्टी के कणों अथवा बजरी कणों या शैलों की अपारगम्य परतों से संचित हो जाता है। यह जल भूमिगत जल कहलाता है। भूमिगत जल में निलंबित अशुद्धियाँ नहीं पायी जाती हैं। इसका कारण यह है कि जल मृदा की विविध परतों में निस्पंदित होते हुए अथवा छानकर भूमि के अंदर संचित होता है। 5. जल के अभाव की स्थिति उस समय पनपती है जब जनसंख्या की निरंतर वृद्धि तथा जल के आवश्यकता से अधिक उपयोग के कारण उसकी माँग की तुलना में उसकी आपूर्ति की मात्रा बहुत कम रह जाती है। **हमारे देश में जल के अभाव के निम्नलिखित कारण है :-** भारत में लगभग 80% वर्षा केवल चार महीनों यानी जून से सितंबर तक होती है। वर्ष के शेष महीने में कोई वर्षा नहीं होती है अर्थात् ये महीने शुष्क रहते हैं। अत: इन महीनों में जल का अभाव बना रहता है। जब वर्षा ऋतु में काफी दिनों अथवा महीनों तक भी नहीं होती है तो जल के अभाव के कारण सूखे की स्थिति पनप जाती है। वर्ष दर वर्ष औसत वर्षा दर में भी भिन्नता बनी रहती है। वर्षा सदैव समान मात्रा में नहीं होती है। अत: किसी क्षेत्र में बहुत अधिक मात्रा होती है तो किसी क्षेत्र में नामात्र होती है। भूमिगत जल स्तर का निरंतर नीचे गिरते जाना भी जलाभाव का कारण बनता है। **6. भूमिगत जल स्तर गिरने के प्रमुख कारण है :-** हमारे देश में भूमिगत जल का शोषण उसकी क्षतिपूर्ति की अपेक्षा बहुत अधिक द्रुत गति से होता है। अंधाधुंध वनों की कटाई तथा अतिपशुचारण के तहत वृक्षों का वृहत स्तर पर विनाश होता है। वनस्पति वर्षा के जल के बहाव को मंद तथा मृदा द्वारा वर्षा जल के अवशोषण अथवा जल के भूमि में रिसने की दर में वृद्धि करती है। जल के व्यर्थ हो जाने के कारण भी जल के अभाव की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। भारतीय कृषि क्षेत्र में गहन सिंचाई के फलस्वरूप लगभग 30 प्रतिशत जल की बर्बादी होती है। **7. जलाभाव के मानव तथा जंतुओं के जीवन पर पड़ने वाले प्रभाव :-** फसलें बर्बाद हो जाती हैं। पेयजल को लाने के लिए काफी दूर जाना पड़ता है। पशुओं की उत्पादकता में कमी आ जाती है। जल की खरीद के लिए ऊँची कीमतें चुकानी पड़ती हैं। भुखमरी के कारण जीवन की गंभीर हानि होती है। अपराधिक गतिविधियों में बढ़ोतरी होती है। रोजगारों के अवसरों में कमी आती है। **(ग)** 1. ङ 2. ख 3. घ 4. ग 5. क **(घ)** 1. तीन-चौथाई 2. 70% 3. महासागरों, सागरों 4. नलकूप 5. 70% 6. अस्सी, जून, सितंबर 7. 25 **(ङ)** छात्र अध्यापक की सहायता से स्वयं करें। **(च)** 1. असत्य 2. असत्य 3. सत्य 4. सत्य 5. असत्य 6. सत्य **क्रियाकलाप –** छात्र स्वयं करें।

कक्षा - 8

अध्याय- 1 फसल उत्पादन

(क) 1. आदिमानव अपने भोजन के लिए मुख्यत: वन्य जंतुओं का शिकार करके एवं वन्य पौधों से फल-फूल व कंद-मूल आदि एकत्र करके जुटाता था। 2. किसी विशाल भू-भाग पर एक ही समय में एक ही प्रकार के असंख्य पौधों को उगाना तथा उनसे वांछित उत्पादन प्राप्त करना कृषि कहलाता है। 3. पौधों से प्राप्त विविध प्रकार के अनाज खाद्यान्न कहलाते हैं। कुछ प्रमुख खाद्यान्न हैं- गेहूँ, चावल, मक्का, ज्वार आदि। 4. प्रमुख तिलहन फसलें हैं- मूँगफली, सरसों, सोयाबीन, तिल आदि। 5. रोपण कृषि के अन्तर्गत पौधों को व्यावसायिक तौर पर उगाया जाता है। अर्थात् वह कृषि तथा फसलें जो व्यावसायिक तौर पर उगाई जाती हैं रोपण कृषि कहलाती है। ये फसलें व्यापारिक लाभ प्रदान करने वाली फसलें होती हैं। इनके उदाहरण हैं- चाय, कॉफी, बाँस, रबड़ आदि। 6. प्रमुख खरीफ फसलें हैं- चावल, मक्का, बाजरा, कपास, मूँगफली आदि। 7. बुआई का कार्य दो प्रकार से किया जाता है- मानव द्वारा और बीज बोने की मशीन अथवा सीड ड्रिल से। 8. नालीदार सिंचाई में खेतों में नालियाँ बना दी जाती हैं तथा उनके द्वारा पानी पहुँचाया जाता है। इस तरह नालियों की मेड़ों पर खड़ी फसल को पर्याप्त मात्रा में पानी मिल जाता है। 9. किसान खेतों की निराई का कार्य निम्न प्रकार से करते हैं- किसान खुरपियों की मदद से फसलों में उपस्थित खरपतवार को हाथों से खींच कर बाहर निकाल देते हैं। आजकल बाजार में कई खरपतवारनाशक दवाईयाँ मिलती हैं। इनका उपयोग खेतों में छिड़काव करने के लिए करते हैं ताकि खेतों में उगने वाले खरपतवार नष्ट हो सकें। 10. एक ही समय में किसी एक खेत में दो या दो से अधिक फसलों को साथ-साथ उगाना मिश्रित फसल कहा जाता है। 11. खाद तीन प्रकार का होता है- खेत में उत्पन्न खाद, कम्पोस्ट खाद और हरी खाद। 12. अनाज भंडारण से पहले उसे अच्छी तरह से सुखाना अनिवार्य होता है। सूखने के बाद अनाज निर्जलीकृत हो जाता है। इस अनाज को धातु के बने पात्रों में तथा बोरियों में भरकर रखा जाता है। **हॉट प्रश्न –** 1. अत्यधिक सुपाच्य तथा वृद्धिकारक प्रोटीन मछली में पाया जाता है। 2. खरपतवार नाशक दवाईयाँ 2, 4 डी.एम.सी.पी.ए., सीमेजन तथा मेटाक्लॉर आदि है। 3. बी.एच.सी. (गैमेक्सीन) मेलेथीओन एवं डाइसीस्टोन। **(ख)** 1. किसी स्थान पर उगाए जाने वाले एक ही प्रकार के पौधे, फसल कहलाते हैं। महत्त्वपूर्ण फसलें हैं- खाद्यान्न फसलें - कुछ पौधों से हमें विविध प्रकार के अनाज प्राप्त होते हैं। इनका उत्पादन खाद्यान्न फसलों के अन्तर्गत आता है। कुछ प्रमुख फसलें हैं- गेहूँ, चावल आदि। दालें - हमें फलीदार पौधों से विविध प्रकार की दालें प्राप्त होती हैं। दालें प्रोटीन का समृद्ध स्त्रोत होती हैं। जैसे – चना, मटर, अरहर आदि। तिलहन - कुछ पौधों की फसलों से हमें खाद्य तेल प्राप्त होते हैं। ऐसे पौधों को तिलहन फसलों के अन्तर्गत उगाते हैं। प्रमुख तिलहन फसलें हैं- मूँगफली, सरसों, सोयाबीन आदि। कंद फसलें - कुछ महत्त्वपूर्ण भूमिगत तने जो महत्त्वपूर्ण पोषक पदार्थों के समृद्ध स्त्रोत हैं, कंद फसलों के अंतर्गत आते हैं। जैसे आलू, हल्दी। शर्करा फसलें - कुछ पौधों से हमें गुड़, चीनी आदि मीठे पदार्थ प्राप्त होते हैं। रेशेदार फसलें - ऐसी फसलें जिन्हें हम विविध प्रकार के रेशे प्राप्त करने के लिए उगाते हैं, रेशेदार फसलें कहलाती हैं। जैसे कपास, जूट, सन। रोपण कृषि - रोपण कृषि के अन्तर्गत पौधों को व्यावसायिक तौर पर उगाया जाता है अर्थात् वह कृषि तथा फसलें जो व्यावसायिक तौर पर उगाई जाती हैं, रोपण कृषि कहलाती है। ये फसलें व्यापारिक लाभ प्रदान करने वाली फसलें होती हैं। इनके उदाहरण हैं-

चाय, कॉफी, बाँस, रबड़ आदि। 2. किसी फसल को बोने से पूर्व खेत को तैयार करना अथवा उसकी मिट्टी को उलट-पुलट कर शिथिल अथवा नरम करना अनिवार्य होता है क्योंकि ऐसी मिट्टी में बीज शीघ्र तथा पर्याप्त संख्या में उगते हैं। इसके अतिरिक्त खरपतवार न होने के कारण फसली पौधे तीव्र गति से वृद्धि करते हैं। इस विधि को खेत की जुताई करना कहते हैं। खेतों की जुताई ट्रक्टरों या पशुओं की सहायता से की जाती है। लाभ - मिट्टी हल्की तथा शिथिल हो जाती है। अत: उसमें वायु के प्रवेश करने का समुचित स्थान बन जाता है। पौधों की जड़ें सरलता से श्वसन कर सकती हैं। मिट्टी ढीली तथा नरम हो जाती है। अत: पौधों की जड़ें अधिक गहराई तक वृद्धि कर सकती हैं। इससे पौधे सुदृढ़ बनते हैं। विविध प्रकार के उर्वरक सरलता से मिट्टी में घुल-मिल कर समरूपता ग्रहण कर लेते हैं। मृत जीव पदार्थ मिट्टी में अधिक गहराई तक पहुँच कर उसके उपजाऊपन एवं जलधारणा क्षमता में वृद्धि करते हैं। 3. जुताई के बाद तैयार किये गए खेत में बीजों को बोने की प्रक्रिया बुआई कहलाती है। बुआई के लिए स्वस्थ अथवा अच्छे बीजों का चयन करना अनिवार्य होता है। बुआई का कार्य दो प्रकार से किया जाता है।

मानव द्वारा - इस प्रक्रिया के तहत मानव अपने हाथों से बीजों को मिट्टी की सतह पर बिखेरता है। इस विधि को प्रसरण अथवा प्रकीर्णन के नाम से जाना जाता है। इसके अंतर्गत बीजों का वितरण असमान रूप से होता है। सीड ड्रील से - किसी सामान्य सीड ड्रील अथवा बीज बोने की मशीन में एक लोहे की नली होती है जिसमें ऊपर की ओर एक कीप लगी होती है। यह कीप युक्त नली हल से जुड़ी होती है। बीजों को कीप के मुख पर डालते हैं जो हल द्वारा बनायी जाने वाली मिट्टी की नालियों में गिरता है। इस तरह इस मशीन द्वारा बीजों को मिट्टी में उपयुक्त गहराई पर तथा उचित दूरी पर बोया जाता है। 4. खेतों को परती छोड़कर भी उनमें निहित पोषक तत्त्वों की हानि से बचाया जा सकता है। इस विधि के तहत खेतों को पोषक पदार्थ प्राकृतिक रूप से प्राप्त हो जाते हैं। इसके अंतर्गत किसी खेत को एक अथवा अधिक मौसमों में खुला अथवा परती छोड़ दिया जाता है अर्थात् उस खेत में कोई फसल नहीं उगायी जाती है। इस तरह छोड़ा गया खेत प्राकृतिक रूप से पोषक पदार्थों की कमी को पूरा कर लेता है। 5. हमारे देश में दो प्रमुख फसल ऋतुएँ विद्यमान पायी जाती हैं। ये हैं रबी तथा खरीफ। खरीफ की ऋतु सामान्यत: दक्षिण-पश्चिमी मानसून पर आधारित फसल ऋतु है। इस ऋतु में बोई जाने वाली फसलों के बोने तथा काटने का समय जून से अक्तूबर होता है। प्रमुख खरीफ फसलें हैं- चावल, मक्का, ज्वार, बाजरा, कपास, मूँगफली, दालें आदि। ऐसी फसलें जिन्हें अक्तूबर या नवंबर में बोया तथा मार्च या अप्रैल में काटा जाता है, रबी की फसलें कहलाती हैं- गेहूँ, जौ, चना, आलू, सरसों आदि। 6. फसली पौधों को उपयुक्त ढंग से वृद्धि करने तथा वांछित उत्पादन प्रदान करने के लिए एक निश्चित समयांतराल के बाद जल की आवश्यकता होती है। इसे ही फसलों की सिंचाई करना कहते हैं। हमारे देश में सिंचाई चार प्रकार से की जाती हैं- नालीदार सिंचाई -नालीदार सिंचाई में खेतों में नालियाँ बना दी जाती हैं तथा उनके द्वारा पानी पहुँचाया जाता है। इस तरह नालियों की मेड़ों पर खड़ी फसल को पर्याप्त मात्रा में पानी मिल जाता है। उथली सिंचाई - इस विधि के अन्तर्गत खेत को प्रत्यक्षत: जल से भर दिया जाता है। धान के खेतों की सिंचाई उथली सिंचाई का सजीव उदाहरण है। पुश्ताबंद सिंचाई - इस विधि के अंतर्गत खेतों को छोटे-छोटे भागों में बाँट दिया जाता है तथा उनके चारों तरफ ऊँची-ऊँची मेड़ें अथवा पुश्ते बना दी जाती हैं। फव्वारा सिंचाई - इस विधि के तहत सिंचाई के लिए फव्वारों का इस्तेमाल करते हैं। इस तरह की विधि का प्रयोग मुख्यत: ऐसे खेतों की सिंचाई के लिए करते हैं जिनकी मिट्टी की जलधारण क्षमता बहुत कम होती है। 7. खेतों में कभी-कभी फसली पौधों के साथ-साथ अनावश्यक रूप से अन्य पौधे भी उग जाते हैं। ऐसे पौधे खरपतवार के रूप में जाने जाते हैं तथा ये फसली पौधों की वृद्धि में बाधा उत्पन्न करते हैं। अत: ऐसे पौधों को खेतों से हटाना अनिवार्य होता है। इन्हें हटाने की प्रक्रिया को ही निराई की संज्ञा दी जाती है। किसान खेतों की निराई का कार्य कई प्रकार से करते हैं जैसे- किसान खुरपियों की मदद से फसलों में उपस्थित खरपतवार को हाथों से खींच कर बाहर निकाल देते हैं। आजकल बाजार में कई खरपतवारनाशक दवाईयाँ मिलती हैं। इनका उपयोग खेतों में छिड़काव करने के लिए करते हैं ताकि खेतों में उगने वाले खरपतवार नष्ट हो सकें। 8. फसलों की सुरक्षा से संबंधित उपाय निम्नलिखित हैं- पीड़कनाशी - पीड़कनाशी विषैले रसायन होते हैं जो पीड़कों को मारकर फसलों को उनसे रक्षा प्रदान करते हैं। कृंतकनाशकों के छिड़काव के जरिए विविध प्रकार के कृंतकों से फसलों को बचाया जा सकता है। खेतों में इन का छिड़काव हाथ-चलित मशीनों तथा निम्न उड़ान वाले हेलिकाप्टरों द्वारा किया जा सकता है। **(ग)** छात्र स्वयं करें। **(घ)** 1. (घ) 2. (च) 3. (ङ) 4. (छ) 5. (ग) 6. (ख) 7. (क) **(ङ)** 1. संग्राहक 2. फलीदार 3. जलाक्रांति 4. फसल चक्रण 5. कटाई 6. मछली 7. गेंदा, चंपा 8. शर्करा। **(च)** छात्र स्वयं करें।

क्रियाकलाप – छात्र स्वयं करें।

अध्याय- 2 सूक्ष्मजीव

(क) 1. ऐसे छोटे आकार वाले जीव जिन्हें हम नग्न आँखों से नहीं देख सकते हैं, सूक्ष्मजीव कहलाते हैं। 2. सूक्ष्मदर्शी एक उपकरण का नाम है जिसका आविष्कार राबर्ट हुक नामक एक अंग्रेजी वैज्ञानिक ने किया था। सूक्ष्मदर्शी की मदद से कॉर्क की स्लाइस पर कोष जैसी रिक्तियों का अध्ययन किया गया था। हॉलैंड के एंटन वेन लीबेनहॉक ऐसे प्रथम वैज्ञानिक थे, जिन्होंने सूक्ष्मदर्शी की मदद से जीवाणुओं की खोज की थी। 3. सूक्ष्मजीव किसी भी प्रकार के वातावरण में पनप सकते हैं। वे वायु, जल, मृदा, गरम पानी के चश्मों, हिमखंडों, दलदली भूमियों, मरूस्थलों तथा पौधों एवं जंतुओं के आंतरिक भागों में उपस्थित पाए जा सकते हैं। सूक्ष्मजीवों का इतने बड़े स्तर पर फैले पाया जाना सामान्यत: उनकी अत्यधिक तापमान, शुष्कता आदि को सहने की क्षमता के कारण ही संभव है। यह इसलिए भी संभव है कि जब कभी सूक्ष्मजीवों को किसी प्रतिकूल तापमान का सामना करना पड़ता है तब वे प्यूकोष नामक सुरक्षा आवरण को अपने चारों ओर बना लेते हैं तथा इस प्यूकोष के अंदर निष्क्रिय बने रहते हैं किंतु अनुकूल वातावरण प्राप्त होते ही पुन: सक्रिय हो उठते हैं। 4. प्यूकोष सूक्ष्मजीवों द्वारा निर्मित सुरक्षा आवरण होता है जिसे वे अपने अनुकूल तापमान ना होने पर अपने चारों ओर बना लेते हैं तथा इसके अंदर निष्क्रिय बने रहते हैं। 5. वह जीवाणु जो बाह्य झिल्ली रहित होता है तथा अभिरंजन रखने वाला होता है, ग्रामवर्ण ग्राही कहलाता है। 6. ये ऐसे जीवाणु होते हैं जो हरित पौधों की तरह अपना भोजन स्वयं संश्लेषित करते हैं। इस प्रक्रिया के लिए आवश्यक ऊर्जा के स्त्रोत की निर्भरता के आधार पर ये प्रकाश स्वपोषी व रसायन स्वपोषी हो सकते हैं। प्रकाश स्वपोषी प्रकाश ऊर्जा का तथा रसायन स्वपोषी अमोनिया नाइट्रेट आदि अजैविक पदार्थों के ऑक्सीकरण से ऊर्जा प्राप्त करते हैं। 7. विषाणु पूर्ण रूप से परजीवी होते हैं। वे पौधों, जंतुओं एवं जीवाणुओं की सजीव कोशिका के अंदर बढ़ते तथा गुणित होते हैं। वे अपने मेजबान के शरीर से बाहर निष्क्रिय अवस्था में रहते हैं। उन्हें क्रिस्टलों के रूप में पृथक, क्रिस्टलीकृत तथा भंडारित किया जा सकता है। जब वह किसी सजीव कोषिका में प्रवेश करता है तो वह गुणित होता है तथा बड़ी संख्या में विषाणुओं की उत्पत्ति करता है। उसके बाद यह

मेजबान कोशिका मर जाती है। वह फटती है तथा नए विषाणु बिखर जाते हैं। 8.प्रोटोजोआ में प्रजनन मुख्यत: अलैंगिक पाया जाता है अर्थात् इसमें प्रजनन द्विअंगी, बहुअंगी विखंडन एवं मुकुलन तथा बीजाणु रचना द्वारा होता है। 9. अमीबा प्राचीनतम प्रोटोजोआ में से एक है। इसका कोई निश्चित आकार नहीं होता है। इसका बाह्यतम आवरण कोशिका झिल्ली होती है। यह कूटपादों के रूप में विस्तारित होता रहता है जो इस जीव के पैरों के रूप में कार्य करते हैं। यह अपने शिकार को फँसाने के लिए अपने कूटपादों का उपयोग करता है जो शैवाल अथवा कोई जीवाणु हो सकता है। कोशिकाद्रव्य से स्त्रावित होने वाला रस भोजन को पचाने में सहायता करता है। 10. छात्र स्वयं करें। **हॉट प्रश्न –** 1. रतुआ एक कवक जनित रोग है। 2. प्रोटो का अर्थ है – आदिम तथा जोआ का अर्थ है – जन्तु। प्रोटोजोआ एक कोशिकीय जीव होता है। **(ख)** 1. सूक्ष्मजीव किसी भी प्रकार के वातावरण में पनप सकते हैं। वे वायु, जल, मृदा, गरम पानी के चश्मों, हिमखंडों, दलदली भूमियों, मरूस्थलों तथा पौधों एवं जंतुओं के आंतरिक भागों में उपस्थित पाए जा सकते हैं। सूक्ष्मजीवों का इतने बड़े स्तर पर फैले पाया जाना सामान्यत: उनकी अत्यधिक तापमान, शुष्कता आदि को सहने की क्षमता के कारण ही संभव है। यह इसलिए भी संभव है कि जब कभी सूक्ष्मजीवों को किसी प्रतिकूल तापमान का सामना करना पड़ता है तब वे प्यूकोष नामक सुरक्षा आवरण को अपने चारों ओर बना लेते हैं तथा इस प्यूकोष के अंदर निष्क्रिय बने रहते हैं किंतु अनुकूल वातावरण प्राप्त होते ही पुन: सक्रिय हो उठते हैं। 2. जीवाणु भिन्न-भिन्न प्रकार के आकार एवं आकृतियों में पाए जाते हैं। सामान्यत: इनका आकार 0.2 से 100 माइक्रॉन तक का पाया जाता है। आकार के जीवाणु निम्न प्रकार के होते हैं- बेसिलस - ये छड़ के आकार के होते हैं। इनमें मुख्यत: लैक्टोबेसिलस, बेसिलस आदि शामिल हैं। कोक्कस - ये गोलाकार जीवाणु होते हैं। इनके अंतर्गत डिप्लोकोक्कस, स्ट्रेप्टोकोक्स आदि आते हैं। स्पाइरील्लम - ये जीवाणु कुंडली के आकार के होते हैं। इनमें मुख्यत: स्पाइरील्लम एवं ट्रिपोनेम सम्मिलित हैं। विब्रियो - इन जीवाणुओं के शरीर का आकार अर्द्ध-विराम के समान होता है। हैजा फैलाने वाले जीवाणु विब्रियो कॉलेरा का आकार अर्द्ध-विराम के जैसा होता है। जीवाणु एककोशिकीय गैर-रहित पौधे होते हैं जिनकी एक कठोर कोशिका भित्ति होती है। जीवाणुओं में सुनियोजित तथा सुगठित केन्द्रक नहीं होती है। नाभिकीय पदार्थ कोशिका के मध्य में स्थित होते हैं, किन्तु कोशिका झिल्ली से घिरा हुआ नहीं होता है। कुछ जीवाणुओं में पक्ष्माभिकाएँ अथवा फ्लैजेला होते हैं जो इनके चालन में सहायता करता है। 3. जीवाणु हमारे लिए निम्न प्रकार से लाभकारी होते हैं - दुग्ध उत्पाद - दही तथा पनीर जीवाणुविक किण्वन द्वारा बनते हैं। लैक्ट्रोबसिलस नामक जीवाणु दूध से दही बनाने में मदद करते हैं। मांस को नरम करना - कुछ जीवाणु मांस में निहित कठोर रेशों को वियोजित कर उसे नरम बनाने का महत्त्वपूर्ण कार्य करते हैं। पेय पदार्थ - चाय, कॉफी तथा कोको उत्पादन में जीवाणुओं का प्रयोग किया जाता है। जीवाणु चाय की पत्ती को पकाने में सहायता करते हैं जिससे चाय में विशेष प्रकार की सुगंध व स्वाद उत्पन्न होता है। मदिरा तथा सिरका - फूलों के रसों पर जीवाणुओं की क्रिया के फलस्वरूप मदिरा तथा सिरके की रचना होती है। कृषि - पौधों व जंतुओं के सभी सजीव ऊतकों को नाइट्रोजन की आवश्यकता होती है। कुछ नाइट्रोजन स्थिरीकरण जीवाणु ऐसे होते हैं जो वायु से नाइट्रोजन लेने में सक्षम होते हैं। औषधियाँ - जीवाणु का प्रयोग प्रतिजैविक औषधियाँ बनाने के लिए किया जाता है। इनका प्रयोग विटामिन 'बी' की गोलियाँ बनाने के लिए भी करते हैं। 4. विषाणु ऐसा सूक्ष्मजीव होता है जिसमें सजीवों एवं निर्जीवों दोनों की विशेषताएँ पायी जाती हैं। सजीव कोशिका के बाहर विषाणु किसी निर्जीव पदार्थ की भाँति होते हैं। विषाणु वायु, जल, मृदा तथा सजीवों के शरीर में उपस्थित पाए जाते हैं। विषाणु पूर्व रूप से परजीवी होते हैं। पौधों, जंतुओं एवं जीवाणुओं की सजीव कोशिका के अंदर बढ़ते तथा गुणित होते हैं। वे अपने मेजबान के शरीर से बाहर निष्क्रिय अवस्था में रहते हैं। जब वे किसी सजीव के संपर्क में आते हैं तो उनमें प्रजनन प्रारंभ हो जाता है। विषाणुओं का आकार 0.015 से 0.2 माइक्रॉन होता है। जीवाणु अत्यधिक सूक्ष्मजीव होते हैं इसीलिए उन्हें केवल इलैक्ट्रान सूक्ष्मदर्शी के नीचे देखा जा सकता हे। ये अपने लिए पोषण की प्राप्ति अपने मेजबान कोशिकाओं से करते हैं। ये आकार में गोलाकार, छड़नुमा, शंकुवाकर एवं बहुभुजी हो सकते हैं। विषाणु स्वयं प्रजनन करने में असमर्थ होते हैं। वे किसी जीवधारी की कोशिका के अंदर ही प्रजनन करने में सक्षम पाए जाते हैं। जब विषाणु किसी जीव में प्रवेश करते हैं तो वह गुणित होता है तथा बड़ी संख्या में विषाणुज कण उत्पन्न करता है। बड़ी संख्या में विषाणुओं को उत्पत्ति के पश्चात् मेजबान कोशिकाएँ मर जाती हैं। वह फटती हैं तथा नए विषाणु बिखर जाते है। 5. विषाणु विविध प्रकार के रोगों का कारण बनते हैं। उनमें से कुछ विशेष रोग हैं- छोटी माता तथा खसरे के विषाणु त्वचा की कोशिकाओं पर आक्रमण करते हैं तथा उस पर लाल रंग के विस्फोट उत्पन्न करते हैं। तंबाकू मोजाइक विषाणु तंबाकू के पौधों को संक्रमित करते हैं। पशुओं में होने वाली तथा खुर की बीमारियों का कारण भी विषाणु ही बनते हैं। पीत ज्वर विषाणु स्तनपायी जंतुओं के यकृत में प्रवेश कर जाता है। साधारण सर्दी, जुकाम फैलाने वाले विषाणु उन कोशिकाओं पर आक्रमण करते हैं जो नाक तथा गले के मार्ग में उपस्थित रहती हैं तथा छीक तथा खिचखिचाहट का कारण बनती हैं। 6. प्रोटोजोआ के लाभ - प्रोटोजोआ अन्य जीवों के साथ मिलकर सहजीवी संबंधी के अस्तित्व को कायम रखते हैं। यह पारस्परिक सहयोज दोनों जीवों के लिए लाभदायक होता है। प्रोटोजोआ शैवाल को अपना भोजन बनाते हैं तथा स्वयं बड़े जलीय जीवों का भोजन बनते हैं। विविध जैव प्रक्रियाओं के अध्ययन के लिए किये जाने वाले शोध कार्यों में प्रोटोजोआ का प्रयोग किया जाता है। फफूँद पर जीवन निर्वाह करने वाले प्रोटोजोआ जैव पदार्थों के वियोजन में विशेष योगदान देते हैं। हानि - एंटामिबा जिंजिवालिस सामान्यत: ''मुख अमीबा'' के रूप में जाना जाता है जो दाँतों के टार्टर में पाया जाता है एवं इससे पूयस्त्राव नामक मुख की बीमारी फैलती है। एंटामीबा मनुष्यों की बड़ी आँत में उपस्थित पाए जाते हैं तथा यह अमीबीयी पेचिश का कारण बनता है। मलेरियाजनित परजीवी मनुष्य के रक्त के आर. बी. सी. में पाया जाता है जो मलेरिया नामक बीमारी का कारण बनता है। 7. फफूँद के प्रकार - खमीर - यह एक सूक्ष्म तथा एककोशिकीय फफूँद होती है जो समूह के रूप में पायी जाती है। यह आकार में विविध प्रकार की पायी जाती है, जैसे - गोलाकार, बेलनाकार आदि। मिल्डीव - यह एक कोशिकीय फफूँद होती है जो सजीव पौधों पर पनपती है, जैसे कि आलू, गेहूँ आदि। कवकच्छद - यह बहुकोशिकीय कवक होती है जो नलिका जैसी सरंचनाओं से बनी होती है। इन्हें खराब ब्रेड, पुराने आचार, गले-सड़े फलों पर देखा जा सकता है। खुंबी - ये विशालकाय कवक होते हैं। आप इन्हें गली-सड़ी लकड़ी, घास के मैदानों आदि में वर्षा ऋतु के दौरान देख सकते हैं। 8. फफूँद निम्न प्रकार से हमारे लिए उपयोगी है- खमीर की सहायता से ब्रेड, इडली, डोसा आदि व्यंजन तैयार किये जाते हैं। इस प्रक्रिया को किण्वन कहते हैं। कुछ औषधियाँ कवकों से बनती हैं, उदाहरणत: पेनिसिलियम नामक औषधि पेनिसिलियम नोटेट्म नामक कवक से प्राप्त की जाती है। एल्कोहल तथा एल्कोहल युक्त पेयों की रचना भी किण्वन की प्रक्रिया द्वारा होती है।

आलू, अनाज, खाँड आदि के किण्वन से इथाइल एल्कोहल बनता है। अंगूर के किण्वन से बीयर बनती है। फफूँद अपघटन अथवा वियोजन में विशेष भूमिका निभाते हैं अर्थात् यह मृत पौधों एवं जंतुओं के ऊतकों को वियोजित कर उन्हें महत्त्वपूर्ण तत्त्वों में परिवर्तित करती है। हम कुछ कवक अथवा खुंबियों को भोजन के रूप में ग्रहण करते हैं। **(ग)** छात्र स्वयं करें। **(घ)** छात्र अध्यापक की सहायता से स्वयं करें। **(ङ)** छात्र स्वयं करें। **(च)** छात्र स्वयं करें। **(छ)** 1. (च) 2. (छ) 3. (ग) 4. (घ) 5. (ङ) 6. (ख) 7. (क) **क्रियाकलाप –** छात्र स्वयं करें।

अध्याय- 3 धातुएँ व अधातुएँ

(ख) 1. प्रकृति में अधिकांश धातुएँ अपनी संयोजित अवस्था तथा खनिजों के रूप में पायी जाती है। खनिज प्राकृतिक रूप से पाए जाने वाले भू-पदार्थ एवं धातुओं के मिश्रित यौगिक होते हैं। किसी खनिज में धातुओं की मात्रा कम या अधिक हो सकती है। ऐसा कोई भी खनिज जिसमें किसी धातु का प्रतिशित अत्यधिक मात्रा में पाया जाता है अत्यधिक लाभकारी होता है तथा उस खनिज में से धातु प्राप्त की जा सकती है। धातुओं के अयस्क ऑक्साइड, कार्बोनेट, सल्फेट, सल्फाइड आदि के रूप में हो सकता है। 2. धातुएँ तन्य होती हैं। धातुओं का वह गुण जिससे उन्हें खींचकर तारों में परिवर्तित किया जा सकता है, तन्यता कहलाता है। विद्युत बल्ब का तंतु टंगस्टन से बना हुआ होता है। लोहे की तारों से जाली बनाई जाती है। 3. ऑक्सीजन से अभिक्रिया -धातुएँ ऑक्सीजन के साथ संयोजित होकर क्षारीय ऑक्साइड की रचना करती हैं। लोहे, ताँबे तथा एल्युमिनियम जैसी धातुएँ ऑक्सीजन के साथ धीरे-धीरे अभिक्रिया करती हैं तथा अपने-अपने ऑक्साइड की अत्यंत पतली परत बनाती हैं। 4 Fe लोहा + $3O_2$ ऑक्सीजन = 2Fe2O3 आयरन ऑक्साइड सोडियम तथा पोटेशियम ऐसी धातुएँ हैं जो साधारण तापमान पर ऑक्सीजन के साथ अभिक्रिया करती हैं। यही कारण है कि इन धातुओं को केरोसिन में रखा जाता है। जल से अभिक्रिया - धातुएँ जल के साथ अभिक्रिया करके धात्विक ऑक्साइड अथवा धात्विक हाइड्रोक्साइड बनाती हैं एवं हाइड्रोजन गैस उत्सर्जित करती हैं। विविध धातुएँ जल के साथ विविध परिस्थितियों में अभिक्रिया करती हैं। 2Na सोडियम + 2H2O ठंडा पानी = 2 Na OH सोडियम हाइड्रोक्साइड + H2 हाइड्रोजन ताँबा, सोना अथवा प्लेटीनम जल अथवा भाव के साथ अभिक्रिया नहीं करते हैं। 4. सोडियम, मैग्नेशियम जैसी धातुएँ तनु हाइड्रोक्लोरिक अम्ल अथवा सल्फयुरिक अम्ल के साथ अभिक्रिया के माध्यम से धात्विक क्लोराइड या धात्विक सल्फाइड बनाती हैं तथा हाइड्रोजन गैस का उत्सर्जन करती हैं। हमारे दैनिक जीवन में धातुओं की अम्लों के साथ अभिक्रिया का बड़ा महत्त्व है। उदाहरणत: अचार, चटनी एवं खट्टे फलों के भंडारण के लिए एल्युमिनियम या लोहे के पात्रों का प्रयोग नहीं किया जाता है क्योंकि उनमें उपस्थित अम्लों के कारण लोहे व एल्युमिनियम के साथ अभिक्रिया के फलस्वरूप खाद्य पदार्थ संक्रमित हो जाता है। 5. धातुओं को ऑक्सीजन, जल, अम्ल व क्षार के साथ अभिक्रिया से स्पष्ट हो जाता है कि धातुओं की अभिक्रियाशीलता भिन्न-भिन्न होती है। धातुओं को घटती हुई अभिक्रियाशीलता के आधार पर अनुलंब सारणी में दी गई व्यवस्था को धातुओं का अभिक्रियाशीलता क्रम कहा जाता है। अभिक्रियाशीलता क्रम में सर्वाधिक अभिक्रियाशील धातु न होते हुए भी अभिक्रियाशील क्रम रखा जाता है क्योंकि यह भी धातुओं की तरह यौगिकों की रचना करती है। 6. अधातुएँ संख्या में कम हैं तथा वे वायु, महासागर तथा पृथ्वी के प्रमुख संघटक भी हैं। जैसा कि हम जानते हैं, वायु के प्रमुख संघटक नाइट्रोजन तथा ऑक्सीजन हैं जो अधातुएँ हैं। इन्हें द्रवीकृत वायु के प्रभावी आसवन द्वारा प्राप्त किया जाता है। महासागरों के प्रमुख संघटक हाइड्रोजन तथा ऑक्सीजन हैं। महासागरों में क्लोरिन गैस क्लोराइड के रूप में विद्यमान पायी जाती है। सागरीय जल से प्राप्त होने वाले नमक से क्लोरिन निष्कार्षित की जाती है। 7. अधातुएँ तनु खनिज अम्लों के साथ अभिक्रिया नहीं करती हैं। अत: हाइड्रोजन गैस को विस्थापित नहीं करती हैं। 8. अधातुओं को जब ऑक्सीजन अथवा वायु में गरम किया जाता है तो वे ऑक्साइडों की रचना करती हैं जो प्रकृति में अम्लीय अथवा उदासीन हो सकते हैं। अम्लीय ऑक्साइड ऐसे ऑक्साइड होते हैं जो अम्लों की रचना के लिए जल में घुल जाते हैं। उदासीन ऑक्साइड न तो अम्लीय प्रकृति के होते हैं तथा न ही क्षारीय। 9. अधातुओं के भौतिक धर्मगुण निम्नलिखित हैं- कठोरता - सामान्यत: अधातुएँ कठोर नहीं होती हैं। जबकि हीरा इसका अपवाद है जो अधातु होते हुए भी सर्वाधिक कठोर प्राकृतिक पदार्थ है। आभा - अधातुएँ आभा युक्त नहीं होती हैं। ये निष्प्रभ दिखती हैं। जबकि ग्रेफाइट एवं आयोडिन ऐसी धातुएँ हैं जिनमें धात्विक चमक व आभा दिखाई देती है। तनन शक्ति - अधातुओं में तनन शक्ति नहीं होती है। घनत्व - साधारणत: अधातुओं का घनत्व बहुत कम पाया जाता है, जबकि हीरे का घनत्व एल्युमिनियम के समान है। तन्यता : अधातुओं को तारों के रूप में नहीं खींचा जा सकता है। गुँजायमान - अधातुएँ गुँजायमान नहीं होती है। इसका अर्थ है कि जब धातुओं की सतह पर किसी कठोर वस्तु से प्रहार किया जाता है तो किसी तरह की आवाज उत्पन्न नहीं होती है। चालकता - अधातुएँ सामान्यत: विद्युत एवं ताप की कुचालक होती हैं, किन्तु ग्रेफाइट इसका अपवाद है जो विद्युत सुचालक है। 10. यदि पेजजल में फ्लोरीन की सांद्रता में प्रति मिलियन 3 भाग एक की वृद्धि हो जाती हैं, तो फ्लोरोसिस नामक बीमारी होती है जिसमें दाँतों पर भूरे रंग के धब्बे बन जाते हैं। **हॉट प्रश्न –** 1. आचार व खट्टी खाद्य सामग्री एल्युमिनियम या लोहे के बर्तन में नही रखते क्योंकि उनमें उपस्थित अम्लों के कारण लोहे व एल्युमिनियम के साथ अभिक्रिया के फलस्वरूप खाद्य पदार्थ संक्रमित हो जाता है। 2. दाँतों पर भूरे रंग के धब्बे फ्लोरोसिस नामक बीमारी के कारण होते है। **(ख)** छात्र अध्यापक की सहायता से स्वयं करें। **(घ)** छात्र अध्यापक की सहायता से स्वयं करें। **(च)** 1. (घ) 2. (च) 3. (क) 4. (ख) 5. (ग) 6. (छ) 7. (ङ) **(ङ)** 1. अयस्क 2. पारा, गैलीयम 3. सोडियम, पोटेशियम 4. क्लोरिन गैस **(ज)** 1. सत्य 2. असत्य 3. असत्य 4. असत्य 5. सत्य **(छ)** 1. (स) 2. (अ) 3. (अ) 4. (स) **क्रियाकलाप–** छात्र स्वयं करें।

अध्याय- 4 दहन, ज्वाला और ईंधन

(क) 1. वह रासायनिक प्रक्रिया जिसके अंतर्गत कोई तत्त्व वायु अथवा ऑक्सीजन की उपस्थिति में जलता है तथा ऊष्मा एवं प्रकाश का उत्सर्जन करता है, दहन कहलाती है। 2. ऐसा कोई भी पदार्थ अथवा तत्त्व जो वायु अथवा ऑक्सीजन की उपस्थिति में गरम करने पर आग पकड़ लेता है एवं ऊष्मा एवं प्रकाश का उत्सर्जन करता है, दहनशील पदार्थ कहलाता है। 3. ऐसी दहन अभिक्रिया जो ऑक्सीजन की अपर्याप्त मात्रा की उपस्थिति में घटित होती है, अपूर्ण दहन के नाम से जानी जाती है। 4. जलती हुई गैसों का क्षेत्र उसकी ज्वाला के रूप में जाना जाता है। 5. मोमबत्ती की ज्वाला चार भागों में विभाजित की जाती है- अप्रकाशित - पूर्ण दहन का क्षेत्र। प्रकाशित - अपूर्ण दहन का क्षेत्र। केन्द्रीय भाग - बिना दहन का क्षेत्र। आंतरिक - कार्बन मोनोक्साइड वाला क्षेत्र। 6. लकड़ी, कोयला, पशुओं के गोबर से बने उपले, चारकोल, कोक आदि ठोस ईंधन के उदाहरण हैं। ठोस ईंधनों में मुख्यत: कार्बन निहित पाया जाता है जो मुक्त रूप में अथवा संयोजित रूप में विद्यमान हो सकता है।

7. ऊष्मीय मान का तात्पर्य ताप ऊर्जा के उस परिणाम से है जो किसी ईंधन की विशेष मात्रा द्वारा जब उसकी एक इकाई द्रव्यमान को ऑक्सीजन की पर्याप्त आपूर्ति में जलने से प्राप्त होता है। 8. प्राकृतिक गैस का ऊष्मीय मान ठोस एवं तरल ईंधनों की तुलना में काफी उच्च होता है। 9. आदर्श ईंधन की विशेषताएँ हैं- इसका ऊष्मीय मान उच्च होना चाहिए। यह सरलता से उपलब्ध होने वाला ईंधन होना चाहिए। 10. जीवाश्म ईंधनों के संरक्षण हेतु हमें वाहनों में उन्नत ईंधनों का प्रयोग करना चाहिए जिससे उसमें पेट्रोल एवं डीजल की खपत में कमी आ सके। **हॉट प्रश्न –** 1. अम्लीय वर्षा भवनों, ताजा जल, राशियों, मृदा व पौधों के लिए हानिकारक होती है। 2. जलते हुए पदार्थ पर रेत डालने पर आग बुझ जाती है क्योंकि दहन का पोषण करने वाली वायु की आपूर्ति बंद हो जाती है। **(ख)** 1. ऐसा कोई भी पदार्थ अथवा तत्त्व जो वायु अथवा ऑक्सीजन की उपस्थिति में गरम करने पर आग पकड़ लेता है एवं ऊष्मा एवं प्रकाश का उत्सर्जन करता है, दहनशील पदार्थ कहलाता है। दहन की निम्नलिखित विशेषताएँ होती हैं - दहन ऑक्सीकरण की ऐसी प्रक्रिया होती है जिसके अंतर्गत ऊष्मा तथा प्रकाश का उत्सर्जन होता है। दहनशील पदार्थ का छोटा टुकड़ा किसी बड़े टुकड़े की तुलना में अतिशीघ्र आग पकड़ लेता है, दहन के लिए उसके पोषक पदार्थों का होना अनिवार्य है। ऐसा कोई भी तत्त्व जो किसी दहनशील पदार्थ के दहन में सहायक होता है दहन का पोषक कहलाता है। 2.ऐसा कोई भी तत्त्व जो किसी दहनशील पदार्थ के दहन में सहायक होता है, दहन का पोषक कहलाता है। दहन के लिए पोषक तत्त्व का होना अनिवार्य होता है। जब किसी जलते हुए पदार्थ पर रेत डाली जाती है तो आग बुझ जाती है। यह इसलिए होता है क्योंकि दहन का पोषण करने वाली वायु की आपूर्त्ति बंद हो जाती है। यदि किसी जलती हुई मोमबत्ती को किसी काँच के जार से ढक दिया जाता है तो कुछ समय बाद मोमबत्ती बुझ जाती है क्योंकि जार में उपस्थित ताजा वायु समाप्त हो जाती है। ज्वलन तापमान यानी वह निम्नतम तापमान जिस पर कोई पदार्थ वायु की उपस्थिति में जलता है, दहन में विशेष भूमिका निभाता है। 3. यदि जलती हुई मोमबत्ती पर किसी काँच का बीकर रख दिया जाता है तो वह कुछ समय बाद बुझ जाती है, क्योंकि बीकर में उपस्थित ताजा वायु समाप्त हो जाती है। 4. यदि ज्वलन तापमान सामान्य तापमान से कम होता है जो बिना किसी तरह की गरमाहट के दहन उत्पन्न कर सकता है। इसे स्वैच्छिक दहन कहते हैं। यदि पीली फॉस्फोरस के किसी छोटे से टुकड़े को सुखाया जाता है तथा किसी चीनी मिट्टी की प्लेट में रखा जाता है तो इसे बिना गरम किए ही यह आग पकड़ लेता है। इसे ही स्वैच्छिक दहन कहते हैं। 5. ऐसी दहन अभिक्रिया जो ऑक्सीजन की अपर्याप्त मात्रा की उपस्थिति में घटित होती है, अपूर्ण दहन नाम से जानी जाती है। उदाहरणत: जब कार्बन को वायु की अपर्याप्त आपूर्त्ति की स्थिति में जलाया जाता है तो कार्बन मोनोक्साइड की रचना होती है। अपूर्ण दहन की हानियाँ - किसी दहनशील पदार्थ के अपूर्ण दहन के अंतर्गत कार्बन मोनोक्साइड बनती है। यह गैस अत्यंत विषैली प्रकृति की होती है तथा श्वसन संबंधी गंभीर समस्याओं का कारण बनती है। अपूर्ण दहन के अंतर्गत बिना जले कार्बन का बहुत बड़ा भाग कालिख के रूप में वायुमंडल में पहुँच जाता है। इससे न केवल ईंधन की बर्बादी होती है, बल्कि वायुमंडलीय प्रदूषण का खतरा भी पनपता है। 6. ऐसा कोई भी ज्वलनशील पदार्थ जो वायु में जलते हुए बड़ी मात्रा में ऊष्मा (ऊर्जा) की उत्पत्ति करता है, ईंधन कहलाता है। ईंधन को उसकी भौतिक अवस्था के आधार पर ठोस, तरल तथा गैस में विभाजित किया गया है। आदर्श ईंधन की विशेषताएँ हैं- इसका ऊष्मीय मान उच्च होना चाहिए। यह सरलता से उपलब्ध होने वाला ईंधन होना चाहिए। यह भंडारण एवं परिवहन के रूप में सुरक्षित होना चाहिए। इसका अत्यधिक उच्च अथवा निम्न ज्वलन तापमान नहीं होना चाहिए। यह विषैले तत्त्वों की उत्पत्ति करने वाला नहीं होना चाहिए। इससे किसी तरह की कालिख उत्पन्न नहीं होनी चाहिए जो कि दीवारों अथवा बर्तनों को काली करती हो। 7. जीवाश्म ईंधनों का तात्पर्य उस ईंधन से है जो जीवधारियों के जीवावशेषों से प्राकृतिक रूप से निर्मित हुए हैं। करोड़ों वर्ष पूर्व विविध प्राकृतिक आपदाओं जैसे बाढ़, भूकंप आदि के कारण व्यापक संख्या में पौधे-जन्तु धरातल की गहराइयों में आर्द्र परिस्थितियों में अत्यधिक उच्च तापमान, पृथ्वी के दबाव तथा वायु की अनुपस्थिति में जीवाणुविक अपघटन के अभाव के फलस्वरूप वे धीरे-धीरे अपघटित होकर कोयले, पेट्रोलियम एवं प्राकृतिक गैस में परिवर्तित होगए। जीवाश्म ईंधन सीमित मात्रा में पाए जाते हैं। इसी कारण यह आशंका उत्पन्न हुई है कि यदि वर्तमान में इनका उपयोग इसी दर से होता रहा तो अगले 50 वर्षों में इनका अस्तित्व ही नहीं बचेगा। अत: हमें इनका विवेकपूर्ण एवं नियोजित तरीके से उपयोग करना चाहिए। 8. प्रौद्योगिकी विकास तथा ईंधन की निरंतर बढ़ती माँग के परिणाम-स्वरूप पर्यावरण पर निम्नलिखित प्रभाव पड़ रहे हैं - ईंधन के दहन से वायुमंडल में कार्बन डाइऑक्साइड की मात्रा में वृद्धि हो रही है। जिसके परिणामस्वरूप तापमान में भी वृद्धि हो रही है। इसे हरित गृह प्रभाव के रूप में जाना जाता है। कार्बन युक्त ईंधनों को जलाने से राख तथा बिना जले कण उत्पन्न होते हैं जो वायु में मिलते रहते हैं। इन कणों को निलंबित विवक्त कण कहते हैं जो खतरनाक प्रदूषक होते है। किसी भी ईंधन का 100 प्रतिशत दहन संभव नहीं होता है। अपूर्ण दहन से कार्बन डाइऑक्साइड उत्पन्न होती है। यह श्वसन संबंधी अनेक बीमारियों का कारण बनती है। कोयले में सल्फर उपस्थित पाया जाता है जिससे दहन के समय सल्फर डाइऑक्साइड गैस उत्पन्न होती है। यह गैस वायुमंडल में आक्सीकृत होकर सल्फ्युरिक अम्ल की उत्पत्ति करती है जो वर्षा के जल में घुलकर भूमि पर गिरता है। अत: यह गैस अम्लीय वर्षा का कारण बनती है। अम्लीय वर्षा फसलों, भवनों, मृदा व पौधों के लिए हानिकारक होती है। वाहनों द्वारा उत्सर्जित धुँए में सीसे के यौगिक सम्मिलित पाए जाते हैं। ये अत्यंत विषैले होते हैं। **(घ)** छात्र स्वयं करें। **(च)** 1. (ख) 2. (ग) 3. (क) 4. (च) 5. (ङ) 6. (घ) **क्रियाकलाप –** छात्र स्वयं करें।

अध्याय- 5 संरक्षण

(क) 1. सभी जीवों के जीवन में विभिन्नता को ही जैव-विविधता कहते हैं। 2. वन्य जीवन में पौधे तथा जन्तु दोनों आते हैं। 3. जैव-विविधता के विशाल रूप को महाजैव-विविधता केन्द्र कहते हैं। 4. समस्त महाजैव-विविधता केन्द्रों को 12 केन्द्रो में विभाजित किया जाता है। 5. वन्य जीवन का संरक्षण, इमारती लकड़ी प्राप्त होना, तापमान को नियंत्रित करना। 6. डोडो, डायनासोर, गुलाबी बत्तख 7. जो विलुप्त हो गई है या विलुप्त होने वाली हैं। जैसे- गेंडा, एशियाई सिंह। 8. खउणछउ (वर्तमान थऊण) द्वारा प्रकाशित पुस्तक हैं, जिसमें संकटापन्न पौधों एवं जन्तुओं का उल्लेख किया गया है। 9. बड़े पैमाने पर टीक के वृक्ष लगाना, पौधारोपण। 10. वनों के नाश पर कठोर प्रतिबन्ध, वास-स्थलों का संरक्षण। **हॉट प्रश्न –** 1. उत्तराखंड में स्थित जिम कोर्बेट राष्ट्रीय उद्यान भारत प्रथम राष्ट्रीय उद्यान था। 2. बाघ परियोजना का उद्देश्य देश में बाघों को संरक्षण प्रदान करना तथा उनकी संख्या में वृद्धि करना था। **(ख)** 1. वन्य जीवों का संरक्षण, इमारती लकड़ी प्राप्त होना, वायुमंडल को संतुलित करना, तापमान को नियंत्रित करना, जल-चक्र बनाये रखना, मिट्टी के कटाव को रोकना, भोजन व औषधियाँ प्रदान करना। 2. जो

सुरक्षित नहीं हैं। इन्हें 4 वर्गों में विभाजित किया जाता है। 3. लकड़ी पर निर्भरता कम करना, वनारोपण, वनों की अंधाधुंध कटाई पर रोक, वन्य जीवों के शिकार पर रोक। 4. वनों का संरक्षण होने पर जैव-विविधता बनी रहती हैं। 5. वनरोपण, पौधारोपण, लकड़ी के लिए वैकल्पिक स्त्रोतों की खोज, अति पशुचारण पर रोक, वनों की आग लगने पर रोक। 6. वन्य जन्तुओं का आर्थिक महत्त्व, खाद्य-श्रृंखला को निरन्तर बनाये रखना, कृषि, पशुपालन एवं मत्स्य पालन हेतु प्रजनन के लिए। 7. वास स्थलों का संरक्षण, वनों में वृद्धि, जैव आरक्षित क्षेत्रों की स्थापना। 8. बाघों को बचाना, उनकी संख्या में वृद्धि करना, बाघ-आरक्षित क्षेत्र बनाना। 9. ऐसी प्रजातियों जो किसी एकमात्र द्वीप अथवा पर्वतीय शिखर, किसी नदी या झील में ही पायी जाती हैं। 10. इन्डियन बोर्ड फॉर वाइल्ड लाइफ, टाटा ऊर्जा अनुसन्धान संस्थान, पर्यावरण विभाग, वन एवं वन्य जीवन विभाग आदि। **(घ)** 1. पौधों की प्रजातियाँ वनस्पति कहलाती है, जबकि जंतुओं को संयुक्त रूप से जीव-जन्तु कहते हैं। 2. संकटापन्न प्रजातियाँ पर लुप्त होने का संकट आ गया है, जबकि आंशकित प्रजातियों पर संकट आ सकता है। 3. राष्ट्रीय उद्यान वह क्षेत्र होता है जो वन्य जन्तुओं को पूरी तरह वन क्षेत्र उपलब्ध कराता है, यहाँ किसी भी तरह की खेती अथवा पशु चराने की व्यवस्था नहीं होती। अभयारण्य में केवल वन्य जन्तुओं को ही संरक्षण प्रदान किया जाता है। **(घ)** 1. जीवों के अनेक प्रकार 2. पेड़-पौधे जो प्राकृतिक रूप से उगते हैं। 3. वनों में समृद्ध महाजैव व्यवस्था के दर्शन। 4. ऐसी प्रजातियाँ जो बहुत कम संख्या में जीवित हैं। 5. पौधों एवं जन्तुओं की ऐसी प्रजातियाँ जो पहले से लुप्त हो चुकी हैं। 6. ऐसी प्रजातियाँ जिनकी विलुप्तता का खतरा बन चुका है। 7. वह क्षेत्र जो वन्य जन्तुओं को पूर्ण रूप से संरक्षित वन क्षेत्र उपलब्ध कराता है। 8. जहाँ केवल बन्य जंतुओं को ही संरक्षण प्रदान किया जाता है। **(च)** 1. वन - (ङ) पृथ्वी के तापमान को नियंत्रित करते हैं। 2. भारत - (च) महाजैव विविधता केंद्र 3. बंगाली बाघ - (छ) बाघ परियोजना 4. नरदफा अभ्यारण्य - (क) जंगली सूअर, जंगली भैंसा 5. ब्रह्म कमल - विलुप्त प्रजाति का पौधा 6. मरुस्थल राष्ट्रीय उद्यान - (ख) सोहन चिड़िया 7. डोडो (घ) विलुप्त प्रजाति का जंतु **(च)** 1. विश्व संरक्षण संघ 2. इन्डियन बोर्ड फॉर वाइल्ड लाइफ 3. कान्वेशन ऑन इन्टरनेशनल ट्रेड इन एनडेंजर्ड स्पीसीज 4. टाटा ऊर्जा अनुसंधान संस्थान 5. संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम **(ज)** 1. सत्य 2. सत्य 3. सत्य 4. सत्य 5. सत्य 6. सत्य 7. सत्य 8. सत्य 9. असत्य **क्रियाकलाप** – छात्र स्वयं करें।

अध्याय- 6 कोशिका

(क) 1. जीव की संरचना कोशिकाओं से होती है। 2. हाथ वाला लैंस किन्तु हम उसकी मदद से कोशिकाओं को नहीं देख सकते। 3. यह डच वैज्ञानिक था, जिसने सूक्ष्मदर्शी का आविष्कार किया था। 4. रॉबर्ट हुक ने। 5. वे जीव जो एक कोशिका से बने होते हैं जैसे- अमीबा। 6. जो विविध प्रकार की अनेक कोशिकाओं से बने होते हैं। 7. यह अंडाकार कोशिका आर्गेनेलिज है तथा कोशिका का श्वसन क्षेत्र है। 8. (i) कोशिका के मध्य भाग में केन्द्रक होता है। (ii) कोशिका में साइटोप्लाजम में रिक्तिकाएँ 9. (i) बड़ी संख्या में अनिवमित आकार वाली कोशिकाएँ होती हैं (ii) प्रत्येक कोशिका के मध्य में केन्द्रक होता है। 10. सामान्य कोशिका का आकार 1/10 से 1/100 मिमि. के बीच हो सकता है। **हॉट प्रश्न** – 1. लाल क्रोमोप्लास्ट की उपस्थिति के कारण टमाटर का रंग लाल होता है। 2. कोशिका के अन्दर प्रविष्ट हानिकारक पदार्थों अथवा जीवाणुओं को निगलने में भी लाइसोसाम्स सहायक होते है। यही कारण है कि इन्हें आत्मघाती थैलियाँ कहते है। **(ख)** 1. सूक्ष्मदर्शी के मुख्य भाग निम्न हैं - नेत्रक, प्रेक्षण नली, नोजपीस, अभिद्रश्य, सतह, कंडेन्सर लैंस, स्लाइड रिटेनर, प्रकाश का स्त्रोत, तल, कोर्सजेकस। 2. इसकी खोज 1665 में ब्रिटिश आविष्कारक तथा वैज्ञानिक राबर्ट हुक ने की थी। 3. साइटोप्लाज्म :- यह एक जैली जैसा पदार्थ होता है। केन्द्रक :- यह कोशिका के सभी प्रकार के क्रियाकलापों को नियंत्रित करता है। कोशिका झिल्ली :- यह कोशिका द्रव्य से आबद्ध पतला आवरण होता है। एंडोप्लाज्मिक रेटीकुलम - यह साइटोप्लाज्म में उपस्थित नलीनुमा वाहिका तंत्र होता है। 4. अध्यापक की सहायता से प्रयोग करें। देखें पुस्तक का पृष्ठ 70। 5. पादप कोशिकाओं में एक ठोस कोशिका भित्ति होती है, जबकि जन्तु कोशिकाओं में यह नहीं होती। जन्तु कोशिकाओं में क्लोरोप्लास्ट नहीं होते जबकि पादप कोशिकाओं में होते हैं। जन्तु कोशिकाओं में रिक्तिकाएँ नहीं होती जबकि पादप कोशिकाओं में बड़े आकार की होती हैं। 6. दोनों में प्लाज्मा झिल्ली पायी जाती है। दोनों में केन्द्रक पाया जाता है। दोनों में माइटोकोन्ड्रीया उपस्थित पाया जाता है। 7. सामान्य कोशिका का आकार 1/10 से 1/100 मि.मी. के बीच में होता है। अधिकांश कोशिकाएँ सूक्ष्मदर्शीय होती हैं। जीवाणु का आकार 0.1 से 0.5 माइकॉन होता है। **(ग)** 1. हाथवाला लैंस एक फ्रेम से जुड़ा होता है तथा उसकी एक हत्थी होती है। यह दोनों तरफ से उत्तल होता है, इसीलिये इसे उभयोत्तल लैंस कहते हैं। 2. चूँकि माइटोकांड्रिया ऊर्जा उत्सर्जित करता है, इसीलिये इसे कोशिका का शक्तिग्रह कहते हैं। 3. कोशिका के अन्दर प्रविष्ट हानिकारक पदार्थों अथवा जीवाणुओं को निगलने में लाइसोसोम सहायक होते हैं। इसी कारण इन्हें आत्मघाती थैलियों की संज्ञा दी जाती है। **(घ)** 1. हाथ वाला लैंस इतना शक्तिशाली नहीं होता और यह वस्तुओं को भली-भाँति आवर्धित नहीं करता हैं जबकि सूक्ष्मदर्शी सूक्ष्मतम वस्तुओं को आवर्धित करने की क्षमता रखता है। 2. एक कोशिकीय जीव एक कोशिका से बने होते है, जबकि बहुकोशिकीय जीवधारी अनेक कोशिकाओं से बने होते हैं। 3. क्लोरोप्लास्ट हरित रंजकों की उपस्थिति के कारण हरे रंग के होते हैं जबकि क्रोमोप्लास्ट विविध रंगों में पाये जाते हैं। **(ङ)** 1. बाहरी 2. केन्द्रक द्रव्य 3. सेंट्रोसोम 4. प्लास्टिड 5. फ्लैजेला 6. सूक्ष्मदर्शीय **(ज)** 1. सत्य 2. सत्य 3. असत्य 4. सत्य 5. सत्य **(घ)** 1. रिक्तिकाएँ :- ये थैलीनुमा संरचनाएँ होती हैं। ये खाद्य, जल तथा अवशेषों का भंडारण करती हैं। 2. गोल्गी बॉडीज :- ये चपटी थैलीनुमा रचनायें होती हैं, जो कोशिकाओं में कुछ निश्चित पदार्थों के स्त्राव में लगी रहती है। 3. लाइसोसोम्स :- ये गोलाकार झिल्ली से आबद्ध थैलियाँ होती है, जिनमें लगभग 40 तरह के किण्वक पाये जाते हैं। 4. सेंट्रोसोम्स :- ये जन्तु कोशिकाओं में पाये जाते हैं। ये केन्द्रक के पास उपस्थित पाये जाते हैं। **क्रियाकलाप** – छात्र स्वयं करें।

अध्याय- 7 लैंगिक प्रजनन

(क) 1. मच्छर, केंचुआ, तितलियाँ, मक्खियाँ। 2. जांतविक प्रजनन। 3. एकलिंगी। 4. मादा के शरीर के अन्दर होने वाला निषेचन। 5. वह अवस्था जिसमें यौन परिपक्वता का प्रारम्भ होता है। 6. अंडाशय में मादा लिंग कोशिकाओं ओवा का निर्माण होता है। 7. जब अंडकोष से शुक्राण निकलने के बाद एक लम्बी नलिका में प्रवाहित होते है, जिसकी लम्बाई 19 फुट अथवा 6 मीटर होती है। इस नली को वाहिनी अधिवृषण कहते हैं। 8. नर कोशिकाएँ शिशु के लिंग का निर्धारण करती हैं। वैसे शिशु के लिंग का निर्धारण नर अथवा महिला किसी एक के हाथ में नहीं है। 9. जीवन स्तर में सुधार लाने, गरीबी दूर करने एवं देश की आर्थिक उन्नति के लिये। 10. अंत: स्त्रावी तंत्र हमारे शरीर के विविध क्रियाकलापों जैसे शारीरिक व मानसिक विकास एवं पाचन आदि को

नियंत्रित करता है। 11. हमारे वक्ष के ऊपरी भाग में स्थित होती है। यह प्रतिरोधक क्षमता के विकास में विशेष योगदान करती है। **हॉट प्रश्न –** 1. नर लैंगिक हार्मोन टेस्टोस्टी-नरोन है तथा मादा लैंगिक होर्मोन ओइस्ट्रोनजन हार्मोन है। 2. जब शुक्राणु तथा अंडाणु परस्पर मिलते है तब एक तीसरी कोशिका का जन्म होता है जिसे युग्मनज कहते है। **(ख)** 1. धरती पर प्रत्येक जन्तु के लिये अपनी प्रजाति अथवा वंश को बनाये रखने के लिए प्रजनन आवश्यक है। मच्छरों में प्रजनन अंडों से होता है। 2. प्रत्येक जनक नर अथवा मादा एक प्रजननात्मक कोशिका अथवा युग्मक उत्पन्न करते हैं। नर जनक शुक्राणु उत्पन्न करता है, जबकि मादा जनक अंडे या अंडाणु उत्पन्न करती है। जब शुक्राणु अथवा अंडाणु आपस में मिलते है तब एक तीसरी कोशिका युग्मनज का निर्माण होता है। इस प्रकार निषेचन प्रक्रिया से प्रजनन होता है। 3. निषेचन क्रिया के बाद लगभग नौ महिनों में युग्मनज पूर्ण रूप से विकसित हो जाता है, जिसे प्राय: भ्रूण अथवा शिशु कहा जाता है। 4. नर के लैंगिग अंगों में एक जोड़ा अण्डकोष होते हैं जो शुक्राणु उत्पन्न करते हैं। वहिनी अधिवृक्षण से शुक्राणु प्रवाहित होते है और शुक्रवाहिनी में प्रवेश करते हैं। शिश्न एक बाह्य नर अंग होता है जिसका प्रयोग निषेचन के लिये किया जाता है। 5. शिशु का लिंग निर्धारण का उत्तर भाग (क) के के प्रश्नोत्तर संख्या 8 में देखिये। 6. भौतिक, रासायनिक एवं शल्य चिकित्सा, नसबन्दी, परिवार कल्याण केन्द्रों की स्थापना, शिक्षा का प्रचार। 7. ऐसा हार्मोनल तंत्र जो हमारे शरीर के समस्त क्रियाओं को नियंत्रित करता है। हमारे शरीर में प्रमुख अंत: स्त्रावी ग्रंथियाँ निम्न हैं - पीयूष ग्रंथि, बाल्य ग्रंथि, अग्नाशय, डिम्ब-ग्रंथि (स्त्री में), अवटु ग्रंथि, अधिवृक्क ग्रंथि, अंडकोष (पुरुष में)। 8. अग्नाशय ग्रंथि ग्लूकोज की मात्रा को नियंत्रित करती है। इस हार्मोन की कमी से व्यक्ति मधुमेह रोग का शिकार हो जाता है। **(घ)** 1. अधिकांश जन्तुओं में पृथक लिंग नर व मादा होते हैं। इस तरह के जन्तु एकलिंगी कहलाते हैं, इसके विपरीत कुछ जन्तु ऐसे होते हैं, जिनमें प्रत्येक जीव में प्रजनन सम्बन्धी नर तथा मादा दोनों अंग पाये जाते हैं। ये उभयलिंगी होते हैं। 2. बाह्य निषेचन में जन्तु अपने अंडे तथा शुक्राणु दोनों को एक साथ जल में छोड़ते हैं। यह समय के साथ-साथ नये जीवों को जन्म देते हैं। जबकि आन्तरिक निषेचन में नर मादा के शरीर में निषेचन करता है। 3. भ्रूण मादा के गर्भाशय में नौ महिने में विकसित होता है जबकि अनेक जन्तु अण्डों से शिशु का रूप ग्रहण करते हैं। **(ग)** 1. लैंगिग प्रजनन :- प्रत्येक जनक नर तथा मादा शुक्राणु एवं अंडाणु को मिलाकर निषेचन द्वारा प्रजनन करते है। 2. उभयलिंगाश्रयी :- जिन जन्तुओं में नर एवं मादा अंग पाये जाते हैं। 3. युग्मनज :- शुक्राणु तथा अंडाणु के परस्पर मिलने पर जिस तीसरी कोशिका का जन्म होता है, उसे युग्मनज कहते हैं। 4. गर्भाशय :- यह एक नाशपाती के आकार का खोखला अंग है, जिससे भ्रूण का जन्म होता है। 5. शुक्राणु :- नर में उत्पन्न जीव जो मादा की योनि में प्रवेश कर अंडाणु के साथ मिलकर भ्रूण को बनाता है। 6. पीयूष ग्रंथि :- स्थायी अंत: स्त्रावी ग्रंथि है, जो वृद्धिकारक हार्मोन का स्त्रावण करती है जिससे अस्थियों के विकास को बढ़ावा मिलता है। **(क)** 1. अध्यापक की सहायता से स्वयं चित्र (आरेख) बनाइये। **(क) तालिका –**

1. मस्तिष्क के आधार पर,	वृद्धिकारक हार्मोन	स्त्रावी ग्रंथियों पर नियंत्रण
2. गर्दन में	थायरॉक्सीन	ऊर्जा का नियंत्रण
3. उदर के निम्न भाग में,	टेस्टोक्टीनरोन	शुक्राणु की उत्पत्ति एवं यौन विकास
4. आमाशय के निकट उदर में,	हार्मोन इंसुलिन	ग्लूकोज की मात्रा का नियंत्रण
5. उदर के निम्न भाग में	ओइस्ट्रोनज	अंडों की उत्पत्ति एवं यौन विकास (महिलाओं में)

(ङ) 1. अंडे, विकसित जन्तु 2. युग्मनज 3. प्रजनन 4. गोल 5. हार्मोनल तंत्र **(ज)** 1. सत्य 2. सत्य 3. असत्य 4. सत्य 5. सत्य 6. सत्य **(ज)** 1. अंडे तथा शुक्राणु मिलकर युग्मनज बनाते हैं। 2. यौन अंगों का कार्य करने की आयु: नर में 14 से 16 वर्ष, मादा में 11-12 वर्ष। 3. नर कोशिका शिशु के लिंग का निर्धारण करती है। 4. गरीबी दूर करने, अच्छा जीवन-स्तर में सुधार हेतु। **क्रियाकलाप –** अध्यापक की सहायता से विद्यार्थी स्वयं करें।

अध्याय- 8 बल तथा उसके प्रभाव

(क) 1. किसी वस्तु का अभिकर्षण अथवा अपकर्षण। 2. न्यूटन 3. यंत्रों द्वारा उत्पन्न बल को। 4. स्थिर वस्तु में 5. आवेशित वस्तु द्वारा किसी दूसरी आवेशित वस्तु अथवा अनवेशित वस्तु पर लगाया गया बल। 6. पवन ऊर्जा से। 7. चुम्बक द्वारा चुम्बकीय वस्तुओं पर लगाये गये बल को। 9. मांसपेशियों द्वारा लगाये गये बल को। **हॉट प्रश्न –** 1. फूँकी हुई वायु में बल होता है जिसके कारण धुएँ की दिशा परिवर्तित हो जाती है। 2. भारी वजन उठाने में पेशिय बल अथवा जैविकी बल का का प्रयोग करते है। **(ख)** 1. किसी वस्तु को धकेलना या खींचना, दरवाजा खोलना, गेंद उछालना, पानी की बाल्टी उठाना, क्रिकेट की गेंद फेंकना। 2. गतिमान वस्तु को विपरीत दिशा में खींचने पर। 3. हाँ, रसोईघर में गूंथे आटे को रोटियों में परिवर्तित कर दिया जाता है। 4. मांसपेशियों द्वारा लगाये जाने वाले बल को। दैनिक जीवन में वस्तुओं का उठाना, खिंचना आदि। 5. एक आवेशित वस्तु द्वारा किसी दूसरी आवेशित वस्तु अथवा अनावेशित वस्तु पर लगाया गया बल। 6. कीलें चुम्बक की ओर कुछ दूरी से ही आकर्षित हो जाती है, क्योंकि चुम्बकीय बल निश्चित दूरी पर भी काम करता है। 7. नहीं, जिस जगह वह वस्तु है उसका कुछ बल उस वस्तु पर पड़ता है तथा यह बल अपकर्षित बल की विपरीत दिशा में पड़ता है। यह विरोधक बल-घर्षण है। **(ग)** 1. असत्य 2. सत्य 3. असत्य 4. असत्य 5. सत्य **(घ)** 1. घर्षण तथा चुम्बकीय बल :- प्रत्येक स्थिर वस्तु में कुछ बल का प्रयोग होता है, जो उसकी गति का विरोध करता है, यह विरोधक बल घर्षण है। चुम्बक के प्रयोग करने पर जो बल लगता है वह चुम्बकीय बल है। 2. यांत्रिक बल एवं पेशीय बल :- यंत्रों के प्रयोग का बल यांत्रिक होता है, जबकि मानव मांसपेशियों का बल पेशीय बल होता है। 3. 1 ग्राम फोर्स एवं 1 न्यूटन = 1 Kg + = 1000 Kgl, 1 Kg + = 9.8 N **(ङ)** 1. परिमाण, दिशा 2. रोक 3. प्रचंड वेग, दिशा 4. बल का प्रयोग 5. मशीन, ऊर्जा 6. चुम्बकीय **(च)** 1. (क) 2. (ख) 3. (ग) 4. (ग) **(छ)** 1. पेशीय बल :- मांसपेशियों द्वारा उत्पन्न बल। 2. पृथ्वी तथा पदार्थों के बीच के आकर्षण का बल। 3. हाँ, मुँह से फूंकी गयी वायु धुएँ की दिशा को बदल देती है। 4. एक आवेशित वस्तु द्वारा दूसरी आवेशित वस्तु अथवा अनावेशित वस्तु पर लगाया गया बल। 5. प्रत्येक स्थिर वस्तु में खुद का कुछ बल **(छ)** 1. (स) 2. (द) 3. (ब) 4. (अ) **क्रियाकलाप–** छात्र अध्यापक की सहायता से स्वयं करें।

अध्याय- 9 घर्षण

(क) 1. घर्षण ऐसा बल है जो वस्तुओं की गति में बाधा उत्पन्न करता है। इसकी उत्पत्ति दो सतहों की विषमता के कारण होती है। 2. चूंकि सीमित घर्षण दो असमान सतहों में दो वस्तुओं के आपसी गुथने से होता है। इस उलझन को दूर करने के लिये बल प्रयोग की आवश्यकता होती है जिससे कि एक-दूसरे की सतह की उलझन को तोड़कर गति कर सके। 3. सीमित घर्षण हमेशा गति का विरोध करता है। सीमित घर्षण दूसरे के सम्पर्क में आ रही सतह की प्रकृति पर निर्भर है। सीमित घर्षण वस्तु के भार बढ़ने के साथ बढ़ता है। सीमित घर्षण सम्पर्क में आ रही दोनों सतहों

के क्षेत्रफल पर निर्भर नहीं करता। 4. जब कोई वस्तु किसी अन्य वस्तु पर लोटन करती है तो लोटनिक घर्षण होता है। 5. जब कभी कोई लोटनक या पहिया सतह पर चलता है तो भार के कारण उसमें अस्थाई न्यूनता आती है। इस प्रक्रिया में लोटनक या पहिया वस्तु तथा ढलान की सतह के मिलन बिन्दु पर स्वयं अस्थाई रूप से अवसान पर आ जाता है। इस अपसान के कारण लोटनक की दिशा में एक प्रकार का अवनत तल बनता है। अत: इससे अस्थायी रूप से उबरने के लिये एक बल की आवश्यकता होती है। 6. हाँ, वायु में भी घर्षण होता है, किन्तु बहुत कम होता है, जिसे हम प्राय: महसूस नहीं कर पाते। उदाहरणार्थ :- वायुयान का घर्षण। 7. विपरीत दिशा में चाप्पुओं को चलाने से नाव का वेग कम हो जाता है और वह सुरक्षित तट पर पहुँच जाती हैं। 8. चिकनाहट उत्पन्न करके घर्षण को कम किया जाता है। 9. फिसलने से बचाव, वाहन को सहजता से रोकना सम्भव, वाहनों का सड़क के साथ घर्षण को बढ़ाना। 10. ऊर्जा की क्षति, मशीनों को क्षति, मशीनों का गरम होकर जलना, वाहनों की गति कम करना, जूतों का घिस जाना आदि। **हॉट प्रश्न –** 1. अंतरिक्ष यान को आग से बचाने के लिए उसके ऊपर ताप प्रतिरोधक आवरण लगाया जाता है। 2. टायरों में खाँचे बनाए जाते है ताकि वे वाहन तथा सड़क के बीच उचित घर्षण उत्पन्न कर सके। इससे फिसलने से भी बचाव होता है। **(ङ)** 1. घर्षण 2. स्थैतिक 3. क्षेत्रफल 4. वजन, प्रकृति 5. भार, रूप से अवसान 6. ताप प्रतिरोधक 7. आकृति, घर्षण 8. नुकसान (क्षति) 9. गति **(ज)** 1. असत्य 2. असत्य 3. सत्य 4. सत्य 5. सत्य 6. सत्य **(छ)** 1. (ग) 2. (ग) 3. (क) **क्रियाकलाप –** अध्यापक की सहायता से विद्यार्थी स्वयं करें।

अध्याय- 10 दाब

(क) 1. किसी पृष्ठ के प्रति इकाई क्षेत्रफल पर लगने वाले बल को दाब कहते हैं। 2. दाब-मापन की इकाई न्यूटन प्रति वर्ग मीटर अथवा N/m^2 होती है। 3. दाब के व्यावहारिक उपयोग – ऊँचे गगनचुंबी भवनों की नींव को हमेशा चौड़ा रखा जाता है ताकि भवन के अत्यधिक दाब से भवन जमीन में न धँस पाए। बसों अथवा ट्रकों में पिछले पहिये में दो चक्के लगाए जाते हैं, क्योंकि वाहन का अधिकतम भार पीछे की ओर पड़ता है। 4. द्रव्य-दाब को मैनोमीटर नामक उपकरण की सहायता से मापा जाता है। 5. वायुमंडल द्वारा डाला गया दाब वायुमंडलीय-दबाव कहलाता है। 6. वायुमंडलीय-दबाव को मापने के लिए उपयोग किये जाते हैं। 7. वायु-दबाव के परिणाम – ऊँचाई पर चढ़ने वालों की नाक से होने वाला रक्त स्त्राव एक सामान्य घटना है। ऊँचाई पर वायुमंडलीय दबाव से हमारे शरीर के अंदर का दबाव अपेक्षाकृत अधिक हो जाता है, परिणामस्वरूप कुछ रक्त वाहिकाएँ फट जाती हैं। जेट विमान जिस ऊँचाई पर उड़ता है वहाँ वायु-दबाव बहुत कम होता है। इतनी अधिक ऊँचाई पर वायु में ऑक्सीजन का घनत्व भी अत्यधिक कम हो जाता है। अत: श्वसन में परेशानी उत्पन्न हो सकती है। यही कारण है कि विमान में सामान्य रूप से भूमि स्तर के वायुमंडलीय दबाव को बनाए रखने की आवश्यकता पड़ती है। **हॉट प्रश्न –** 1. ऊँचाई पर वायु मंडलीय दबाव हमारे शरीर द्वारा प्रयुक्त दबाव से कम हो जाता है। हमारे शरीर के अंदर दबाव अपेक्षाकृत अधिक हो जाता है। परिणाम स्वरूप कुछ रक्त वाहिकाएँ फट जाती है तथा नाक से खून आने लगता है। 2. इंजेक्शन लगाने में डॉक्टर वायुदाब का प्रयोग करते है। **(ख)** 1. किसी पृष्ठ के प्रति इकाई क्षेत्रफल पर लगने वाले बल को दाब कहते हैं। SI प्रणाली में दबाव की इकाई न्यूटन प्रति वर्ग मीटर अथवा N/m^2 होती है। फ्रेंच वैज्ञानिक ब्लासी पॉस्कल के नाम पर दाब की इस इकाई को पॉस्कल (Pa) कहा जाता है। दाब को $kgwt/m^2$ में नापा जाता है। CGS प्रणाली में दाब की इकाई डाइन प्रति वर्ग सेंटीमीटर अथवा dye/m^2 होती है। 2. चाकू, सूई तथा आरी के ब्लैड अथवा नोक के क्षेत्रफल को हमेंशा कम रखा जाता है, जिससे कि कम बल प्रयोग से वे अत्यधिक दाब डाल सकें। इसी तरह हथौड़े के प्रहार से एक कुंठित कील की तुलना में अधिक नुकीली कील को लकड़ी में सरलता से ठोका जा सकता है। 3. ऊँट सरलता से रेत पर चल सकता है क्योंकि ऊँट के पैर चौंड़े होते हैं। अत: जब वे रेत के संपर्क में आते हैं तो फैल जाते हैं अर्थात् उनका क्षेत्रफल बढ़ जाता है। अत: ऊँट द्वारा रेत पर पड़ने वाला दबाव कम हो जाता है तथा ऊँट के पैर रेत में गहरे धँसने से सुरक्षित बने रहते हैं। 4. बसों अथवा ट्रकों के पिछले पहियों में दो चक्के लगाए जाते हैं, क्योंकि वाहन का अधिकतम भार पीछे की ओर पड़ता है। अत: टायरों को पंचर होने से बचाने के लिए तथा सड़कों की विषमता से सुरक्षित बनाए रखने के लिए पीछे के भाग में दोहरे चक्के लगाए जाते हैं तथा दबाव कम हो जाता है। इससे क्षेत्रफल बढ़ जाता है तथा दबाव कम हो जाता है। इसी कारण से ट्रॉलरों में 16 या अधिक पहिए लगाए जाते हैं। 5. जब मछली जल की गहराई में होती है तो उसके शरीर में रक्त प्रवाह का दबाव अत्यधिक उच्च होता है तो रक्त चाप एकाएक बहुत कम हो जाता है। दबाव के इस अंतर के कारण ही उसका शरीर फट जाता है। 6. वायुमंडलीय-दबाव को मापने के लिए हम बैरोमीटर नामक उपकरण का प्रयोग करते हैं। टोरिसेलो ने सर्वप्रथम बैरोमीटर के सिद्धांत को उल्लेखित किया था। लगभग एक मीटर की लंबाई वाली पतली नली लो। इसके एक सिरे को बंद कर दो एवं उसे पारे से भरे दो। अब अपने बाएँ हाथ के अँगूठे से इसे बंद करो तथा नली को उल्टा करो। नली को अनुलंब स्थिति में अँगूठा हटाकर पकड़े रखो। पारे की कुछ मात्रा नली में प्रवाहित होने लगती है तथा शेष उर्ध्वाधर नली में यथावत् बनी रहती है। प्रतिलामी नली में पारे का यह स्तंभ वायुमंडलीय दबाव के सहारे बना रहता है तथा हमें वायुमंडलीय-दबाव के सहारे बना रहता है। इस तरह का उपकरण साधारण बैरोमीटर कहलाता है। 7. वायु दबाव का इस्तेमाल पहियों व गुब्बारों को फुलाने के लिए करते हैं। चिकित्सक इंजेक्शन लगाने के लिए भी इसी दबाव का प्रयोग करते हैं। साधारण हैंडपम्प से पानी खींचने के लिए भी इसी सिद्धांत का प्रयोग किया जाता है कि वायु बहुत अधिक दबाव डालती है। फांउटेन पैन में स्याही भरने के लिए भी इसी दबाव का प्रयोग किया जाता है। इसका इस्तेमाल किसी स्ट्रा की सहायता से मृदु पेय पीने के लिए भी करते हैं। 8. वायु दबाव के परिणाम – ऊँचाई पर चढ़ने वालों की नाक से होने वाला रक्त स्त्राव एक सामान्य घटना है। ऊँचाई पर वायुमंडलीय दबाव से हमारे शरीर के अंदर का दबाव अपेक्षाकृत अधिक हो जाता है, परिणामस्वरूप कुछ रक्त वाहिकाएँ फट जाती हैं। जेट विमान जिस ऊँचाई पर उड़ता है वहाँ वायु-दबाव बहुत कम होता है। इतनी अधिक ऊँचाई पर वायु में ऑक्सीजन का घनत्व भी अत्यधिक कम हो जाता है। अत: श्वसन में परेशानी उत्पन्न हो सकती है। यही कारण है कि विमान में सामान्य रूप से भूमि स्तर के वायुमंडलीय दबाव को बनाए रखने की आवश्यकता पड़ती है। **(ग)** 1. छात्र स्वयं करें। **(ङ)** 1. दबाव 2. बढ़ता 3. कम 4. कम 5. न्यूटन प्रति वर्ग मीटर 6. तिर्यक। **(ज)** 1. सत्य 2. असत्य 3. सत्य 4. सत्य 5. सत्य 6. सत्य। **क्रियाकलाप –** छात्र स्वयं करें।

अध्याय- 11 ध्वनि

(क) 1. हमारे कानों द्वारा अनुभूत संवेदना ही, ध्वनि कहलाती है। 2.

ध्वनि ऊर्जा का एक रूप है। ध्वनि ऊर्जा का वह रूप है जिसे हम अपने कानों से सुन सकते हैं। 3. किसी वस्तु की अपनी औसत स्थिति से इधर-उधर अथवा आगे-पीछे की गति उसकी कंपन गति कहलाती है। 4. तीव्रता ध्वनि की वह विशेषता है जो समान आवृत्ति से उत्पन्न क्षीण और तीव्र ध्वनि में भेद कर सकने में सहायक होती है। स्वरमान वह विशेषता होती है, जिसमें ध्वनि की तीक्ष्णता अथवा मंदता में भेद किया जा सकता है। 5. ध्वनि का गुण उसकी आवृत्ति तथा संबंधित तीव्रता के आधार पर निर्धारित किया जाता है। 6. ढोलक द्वारा आगे-पीछे की जाने वाली एक संपूर्ण गति को दोलन कहते हैं। 7. स्वरित्र ण एक आकार का स्टील का चिमटा होता है जिसमें एक हत्थी भी पायी जाती है। इसकी दो भुजाएँ होती हैं, जिन्हें इसके काँटे कहते हैं। जबकि इसकी हत्थी को इसका वृत कहा जाता है। 8. अत्यधिक निम्न आवृत्ति वाली ध्वनियाँ जिन्हें हम सुन नहीं सकते हैं, अवश्रव्य ध्वनियाँ कहलाती हैं। 9. सुशीर वाद्य उपकरणों के वायु स्तंभों में कंपन द्वारा ध्वनियाँ उत्पन्न होती हैं। इन उपकरणों के वायु स्तंभों में वायु प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से फूँकी जाती है। कुछ प्रमुख सुशीर वाद्य उपकरण हैं – शहनाई, बाँसुरी, बिगुल आदि। 10. विवाह अथवा धार्मिक अनुष्ठानों में लाउडस्पीकर के प्रयोग द्वारा उत्पन्न शोर। वायुयान, रेलगाड़ियों, कारखानों आदि में चलने वाली मशीनें बड़े पैमाने पर शोर उत्पन्न करती हैं। **हॉट प्रश्न –** 1. किसी लोलक द्वारा सैकंड में दूर किए जाने वाले दोलनों की संख्या दोलनों की आवृत्ति कहलाती है। 2. मनुष्य 20Hz तथा 20,000 Hz के बीच की ध्वनियाँ सुन सकते है। **(ख)** 1. हमारे कानों द्वारा अनुभूत की जाने वाली संवेदना ही, ध्वनि कहलाती है। किसी वस्तु की अपनी औसत स्थिति से इधर- उधर अथवा आगे-पीछे की गति उसकी कंपन गति कहलाती है। प्रत्येक ध्वनि का स्रोत कोई न कोई कंपित वस्तु होती है। उदाहरणत- सितार, वीणा अथवा गिटार आदि से उत्पन्न ध्वनियाँ उनके तारों द्वारा उत्पन्न होती हैं। इसके विपरीत तबला अथवा ड्रम से ध्वनियाँ उनकी सतहों पर किए जाने वाले प्रहार से उत्पन्न कंपन से पनपती हैं। मच्छरों अथवा मधुमक्खियों के भिनभिनाने की ध्वनि उनके पंखों से उत्पन्न होने वाली कंपन होती है। 2. तीव्रता ध्वनि की वह विशेषता है जो समान आवृत्ति से उत्पन्न क्षीण और तीव्र ध्वनि में भेद कर सकने में सहायक होती है। ध्वनि की उच्चता कंपित वस्तु की आयाम पर निर्भर करती है। आयाम जितना अधिक होता है, ध्वनि की तीव्रता भी उतनी ही अधिक होती है। **उदाहरण :** यदि किसी ड्रम को हल्के से प्रहार करते हैं तो उससे कोमल ध्वनि उत्पन्न होती है, क्योंकि आयाम कम होता है। इसके विपरीत जब इस ड्रम पर अपेक्षाकृत बहुत अधिक तीव्र गति से प्रहार करते हैं तो प्रचंड ध्वनि उत्पन्न होती है। क्योंकि इस स्थिति में आयाम बहुत अधिक होता है। 3. बच्चों की आवाज़ वयस्कों की तुलना में अधिक तीक्ष्ण होती है, क्योंकि कंपन की आवृत्ति ध्वनि की प्रबलता अथवा स्वरमान को सुनिश्चित करती है। यदि कंपन की आवृत्ति कम होती है तो ध्वनि का स्वरमान निम्न होता है। इसके विपरीत यदि कंपन की आवृत्ति अधिक होती है तो ध्वनि का स्वरमान भी अधिक होता है। 4. एक बेलजार लो तथा उसमें विद्युत घंटी लगाकर उसके मुख को कार्क से इस प्रकार बंद करो कि जार के अंदर वायु प्रवेश न कर सके। अब बेलजार को निर्वात पंप की सतह पर रखो एवं उसके किनारों पर थोड़ी-सी चिकनाई लगाओं ताकि उसमें वायु न जा सके। किसी कुंजी की मदद से घंटी को बैटरी से जोड़ो। अब कुंजी को दबाओं, इसका हथौड़ा जैसे ही गोंग से टकराएगा। आपको घंटी की ध्वनि सुनाई देगी। अब निर्वात पंप को चालू करो। आप देखेंगे कि बेलजार से वायु बाहर निष्कासित हो जाती है। इसके साथ ही घंटी की ध्वनि की प्रबलता कम हो जाती है। जब पूर्ण निर्वात की स्थिति बन जाती है तो हथौड़े के गोंग से टकराने की क्रिया तो दिखाई देती है किंतु किसी तरह की ध्वनि सुनाई नहीं देती है। 5. संगीत उपकरण तीन वर्गों में विभाजित किये जा सकते हैं :- तंतु के चौखटे में जो कि आंशिक रूप से खोखले होते हैं उन पर डोरियाँ कसी हुई होती हैं। उन पर बँधी डोरियाँ अथवा तंतुओं को झंकृत किया जाता है। उन पर बँधी डोरियाँ अथवा तंतुओं को झंकृत किया जाता है। फलतः विविध प्रकार की संगीतमय ध्वनियाँ उत्पन्न होती हैं। सुशीर उपकरण – सुशीर वाद्य उपकरणों के वायु स्तंभों में कंपन द्वारा ध्वनियाँ उत्पन्न होती हैं। इन उपकरणों के वायु स्तंभों में वायु प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से फूँकी जाती है। कुछ प्रमुख सुशीर वाद्य उपकरण हैं – शहनाई, बाँसुरी, बिगुल आदि। संघात उपकरण – संघात वाद्य उपकरण को ताल वाद्य उपकरण भी कहते हैं। उदाहरण- ढोलक, तबला, ड्रम आदि। 6. अवांछित, ऊँची तथा कर्कश ध्वनियों के माध्यम से वातावरण में उत्पन्न होने वाली गड़बड़ी अथवा शोर, ध्वनि अथवा शोर-प्रदूषण कहलाता है। वैज्ञानिक रूप से अनियमित कंपनों द्वारा उत्पन्न शोर ही ध्वनि या शोर प्रदूषण कहलाता है। ध्वनि प्रदूषण के प्रमुख स्रोत :- घरों में शोर का कारण बनने वाले प्रमुख स्रोत हैं, टेलीविजन, रेडियो, वाशिंग मशीन, कूलर आदि। विवाह अथवा धार्मिक अनुष्ठानों में लाउडस्पीकर के प्रयोग द्वारा उत्पन्न शोर। वायुयान, रेलगाड़ियों, कारखानों आदि में चलने वाली मशीनें बड़े पैमाने पर शोर उत्पन्न करती हैं। **(ग)** 1. कंपन – किसी वस्तु की अपनी औसत स्थिति से इधर-उधर अथवा आगे पीछे की गति उसकी कंपन गति कहलाती है। 2. दोलन – ढोलक द्वारा आगे-पीछे की जाने वाली एक संपूर्ण गति को दोलन कहते हैं। 3. दोलन की आवृत्ति – किसी ढोलक द्वारा एक सेकेंड में पूरे किये जाने वाले दोलनों की संख्या दोलनों की आवृत्ति कहलाती है। 4. स्वरमान – स्वरमान, ध्वनि की वह विशेषता होती है जिससे ध्वनि तीक्ष्णता अथवा मंदता में भेद किया जा सकता है। 5. अवश्रव्य ध्वनि – अत्यधिक निम्न आवृत्ति वाली ध्वनियाँ, जिन्हें हम सुन नहीं सकते हैं, अवश्रव्य ध्वनियाँ कहलाती हैं। **(ज)** 1. असत्य 2. सत्य 3. असत्य 4. सत्य 5. असत्य। **(च)** 1. (ग) 2. (घ) 3. (ङ) 4. (च) 5. (ख) 6. (क)। **(घ)** 1. छात्र स्वयं करें। **क्रियाकलाप –** छात्र स्वयं करें।

अध्याय- 12 विद्युत धारा के रासायनिक प्रभाव

(क) 1. प्रवाहित आवेश 2. लकड़ी, रबड़, वायु आदि। 3. क्योंकि इसमें विद्युत की धारा गुजरती है। 4. हाँ, तरल पदार्थ विद्युत चालक अथवा रोधी हो सकते हैं। 5. एक ऐसी प्रक्रिया जिसके तहत विद्युत धारा की मदद से किसी धात्विक सतह पर उससे श्रेष्ठ धातु की पतली परत चढ़ायी जाती है। 6. अशुद्ध धातुओं से शुद्ध धातुएँ प्राप्त करने की विधि। **(ख)** 1. जिसमें विद्युत धारा प्रवाहित होती है उसे विद्युत चालक कहते हैं जैसे- ताम्बों के तार। जिसमें विद्युत धारा का प्रवाह नहीं होता है जैसे- लकड़ी, रबड़ आदि। 2. क्योंकि इससे विद्युत धारा शरीर में प्रवाहित हो सकती है और विद्युत का आघात लग सकता है। 3. ऐसे रासायनिक यौगिकों के विलयन जो विद्युत सुचालक नहीं है तथा जिनमें किसी तरह का रासायनिक परिवर्तन नहीं होता। जैसे- पेट्रोल, केरोसिन, एल्कोहल, जल आदि। 4. ऐसी प्रक्रिया जिसमें विद्युत धारा की मदद से किसी धात्विक सतह पर उससे श्रेष्ठ धातु की पतली परत चढ़ा दी जाती है यथा लोहे की वस्तु पर ताँबे की पतली परत को चढ़ा देना। 5. वाहनों के पहियों पर कवर, साइकिलें एवं मोटर साइकिलों के हैंडिलों पर निकल एवं क्रोमियम का लेपन आदि। **(ग)** 1. विद्युत धारा प्रवाहित होना। 2. जल में से विद्युत धारा को प्रवाहित करना। 3. किसी धात्विक सतह पर श्रेष्ठ धातु की परत चढ़ाना। 4. धनात्मक रूप से आवेशित कॉपर आयन

ऋणाग्र तक पहुँचकर विद्युत आवेश ग्रहण कर कॉपर के अणु बन जाते हैं। **(ज)** 1. असत्य 2. असत्य 3. सत्य 4. सत्य 5. असत्य **क्रियाकलाप –** छात्र स्वयं करें।

अध्याय- 13 वर्षण, गर्जना और तड़ित

(क) 1. जब किसी एक पदार्थ को अन्य पदार्थ पर घर्षित करते हैं उसे विद्युत आवेश कहते हैं। 2. पदार्थों के आपसी घर्षण से उत्पन्न विद्युत आवेश स्थैतिक विद्युत है। 3. धनात्मक आवेश, ऋणात्मक आवेश। 4. पैन को ऊनी वस्त्र पर घिसना। 5. आवेश को न तो उत्पन्न किया जा सकता है तथा न ही नष्ट। 6. जब आकाश में दो बादल जिनमें असमान आवेश है, परस्पर निकट आते हैं तो उनके बीच गंभीर निरावेशन होता है। इस दौरान गरमीं, प्रकाश तथा ध्वनि के रूप में बड़ी मात्रा में ऊर्जा मुक्त होती है। इसे तड़ित कहते हैं। 7. यह मानव तथा अन्य जीव-जन्तुओं की मृत्यु का कारण हो सकती हैं। **(ख)** 1. इस क्रिया से एक तरह का बल उत्पन्न होता है जो वस्तुओं को आकर्षित एवं विकर्षित करता है। इस बल को स्थिर वैद्युतिकी बल कहते हैं। 2. जब किसी एक पदार्थ को अन्य पदार्थ पर रगड़ते हैं तो विद्युत आवेश उत्पन्न होता है जैसे स्थैतिक विद्युत के रूप में जाना जाता है। 3. आवेश के संरक्षण में आवेश को न तो उत्पन्न किया जा सकता है तथा न ही नष्ट। 4. बैंजामिन फ्रैंकलीन ने यह सिद्ध किया कि किसी तूफान के दौरान बादल आवेश उत्पन्न करते हैं। जो तड़ित (बिजली) हम आकाश में देखते हैं वह बादलों के बीच प्रवाहित होने वाला भारी आवेश होता है। 5. जब दो बादल जिनमें असमान आवेश उपस्थित होता है, परस्पर निकट आते हैं तो उनके बीच गम्भीर निरावेशन हो सकता है। इस दौरान गरमी, प्रकाश तथा ध्वनि के रूप में बड़ी मात्रा में ऊर्जा मुक्त होती है। 6. चूंकि सम्भव है कि उनके निकटतम बादल में निहित आवेश के विपरीत उच्च आवेश विकसित हो जाये। यह वृक्षों के माध्यम से बादल तथा पृथ्वी के बीच भयंकर तड़ित उत्पन्न कर सकती है। 7.तड़ित के कारण वायुमंडलीय नाइट्रोजन को ऑक्सीजन के साथ संयोजित होने का अवसर मिलता है तथा इस तरह नाइट्रोजन के ऑक्साइड बनते हैं। निरावेशन वायु के माध्यम से ऑक्सीजन का कुछ अंश ओजोन में बदल जाता है। ओजोन हमारे लिए बहुत लाभदायक है क्योंकि यह सूर्य से आने वाली खतरनाक पैराबैंगनी किरणों से हमारी रक्षा करती है। 8. हम तड़ित चालक की स्थापना करके ऊँचे भवनों की तड़ित से सुरक्षा कर सकते हैं। **हॉट प्रश्न –** 1. बैंजामिन फ्रैंकलीन नामक वैज्ञानिक ने आवेशों को दो भिन्न नाम दिए। 2. तड़ित झंझा के दौरान पेड़ के नीचे शरण नहीं लेनी चाहिए क्योंकि ऐसी जगह पर वृक्ष के माध्यम से तड़ित निरावेशन का खतरा बना रहता है। **(ग)** 1. स्थिर वैद्युतिकी बल :- वह बल जो वस्तुओं को आकर्षित अथवा विकर्षित करता है उस बल को स्थिर वैद्युतिकी बल कहते हैं। 2. निरावेशन :- संघनन की प्रक्रिया से बादलों की रचना होती है तथा इन बादलों में स्थैतिक विद्युत आवेश उपस्थित होता है जो धनात्मक अथवा ऋणात्मक हो सकता है। ऐसी स्थिति में बहुत की कम समय में वायु के माध्यम से आवेश गुजरता है। सामान्यत गरमी तथा प्रकाश इसके साथ ही प्रकट होते हैं। यह परिघटना निरावेशन कहलाती है। 3. गर्जना :- बादलों के आवेश उत्पन्न होने के कारण उनके आपस में टकराने वाला भयंकर शोर। 4. तड़ित - निरावेशन के कारण गरमी, प्रकाश या ध्वनि ऊर्जा मुक्त होती है। यह तड़ित है। **(च)** 1. (घ) 2. (ङ) 3. (ग) 4. (ख) 5. (क) **(छ)** 1. ब 2. ब 3. ब **(ज)** 1. सत्य 2. सत्य 3. सत्य 4. असत्य 5. सत्य **(ङ)** 1. उत्पन्न, नष्ट 2. विषम 3. दुर्घटनाओं, नष्ट 4. गरम, जलवाष्प 5. वृक्ष 6. ओजोन। **क्रियाकलाप –** छात्र स्वयं करें।

अध्याय- 14 प्रकाश

(क) 1. प्रकाश का सरल रेखा गमन। 2. जब किसी कार की शीर्ष लाइट को जलाया जाता है तो उससे निकलने वाला प्रकाश सरल रेखा में ही दिखाई देता है। 3. जब प्रकाश की किरणें एक प्रकाशिक माध्यम से दूसरे प्रकाशिक माध्यम में गति करती है तो ये किरणें उसकी सतह से दूर बिखर जाती है। इसे परावर्तित किरण कहते हैं। 4. परावर्तित किरण तथा अभिलम्ब के बीच के कोण को पारवर्तन कोण कहते हैं। 5. प्रतिबिम्ब वस्तु के समान आकार वाला होता है। 6. दर्पण द्वारा किसी एक कोण पर स्थित होने की स्थिति में बहु प्रतिबिम्ब बनाने के सिद्धांत पर बनाया गया खिलौना बहु मूर्तिदर्शी कहलाता है। 7. यह दृष्टि पटल पर वह स्थान होता है जहाँ दृष्टि तंत्रिकाएँ नेत्र गोलक में प्रवेश करती है। 8. आँखों को प्रतिदिन साफ पानी से धोना चाहिए। लगातार पढ़ने-लिखने का कार्य नहीं करना चाहिए। **हॉट प्रश्न –** 1. चेहरा देखनो वाला आईना दर्पण का श्रेष्ठ उदाहरण है। 2. ब्रेल लिपि का आविष्कार लुईस ब्रेल ने किया था। **(ख)** (1) अदृश्य ऊर्जा है जो हमारे अन्दर दृष्टि संवेदना के कारण बनती है। प्रकाश का प्रसरण सदैव एक सीधी अथवा सरल रेखा में प्रसरण करता है। (2) जब प्रकाश की किरणें किसी प्रकाशिक माध्यम से दूसरे प्रकाशिक माध्यम से गति करती हैं तथा उसकी सतह से बिखर जाती हैं। 3. (i) बनने वाला प्रतिबिम्ब वास्तविक होता है। (ii) प्रतिबिम्ब वस्तु के समान आकार का होता है। (iii) दर्पण के पीछे प्रतिबिम्ब ठीक उतनी ही दूरी पर बनता है जितनी दूरी पर दर्पण के आगे वह वस्तु स्थित होती है। 4. बहु-मूर्तिदर्शी दर्पण में तीन नत साधारण दर्पण 60° के कोण पर स्थापित किये जाते हैं। फिर इनको एक बेलनाकार डिब्बे में रखा जाता है जिसके रंगीन छोर पर रंगीन कॉच के टुकड़े लगे होते हैं। जब इनको दूसरे सिरे से देखते है तो दर्पण द्वारा कॉच के टुकड़ों के बहुप्रतिबिम्ब बनने के कारण सुन्दर तथा रंग-बिरंगे दिखाई देते हैं। 5. विविध भाग है- श्वेत पटल, स्वच्छ मंडल, रंजित पटल, दृष्टि पटल, पीत बिन्दु, अंध बिन्दु, परितारिका 6. जब विविध दूरियों से किसी वस्तु को देखने में लैंस अपने आकार में परिवर्तन नहीं करता तथा प्रतिबिम्ब धुंधला नजर आता है, उसे निकट दृष्टिता कहते हैं। यह दोष चश्मा बनाकर दूर किया जा सकता है। 7. अंधों तथा नेत्रहीन लोगों के पढ़ने-लिखने की लिपि है, जिसमें अक्षरों को उठाकर बनाया जाता है। 8. आँखों को प्रतिदिन स्वच्छ पानी से धोना, लगातार पढ़ने-लिखने का कार्य न करना, चलती ट्रेन या बस में न पढ़ना। **(घ)** 1. प्रकाश की वह किरण जो दर्पण पर पड़ती है आपतन किरण है जबकि दर्पण से मुक्त हो बाहर जाने वाली किरण परावर्तित किरण है। 2. दर्पण की चिकनी सतह पर पड़ने वाली किरणें जब एक ही दिशा में परावर्तित हो जाती है उसे नियंत्रित परावर्तन कहते हैं जबकि प्रकाश-पुंज किसी विषम सतह वाली वस्तु पर पड़ता है तो वह विविध दिशाओं में परिवर्तित हो जाती है। उसे अनियमित परावर्तन कहते हैं। 3. श्वेत पटल नेत्र गोलक का बाहरी आवरण है जबकि रंजित पटल अन्दर की ओर श्वेत पटल से जुड़ी एक घूसर झिल्ली होती है। 4. पीतबिन्दु वह लघु क्षेत्र है जो नेत्र-लैंस का सामना करता है, जबकि अंध बिन्दु दृष्टिपटल का वह स्थान है। जहाँ दृष्टि तंत्रिकाएँ नेत्र-गोलक में प्रवेश करती हैं। **(च)** 1. (ग) 2. (घ) 3. (ङ) 4. (च) 5. (ख) 6. (क) **(ङ)** 1. प्रकाश 2. पारदर्शी 3. आपतन किरण 4. समान 6. आइने 6. समावेश 7. पारदर्शी

अध्याय- 15 रात्रि का आकाश

(क) 1. हमारे चारों ओर विद्यमान वह अनंत अथवा असीम स्थान जिसमें प्रत्येक वस्तु समाहित है, ब्रह्मांड कहलाता है। 2. प्रकाश द्वारा एक वर्ष में तय की गई दूरी को प्रकाश के रूप में परिभाषित किया जाता

है। 3. किन्हीं दो खगोलीय पिंडों के बीच निहित दूरी खगोलीय दूरी कहलाती है। यह एक खगोलीय इकाई है। जिसे प्रकाश वर्ष अथवा पारसेक के रूप में जाना जाता है। 4. सूर्य तथा उसके आठ ग्रह तथा अन्य खगोलीय पिंडों जैसे क्षुद्र ग्रहों, धूमकेतुओं, उल्काओं आदि को सौरमंडल कहते हैं। 5. दिन के समय सूर्य का प्रकाश इतना अधिक प्रचंड होता है कि यह तारों से आने वाली रोशनी अथवा प्रकाश को पूर्णत: दबा देता है। अत: वे दिखाई नहीं देते हैं। 6. ऐसी ठोस खगोलीय संरचनाएँ जो सूर्य के चारों ओर एक निश्चित अंडाकार कक्ष में परिक्रमा करती हैं, ग्रह कहलाते हैं। 7. ऐसे लघु खगोलीय पिंड जो विशाल खगोलीय पिंडों के चारों ओर परिक्रमा करते हैं, प्राकृतिक उपग्रह कहलाते हैं। 8. जब चंद्रमा, सूर्य तथा पृथ्वी के बीच में स्थित होता है तो चन्द्रमा से परावर्तित होने वाला प्रकाश पृथ्वी पर नहीं पहुँच पाता है, इसे अमावस्या के रूप में जाना जाता है। 9. उल्का, सूर्य की ओर गति करने वाले लघु खगोलीय पिंड होते हैं। ये जैसे ही पृथ्वी के वायुमंडल में प्रवेश करते हैं तो घर्षण के कारण बहुत अधिक गरम हो जाते हैं तथा आकाश में प्रकाश की रेखा उत्पन्न करते हैं। कुछ उल्काएँ बिना जले ही पृथ्वी के धरातल पर पहुँच जाती हैं, इन्हें उल्का पिंड कहते हैं। 10. तारों का वह समूह जो किसी विशेष प्रतिरूप की रचना करता है, तारामंडल कहलाता है। **हॉट प्रश्न –** 1. पृथ्वी के सर्वाधिक निकटतम तारा प्रोक्सीमा सेंच्युरी है। 2. अमावस्या के दिन चन्द्रमा सूर्य तथा पृथ्वी के बीच स्थित होता है तथा पूर्णिमा के दिन पृथ्वी सूर्य तथा चन्द्रमा के बीच स्थित होती है। **(ख)** 1. सूर्य तथा उसके आठ ग्रह तथा अन्य खगोलीय पिंडों जैसे क्षुद्र ग्रहों, धूमकेतुओं, उल्काओं आदि को सौरमंडल कहते हैं। सूर्य हमारे सौरमंडल के केंद्र में स्थित है। सभी ग्रह अपने निश्चित अंडाकार पथ पर सूर्य के चारों ओर परिक्रमा करते हैं। इस पथ को उनकी कक्षा कहते हैं। सूर्य – सूर्य जलती हुई गैसों का विशाल गोला है अर्थात् यह एक तारा है। इसका अपना प्रकाश एवं ऊष्मा है। यह हमारी पृथ्वी के निकटतम स्थित तारा है। ग्रह – ऐसी ठोस खगोलीय संरचनाएँ जो सूर्य के चारों ओर एक निश्चित अंडाकार कक्ष में परिक्रमा करती हैं, ग्रह कहलाते हैं। प्रत्येक ग्रह अपने अक्ष पर घूर्णन करते हैं। सूर्य के निकटतम चार ग्रह (बुध, शुक्र, पृथ्वी एवं मंगल) अपेक्षाकृत छोटे शैलीय पिंड हैं, जो पार्थिव ग्रह अथवा पृथ्वीनुमा ग्रह कहलाते हैं। इसके अतिरिक्त अन्य चार ग्रह (बृहस्पति, शनि, अरुण, वरुण) विशाल ग्रह, जोवियन अथवा दैत्याकार ग्रह कहलाते हैं। 2. सूर्य – सूर्य जलती हुई गैसों का एक विशाल गोला है अर्थात् यह एक तारा है। इसका अपना प्रकाश एवं ऊष्मा है। यह हमारी पृथ्वी के सर्वाधिक निकटतम स्थित तारा है। सूर्य का व्यास 1,390,00 किमी. है तथा इसकी सतह का तापमान 5800° से. है। अन्य तारों की तुलना में यह मध्यम आकार, भार तथा आभा वाला तारा है। यह हमारे अधिक निकट होने के कारण ही हमें उपयुक्त मात्रा में प्रकाश तथा ऊष्मा प्रदान करता है। 3. ग्रहों के चारों ओर एक निश्चित कक्षा में परिक्रमा करने वाले खगोलीय पिंड, उपग्रह कहलाते हैं। उपग्रह दो प्रकार के होते हैं – प्राकृतिक उपग्रह – ऐसे लघु खगोलीय पिंड जो विशाल खगोलीय पिंडों के चारों ओर परिक्रमा करते हैं, प्राकृतिक उपग्रह कहलाते हैं। कृत्रिम उपग्रह – ऐसे उपग्रह, जिन्हें मानव द्वारा बनाकर पृथ्वी की कक्षा में स्थापित किया जाता है, मानव निर्मित अथवा कृत्रिम उपग्रह कहलाते हैं। इन उपग्रहों का एक निश्चित जीवनकाल होता है तथा उसके उपरांत वे उल्का की तरह जल जाते हैं। 4. चन्द्रमा एक अप्रदीप्त खगोलीय पिंड है। इसका अपना कोई प्रकाश नहीं है। यह सूर्य के प्रकाश से ही प्रकाशित होता है। जब इसके धरातल से परावर्तित होने वाला प्रकाश पृथ्वी पर पहुँचता है तो हम इसे देख पाते हैं। चन्द्रमा का केवल वही भाग हमें दिखाई देता है, जो सूर्य के प्रकाश को पृथ्वी की तरफ परावर्तित करता है। हमारे चारों ओर विद्यमान वह अनंत अथवा असीम स्थान जिसमें प्रत्येक वस्तु समाहित है, ब्रह्मांड कहलाता है। अमावस्या के अगले दिन हमें बालचंद्र अथवा अर्द्ध चंद्र दिखाई देता है। यह बालचंद्र दिन-प्रतिदिन बढ़ता जाता है। यह अमावस्या से 15 दिन तक बढ़ता है। पृथ्वी का रात की तरफ का हिस्सा चंद्रमा के दिन के तरफ के हिस्से की तरफ होता है। इसे पूर्णिमा के रूप में जाना जाता है। पूर्णिमा के उपरांत पूर्ण प्रकाशमान चंद्रमा का प्रकाश धीरे-धीरे कम होने लगता है। इसके एक सप्ताह बाद इसका पुन: आधा भाग ही दिखाई देता है। 5. कृत्रिम उपग्रहों को विविध प्रयोगों के लिए भिन्न-भिन्न कक्षाओं में स्थापित किया जाता है। इसका व्यापक रूप से संचार, मौसम संबंधी पूर्वानुमान तथा खगोलीय पिंडों के बारे में विविध प्रकार की जानकारी के लिए प्रयोग किया जाता है। 6. धूमकेतु ऐसे खगोलीय पिंड होते है जो विशाल अंडाकर कक्ष में सूर्य के चारों ओर परिक्रमा करते हैं। वे केवल उसी समय दिखाई देते हैं, जब सूर्य के निकट आते हैं। ये शैलों, धूल एवं बर्फ से बने पिंड होते हैं। जैसे ही ये सूर्य के निकट आते हैं, सूर्य के अत्यधिक तापमान के कारण इनके चारों ओर गैस तथा धूल के बादल एकत्र हो जाते हैं। जैसे-जैसे ये सूर्य के निकट आते जाते हैं, धूल तथा गैस की मात्रा बढ़ती जाती है। इस अवस्था में धूमकेतु अत्यधिक चमकीला हो जाता है तथा उसकी लंबी पूँछ विकसित हो जाती है। 7. सूर्य मेजर तथा अर्स माइनर में सात तारे शामिल होते हैं, किंतु अर्स माइनर में तारे एक-दूसरे के निकट स्थित होते हैं तथा कम चमकीले होते हैं। ध्रुव तारा अर्स मेजर का एक भाग है जो अर्स माइनर की पूँछ के सिरे पर पड़ता है। अर्स मेजर एक बड़ी चम्मच अथवा प्रश्न चिह्न की तरह दिखाई पड़ते हैं। 8. क्षुद्र-ग्रह शैलों एवं धातुओं से बने ऐसे लघु खगोलीय पिंड होते हैं जो मंगल तथा बृहस्पति ग्रहों की कक्षाओं में सूर्य के चारों तरफ परिक्रमा करते पाए जाते हैं। प्रत्येक क्षुद्रग्रह की अपनी निश्चित कक्षा होती है। इन सबकी विशाल कक्षाएँ एक वृहद् वलय की रचना करती हैं। क्षुद्रग्रह का आकार एक किलोमीटर से कई किलोमीटर तक पाया जाता है। **(घ)** छात्र स्वयं करें। **(च)** 1. (ग) 2. (घ) 3. (च) 4. (ङ) 5. (छ) 6. (ख) 7. (क)। **(ग)** 1. कृत्रिम उपग्रह – ऐसे लघु खगोलीय पिंड जो विशाल खगोलीय पिंडो के चारों ओर परिक्रमा करते हैं, प्राकृतिक उपग्रह कहलाते हैं। 2.अमावस्या – जब चंद्रमा, सूर्य तथा पृथ्वी के बीच में स्थित होता है तो चन्द्रमा से परावर्तित होने वाला प्रकाश पृथ्वी पर नहीं पहुँच पाता है, इसे अमावस्या के रूप में जाना जाता है। 3. पूर्णिमा – जब पृथ्वी, सूर्य तथा चंद्रमा के दिन की तरफ के हिस्से की तरफ होती है, उसे पूर्णिमा कहते हैं। 4. नक्षत्र – तारों का ऐसा समूह जो किसी विशेष आकृति अथवा प्रतिरूप की रचना करता है, नक्षत्र कहलाता है। 5. ओरियन – ओरियन एक घुटने टिकाए हुए शिकारी की तरह दिखाई देता हैं। इसके तीन मध्य में स्थित तारे बैल्ट, ऊपर तथा नीचे के दो-दो तारे क्रमश: कंधों तथा टाँगों का प्रतिनिधित्व करते हैं। यह शीत ऋतु के दौरान आकाश के उत्तरी भाग में दिखाई देता है। **(ङ)** 1. तारों 2. 13,9,000 3. हाइड्रोजन 4. चन्द्रमा 5. उल्का 5. निकटतम 7. नक्षत्र। **(ज)** 1. सत्य 2. सत्य 3. असत्य 4. सत्य 5. असत्य 6. असत्य 7. असत्य। **(घ)** छात्र स्वयं करें। **क्रियाकलाप –** छात्र स्वयं करें।

अध्याय- 16 भूकंप

(क) 1. विज्ञान की वह शाखा जिसके तहत भूकंप का अध्ययन किया जाता है, भूकंप विज्ञान कहलाती है। 2. भूकंप की तीव्रता को मापने के लिए प्रयुक्त होने वाले उपकरण को भूकंप मापी अथवा भूकंप सूचक कहते हैं। 3. ज्वालामुखी भूकंप गैसों के विस्फोट से उत्पन्न होते हैं।4.

अनेक तरह की मानवीय गतिविधियाँ भी भूकंप की उत्पत्ति का कारण बनती हैं। जैसे – खनिजों का निष्कार्षण, गहरी भूमिगत खदानें खोदना, शैलों में विस्फोट करके तोड़ना ताकि सड़कें, बाँध तथा जलाशय बनाये जा सकें, नाभिकीय विस्फोट आदि। 5. ऐसे भूकंपों के मूल 50 किमी. की गहराई पर स्थित होते हैं, सामान्य भूकंप कहलाते हैं। **हॉट प्रश्न –** 1. मई 2015 में नेपाल में आने वाले भूकंप की तीव्रता 8 थी। 2. 8 की तीव्रता वाला भूकंप सर्वाधिक विनाशकारी भूकंप माना जाता है। **(ख)** 1. पृथ्वी के किसी विशेष भाग में आकस्मिक रूप से हल्का अथवा तीव्र कंपन उत्पन्न होना ही, भूकंप कहलाता है। भूकंप की उत्पत्ति के निम्नलिखित कारण हैं :– ज्वालामुखी विस्फोट – भूकंप की उत्पत्ति का एक प्रमुख कारण ज्वालामुखी विस्फोट होता है। ज्वालामुखी भूकंप सामान्यत: उथले उद्गम वाले होते हैं तथा उनसे विक्षोपित क्षेत्र अपेक्षाकृत छोटा होता है। मोड़ तथा भ्रंश – ऐसे किसी शैलीय विभंजन जिसके दौरान गंभीर रूप से विस्थापन होता है। भ्रंश के रूप में जाना जाता है। जब पृथ्वी की गति भ्रंश नामक रेखा पर घटित होती है तो भंकूप की उत्पत्ति होती है। भ्रंश किसी भी आयु वर्ग की शैलों में उत्पन्न हो सकता हैं, किंतु उत्पन्न होने वाली गति कम ही होती है। प्लेट विवर्तनिक – यह माना जाता है कि पृथ्वी का स्थल मंडल कई टुकड़ों में बँटा हुआ है, जिनकी चौड़ाई कई हज़ारों मील तक पायी जाती है। ये प्लेटें एक-दूसरी के साथ अत्यंत धीमी गति में चलना करती रहती हैं। प्लेटों के मध्य गुरुत्वाकर्षण बल तथा पृथ्वी के अल्प मात्रा में कठोर अभ्यतांर में स्थित ऊष्मीय विद्युत संवहन को उसके नीचे स्थित प्लेटों की हल-चल का कारण माना जाता है। 2. भूकंप की तीव्रता को रिक्टर पैमाने पर मापा जाता है। यह पैमाना भूकंप मापी यंत्र अथवा भूकंप कहलाता है, जिससे 0.0001 मिमी. जैसी सूक्ष्म गति को भी मापा जा सकता है। रिक्टर पैमाना एक लघुगणक पैमाना है। इसकी 1 इकाई में वृद्धि दस गुणा वृद्धि का प्रतिनिधित्व करती है। तात्पर्य यह है कि 6 भूकंप मापन 5 की तुलना में दस गुणा अधिक शक्तिशाली होगा। साधारणत: रिक्टर पैमाने पर 5 को मंद या अल्पबल वाला भूकंप माना जाता है। 6 की तीव्रता वाला भूकंप गंभीर, 7 की तीव्रता वाला अति गंभीर तथा 8 की तीव्रता वाला भूकंप विनाशकारी भूकंप माना जाता है। 3. भूकंप के परिणाम – भूकंप की तरंगें पृथ्वी के धरातल पर गंभीर विनाश का कारण बनती हैं। इसके आघात से भवन, रेलमार्ग, सड़कें, पुल आदि ध्वस्त हो जाते हैं। कभी-कभी भूकंप पर्वतीय क्षेत्रों में भूस्खलन का कारण बनता है। भूकंप के दौरान आग लगने की संभावना बनी रहती है, क्योंकि भूकंप ज्वलनशील पदार्थों के रसोईघर में जलने वाली आग या क्षतिग्रस्त गैस लाइन में गिराने का कारण बन सकता है। भूकंप की वजह से ध्वस्त होने वाले भवनों, सड़कों आदि के मलबे में दबने से अनके लोगों की जान चली जाती है। कभी-कभी भूकंप की वजह से बाँध गंभीर रूप से क्षतिग्रस्त हो जाते हैं तथा आस-पास के क्षेत्रों में भयंकर बाढ़ की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। 4. भूकंप की मूल गहराई के आधार पर भूकंप निम्न प्रकार के होते हैं :- सामान्य भूकंप – ऐसे भूकंपों में मूल भूकंप 50 किमी. की गहराई पर स्थित होता है। मध्यवर्ती भूकंप – ऐसे भूकंपों में उत्पत्ति केंद्र की गहराई 50 से 250 किमी. तक होती है। गहरे अथवा पातालीय भूकंप – इनके केंद्र की गहराई धरातल के नीचे 250 से 700 किमी. के बीच पायी जाती है। 5. भूकंप के दौरान हमें निम्न सावधानियाँ रखनी चाहिए। भूकंप के दौरान व्यक्ति को अत्यधिक आंतकित नहीं होना चाहिए बल्कि उसे पूर्ण धैर्य से काम लेना चाहिए। ऐसे लोग जो भूकंप के दौरान घरों से बाहर उपस्थित हो, उन्हें खुले स्थानों पर शरण ले लेनी चाहिए। उन्हें वृक्षों, बिजली के खंभों तथा तारों से दूर हट जाना चाहिए। जो लोग भूकंप की स्थिति में घरों तथा भवनों के अंदर उपस्थित हों, उन्हें बाहर की तरफ नहीं भागना चाहिए। उन्हें मेज अथवा पलंग के नीचे शरण लेनी चाहिए। **(ग)** 1. भूकंप का उद्गम – वह बिंदु जहाँ एकाएक शैलों के बीच खिसकाव उत्पन्न होता है। वह बिंदु, भूकंप का उद्गम कहलाता है। 2. भूकंप का अधिकेंद्र – जहाँ प्रघात तरंगें धरातल पर पहुँचती हैं भूकंप का अधिकेंद्र कहलाती हैं। 3. भूकंप की तरंगें – भूकंप केंद्र वह बिंदु होता है। जहाँ से प्रघाती तंरगें उत्पन्न होती हैं। आकस्मिक शैलीय भ्रंश के कारण उत्पन्न तरंगें भूकंप की तरंगें कहलाती हैं। 4. मध्यवर्ती भूकंप – ऐसे भूकंपों में उत्पत्ति केंद्र की गहराई 50 से 250 किमी. तक होती है। 5. पातालीय भूकंप – इनके केंद्र की गहराई धरातल के नीचे 250 से 700 किमी. के बीच पायी जाती है। **(ङ)** 1. भूकंप मापी 2. आग 3. सामान्य भूकंप 4. तरंगें 5. प्रशांत महासागर। **क्रियाकलाप –** छात्र स्वयं करें।

अध्याय- 17 प्राकृतिक संसाधन

(क) 1. वन एक प्राकृतिक पारिस्थितिक तंत्र होता है जिसमें विविध प्रजातियों के पेड़-पौधे पाए जाते हैं। 2. वनों से हमें इमारती लकड़ी, गोंद, रेशे, बाँस, कागज आदि प्राप्त होते हैं। 3. वनों की अंधाधुंध कटाई के कारण भूमिगत जल स्तर निरंतर गिरावट का शिकार बन रहा है। 4. वृक्षों अथवा पौधों को उगाने के लिए मृदा का होना अनिवार्य है। सभी जंतु प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से अपना भोजन मृदा से ही प्राप्त करते हैं। 5. वन्य भूमियों अथवा खेती में पशुओं के चराने पर प्रतिबंध लगाना चाहिए, क्योंकि पशु नन्हें पौधों अथवा घास को अपने पैरों के नीचे रौंद देते हैं जिससे उनमें उपस्थित मिट्टी शिथिल पड़ जाती है तथा प्रवाहित जल एवं वायु उसे सरलता से अपरदित कर देते हैं। 6. ईंधन, जो पृथ्वी के धरातल की गहराईयों में पौधों एवं जंतुओं के जीवाशेषों के जीवाश्मीकृत अथवा अपघटित द्वारा बनता है। जीवाश्म ईंधन कहलाता है। 7. भारत में कोयले के सर्वाधिक भंडार झारखंड राज्य में स्थित हैं। यहाँ निक्षेपित कोयला भंडार लगभग 71.14 अरब टन है। 8. स्नेहक तेल के वाष्प 4250° से. के बीच ठंडे हो पाते हैं। 9. सूर्य ऊर्जा का प्राकृतिक स्रोत है। यह एक नवीकरण तथा असमाप्य ऊर्जा स्रोत है। 10. नेप्था तथा पेट्रोलियम ईंधन का प्रयोग औद्योगिक विलयन के रूप में शुष्क धुलाई के लिए करते हैं। **हॉट प्रश्न –** 1. बायोगैस इकाई में पशुओं की गोबर तथा मानव मल-मूत्र को ही कच्चे के रुप में प्रयोग किया जाता है इससे बनने वाली गैस बायोगैस कहलाती है। 2. पेट्रोलियम मोम का उपयोग संवेष्टन के लिए किया जाता है तथा मोमबत्तियाँ भी बनाई जाती है। **(ख)** 1. प्राकृतिक संसाधन ऐसी कोई भी वस्तु हो सकती है जो किसी जीवधारी अथवा जीव के समूह के लिए उपयोगी होती है तथा प्रकृति प्रदत्त वस्तु होती है। मनुष्य के संदर्भ में हम प्राकृतिक संसाधन ऐसी वस्तुओं को कह सकते हैं जो हमारे प्राकृतिक पर्यावरण का कोई भाग जैसे भूमि, जल वायु, खनिज आदि तथा उनका मनुष्य अपनी सुविधानुसार उपयोग कर सकता हो। 2. वन एक प्राकृतिक पारिस्थितिक तंत्र होता है जिसमें विविध प्रजातियों के पेड़-पौधे पाए जाते हैं। एक महत्त्वपूर्ण प्राकृतिक संसाधन के रूप मे वन हमें इमारती लकड़ी, गोंद, रेजिन, रेशे, शहद, लाख, कागज आदि उपयोगी वस्तुएँ उपलब्ध कराते हैं। वनमृदा संरक्षण, सूखे तथा बाढ़ों के हानिकारण प्रभावों से हमारी रक्षा करते हैं। वन वर्षा लाने में सहायक होते हैं। वन ऑक्सीजन की मात्रा में वृद्धि करने वाला एक प्रमुख प्राकृतिक स्रोत है। वन, वन्य जंतुओं को वास स्थल उपलब्ध कराते हैं। 3. वननाशन के प्रमुख परिणाम निम्नलिखित हो सकते हैं – वनों की अंधाधुंध कटाई के फलस्वरूप मृदा अपरदन की समस्या ने गंभीर रूप ले लिया है। प्रवाहित

जल तथा वायु मिट्टी की ऊपरी उपजाऊ परत को सरलता से बहा अथवा उड़ा ले जाते हैं। वर्षा ऋतु में अनिश्चितता आ गई है तथा वर्षा के अभाव के फलस्वरूप विविध क्षेत्रों में पेयजल की कमी उत्पन्न हो गई है। भूमिगत जल स्तर निरंतर गिरावट का शिकार बन रहा है। फलत: पेयजल एवं सिंचाई के लिए जल उपलब्ध कराना एक गंभीर समस्या है। वन्य जंतुओं के वास हेतु उपलब्ध क्षेत्र में कमी आ गई अर्थात् उनके वास-स्थलों का विनाश हो गया है। फलत: वन्य जीव प्रजातियाँ विलुप्तता के कगार पर पहुँच गई हैं। 4. वनों के संरक्षण के उपाए :- वनों की कटाई को पूर्णत: बंद नहीं किया जा सकता क्योंकि विविध प्रयोजनों के लिए लकड़ी की जरूरत पड़ती है। अत: वन विभाग द्वारा वनों को चिह्नित किया जाना चाहिए, जिससे कि मृत या वृद्ध वृक्षों की ही कटाई की जा सके। वनों में होने वाली पशुओं की चराई को पूर्ण रूप से नियंत्रित कर देना चाहिए। कागज को बनाने के लिए बड़े पैमाने पर वृक्षों को काटा जाता है। अत: वननाशन को नियंत्रित करने के लिए कागज को नियोजित ढंग से प्रयोग करने की प्रथम आवश्यकता है। वनों में तथा वनों के आस-पास रहने वाले लोगों को सजग करना चाहिए कि वे वनों में जलती आग तथा बीड़ी या सीगरेट के टुकड़े इधर-उधर न फेंके क्योंकि उनकी इस तरह की लापरवाही से आग लग सकती है। सरकारी तथा गैर सरकारी संस्थाओं द्वारा लोगों को वनों के संरक्षण के प्रति जागरूक किया जाना चाहिए। 5. मृदा अपरदन के दो कारण हैं :– प्राकृतिक कारण – ऊष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में भारी वर्षा के कारण जल का प्रवाह उत्पन्न होता है जो अनावृत मृदा को सरलता से अपने साथ बहा ले जाता है। इसी तरह शुष्क क्षेत्रों में प्रवाहित वायु, प्रचंड वेग से बहने वाली वायु या आँधियाँ उपजाऊ मृदा को उड़ा कर ले जाती हैं। मानव निर्मित कारक – मानव द्वारा तीव्रगति से वनों का सफाया किया जाता है। मानव की यह गतिविधि भंयकर बाढ़ों तथा प्रचंड तूफानों का कारण बनती है। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि वन वर्षा के जल को धारण करने की क्षमता रखते हैं तथा वन प्रचंड पवनों के मार्ग में अवरोधक का कार्य करते हैं। मृदा संरक्षण हेतु निम्न उपाए किये जाने चाहिए:- भारत में कोयले के सर्वाधिक भंडार झारखंड राज्य में स्थित हैं। यहाँ निक्षेपित कोयला भंडार लगभग 71.14 अरब टन है। अधिक से अधिक मात्रा में वन रोपण किया जाना चाहिए। पहाड़ी ढ़लानों पर मृदा अपरदन को नियंत्रित करने का सर्वाधिक प्रभावी उपाय है। खेतों में जल के निकास एवं सिंचाई की उपयुक्त व्यवस्था की जानी चाहिए। इससे भी मृदा संरक्षण में सहायता मिलती है। मृदा अपरदन की रोकथाम के लिए नदियों पर तटबंधों का निर्माण किया जाना चाहिए। ताकि जल का प्रवाह प्रचंड रूप धारण न कर सके। 6. कोयले का उपयोग ताप विद्युत घरों में प्रमुख ईंधन के रूप में किया जाता है तथा यह समस्त विश्व में वाणिज्यिक ऊर्जा का प्रधान स्रोत है। इसका प्रयोग कोक, कोयला गैस तथा कृत्रिम पेट्रोलियम बनाने के लिए किया जाता है। **(ङ)** 1. वन 2. भूमिगत 3. मृदा 4. मिट्टी 5. पेट्रोलियम, 6.कच्चा तेल 7. शोर 8. बायो। **(ग)** छात्र स्वयं करें। **क्रियाकलाप** – छात्र स्वयं करें।

अध्याय- 18 वायु तथा जल प्रदूषण

(क) 1. ऐसे पदार्थ अथवा तत्व जो प्रदूषण का कारण बनते हैं, प्रदूषण कहलाते हैं। 2. वायु की भौतिक, रासायनिक एवं जैविक विशेषताओं में होने वाला ऐसा कोई भी अवांछित परिवर्तन जिसके कारण वायु द्वारा जीवों पर अस्वास्थ्यकर प्रभाव अंकित होते हैं, वायु प्रदूषण कहलाता है। 3. ऐसे हानिकारक तत्त्व जो वायु प्रदूषित करते हैं, वायु प्रदूषक कहलाते हैं। 4. महीन ठोस कण, जैसे कि कार्बन के बिना जले कण जो ईंधन के दहन के समय मुक्त होते हैं तथा वायुमंडल में पहुँचते हैं, निलंबित विविक्त कण कहलाते हैं। 5. जब जल में विविध प्रकार की अशुद्धियाँ अथवा अवांछित तत्त्व मिल जाते हैं तो उसे जल प्रदूषण कहते हैं। **हॉट प्रश्न –** 1. संपीडित प्राकृतिक गैस वाहनों में प्रदूषण रहित ईंधन के रूप में प्रयुक्त होती है। 2. हैजा व पीलिया नामक बीमारियों का मुख्य कारण जल प्रदूषण है। **(ख)** 1. वायु प्रदूषण के प्रमुख कारक हैं – कार्बन डाइऑक्साइड – कार्बन डाइऑक्साइड गैस की उत्पत्ति घरों, कारखानों तथा वाहनों आदि में जलने वाले ईंधन से होती है। इसकी अत्यधिक मात्रा में उपस्थिति वायु प्रदूषण का कारण बनती है। नाइट्रोजन डाइआक्साइड – यह एक विषैली गैस है। यह फेफड़ों के लिए गंभीर रूप से हानिकारक है। यह वायु में उपस्थित जलवाष्प से अभिक्रिया पर नाइट्रिक अम्ल की रचना करती है। जो अम्लीय वर्षा का कारण बनती है। सल्फर डाइऑक्साइड – सल्फर कोयले में उसकी अशुद्धि के रूप में निहित पाया जाता है। कोयले के जलने पर यह मुक्त होती है। यह एक विषैली गैस है तथा ऑक्सीजन के साथ अभिक्रिया करती है जिससे सल्फर डिऑक्साइड की रचना होती है। महीन ठोस कण, जैसे कि कार्बन के बिना जले कण जो ईंधन के दहन के समय मुक्त होते हैं तथा वायुमंडल में पहुँचते हैं, निलंबित विविक्त कण कहलाते हैं। वायुप्रदूषण के नियंत्रण के उपाए – वनरोपण अथवा अधिकाधिक संख्या में वृक्ष उगाना वायु प्रदूषण को नियंत्रित करने का प्रभावी उपाय है क्योंकि वृक्ष कार्बन डाइऑक्सइड का अवशोषण करते हैं तथा ऑक्सीजन गैस को मुक्त करते हैं। उद्योगों को घनी आबादी वाले क्षेत्रों से दूर स्थापित किया जाना चाहिए तथा उद्योगों के आस पास अधिक मात्रा में पौधों को उगाया जाना चाहिए। वाहनों में प्रदूषण रहित ईंधनों अथवा धुएँ रहित गैसों का इस्तेमाल किया जाना चाहिए। उद्योगों अथवा कारखानों में स्थापित चिमनियों में फिल्टर लगाए जाने चाहिए ताकि वायुमंडल में खतरनाक वायु प्रदूषक मुक्त न हो सकें। 2. जब बादलों से जल वर्षा के रूप में भूमि पर गिरता है तो यह अम्ल वर्षा के जल में घुल कर पृथ्वी धरातल पर पहुँच जाता है। इसे ही अम्लीय वर्षा के रूप में जाना जाता है। जब सल्फर डाइऑक्साइड तथा नाइट्रोजन ऑक्साइड वायु में उपस्थित जल वाष्प से अभिक्रिया करते हैं तब सल्फ्युरिक अम्ल तथा नाइट्रिक अम्ल की रचना करते हैं जो अम्लीय वर्षा का कारण बनते हैं। 3. जलप्रदूषण के कारण हैं – घरेलू अपशिष्ट – घरों से विविध अपशिष्ट उत्पन्न होते हैं। जैसे :- मानवीय मल-मूत्र, भोजनावशेष आदि। इस अपशिष्ट को सामान्यत: आस पास उपस्थित जलराशियों, जैसे नदियों आदि में फेंक दिया जाता है। इस अपशिष्ट में विविध प्रकार के हानिकारक सूक्ष्मजीव उपस्थित पाए जाते हैं जो इन जल राशियों के जल में मिलकर उसे प्रदूषित करते हैं। कृषि अपशिष्ट – हमारे देश में कृषि क्षेत्र में विविध प्रकार के रासायनिक खादों, कीटनाशकों का प्रचुर मात्रा में प्रयोग किया जाता है। इस तरह के रसायन मिट्टी में बने रहते हैं तथा वर्षा ऋतु में वर्षा के जल के साथ खेतों से बहकर नदियों आदि में प्रवेश कर जाते हैं। इस तरह इन विषैले रसायनों का प्रभाव जल में निहित जंतुओं पर गंभीर रूप से पड़ता है। 4. हमें अपनी विविध प्रकार की घरेलू गतिविधियों अथवा कार्यों में जल की कम मात्रा का प्रयोग करना चाहिए। इसके अतिरिक्त जल को व्यर्थ नहीं करना चाहिए। शहरों से उत्पन्न मल-जल को उपचारित करके ही नदियों आदि में बहाना चाहिए। उद्योगों से उत्पन्न विषैली प्रकृति वाले रासायनिक अपशिष्ट को उचित ढंग से निपटाना चाहिए, न कि प्रत्यक्षत: जल राशियों में बहाना चाहिए। **(ङ)** 1. भूमंडलीय 2. नाइट्रोजन ऑक्साइड, सल्फर ऑक्साइड 3. सी. एन. जी. 4. गुणवत्ता। **(ङ)** छात्र स्वयं करें। **क्रियाकलाप** – छात्र स्वयं करें।